ओ३म

आत्मा का भोजन

ईश्वर की सृष्टि के अद्‌भुत व्याख्याता पूज्यपाद गुरूदेव श्रृंगी मुनि कष्णदत जी महाराज द्वारा विषेश योग समाधि मे,देवयान की आत्माओ को सम्बोधित प्रवचनो का संकलन

पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्मर्षि कृष्ण दत्त जी महाराज

प्रकाशक :

वैदिक अनुसन्धान समिति (रजि.)

अन्तरजाल सम्पादक : श्री सुकेश त्यागी – अवैतनिक

अन्तरजाल विशेष सहयोग : डा0सतीश शर्मा (अमेरिका) – अवैतनिक

अन्तरजाल पुस्तक संस्करण : प्रथम प्रेषण

सृष्टि सम्वत् : 1,96,08,53,111

विक्रम सम्वत् : कार्तिक कृष्ण पक्ष चतुर्थी,2067

गुरुदेव का जीवन

14 सितम्बर 1942,उतर प्रदेश के गाजियाबाद जिले के ,गग्रम खुर्रमपुर सलेमाबाद मे एक बालक का जन्म हुआ ।

बालक जन्म से ही एक विलक्षण से युक्त था और विलक्षणता यह कि जब भी वह बालक सीधा, शवासन की मुद्रा मे, कुछ अन्तराल लेटजाता या लिटा दिया जाता तो उसकी गर्दन दायें बायें हिलने लगती , कुछ मन्त्रोच्चारण और उसके बाद पुरातन संस्कृति पर आधारित 45 मिनट के लगभग एक दिव्य प्रवचन होता । बाल्यावस्था होने के कारण, प्रारम्भ मे आवाज अस्पष्ट होती और जैसे आयु बढने लगी वेसे ही आवाज और विषय दानो स्पष्ट होने लगे । पर एक अपठित बालक के मुख से ऐसे दिव्य प्रवचन सुनकर जनमानस आश्चर्य करने लगा , इस बालक की ऐसी दिव्य अवस्था और प्रवचनो की गूढता के विशय मे कोई भी कुछ कहने की स्थिति मे नही था । प्रवचन सुनकर जनमानस आश्चर्य करने लगा , इस बालक की एंसी दिव्य अवस्था और प्रवचनो की गूढता के विषय मे कोई भी कुछ कहने की स्थिति मे नही था ।

इस स्थिति का स्पष्टीकरण भी दिव्यात्मा के प्रवचनो से ही हुआ । कि यह सृष्टि के आदिकाल से ही विभिन्न कालो मे श्रृंगी ऋषि की उपाधि से विभूशित और सतयुग के काल मे आदि ब्रह्म के शाप के कारण इस युग मे जन्म का कारण बनी । गुरुदेव इस जन्म मे भले ही अपठित रहे,लेकिन शवासन की मुद्रा मे आते ही इनका पूर्वजन्मित ज्ञान,उदबुद्ध हो जाता और अन्तरिक्ष–स्थ आत्माओ का दिव्य उद्‌बोधन ,प्रवचन करते और शरीर की स्थिति यहॉं होने के कारण हम सबको भी इनकी दिव्य वाणी सुनाई देती । इन पंवचनो मे ईश्वरीय की सृष्टि का अद्‌भुत रहस्य समाया हुआ है , ब्रह्माण्ड की विशालता , सृष्टि का उद्‌देष्य,विभिन्न कालो का आंखो देखा वर्णन भगवान राम और भगवान कृष्ण के जीवन की दिव्यता का दर्शन क्या कुछ दिव्य न हीं है इन प्रवचनो मे ये किसी भी मनुष्य का,समाज का और राष्ट्र का मार्ग दर्शन करने का सामर्थ्य रखते है ।

20 वर्ष की अवस्था तक ये प्रवचन ऐसे ही जनमानस को आश्चर्य और मार्गदर्शन करते रहे ।

दिल्ली के कुछ प्रबुद्ध महानुभवो ने प्रवचनो की इस निधि को शब्द ध्वनि लेखन उपकरण के द्वारा संग्रहित करके ,पुस्तक रूप मे प्रकाशित करने का निश्चय किया, जिसके लिए वैदिक अनुसन्धान समिति नामक संस्था का गठन किया । जिसके अर्न्तगत सन् 1962 से प्रवचनो को संग्रहति और प्रकाशन प्रारम्भ हुआ । इस दिव्यात्मा ने पूर्व निर्धारित 50 वर्ष के जीवन को भोगकर सन् 1992 मे महाप्रयाण किया ।

इस अन्तराल इनके 1500 प्रवचन, शब्द ध्वनि लेखित यन्त्र के द्वारा ग्रहण किये गये । जिनको धीरे–धीरे प्रकाशित किया जा रहा है।वैदिक जीवन और वैदिक संस्कृति का जो स्वरूप इनमे समाया हुआ है । उसके सम्वर्धन , संरक्षण और प्रसारण के लिए हर वैदिक धर्मी के सहयोग की अपेक्षा है । जिससे वसुधैव कुटुम्बकम की संस्कृति से निहित यह महान ज्ञान जनमानस मे प्रसारित हो सके।

वैदिक अनुसन्धान समिति (रजि.)

विषय सूची	पृष्ठ संख्या

विषय सूची **पृष्ठ संख्या**

विषय सूची **पृष्ठ संख्या**

आत्मा का भोजन

राष्ट्र की उन्नति का आधार–दिनांक–07.05.73

जीते रहो,

देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भाँति, कुछ मनोहर वेदमंत्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मंत्रों का पठन पाठन किया, हमारे यहाँ परम्परागतों से ही उस, मनोहर वेद–वाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा का आभामयी जगत माना गया है। जब हम अपने में ये दृष्टिपात् करते हैं, कि वह जो मेरा प्यारा प्रभु है, उसका ही ये जगत एक आभा से युक्त बनकर के रहता है। क्योंकि उसी की आभा हमें दृष्टिपात् आती है। मेरे प्यारे महानन्द जी ने बहुत पुरातन काल में नाना वार्ताएं प्रकट कीं। आज मैं उन विचारों को तो व्यक्त नहीं कर पाऊँगा, परंतु आज मैं कुछ यज्ञ के संबंध में–यज्ञ के संबंध में तो नित्य प्रति ही उच्चारण किया जाता है। हमारे यहाँ यज्ञ रूप, ये जगत है। आज हम जब यज्ञ कर्म करने के लिये तत्पर होते हैं तो उसके साथ में हमारी मनोनीत भावना होती है, मनोनीत एक विचार होता है। और वह जो संकलन मानव को उत्पन्न होता है उसी संकलन के साथ में मानव की आत्मिक जो प्रतिभा है, वह विचारों के साथ में निहित रहती है। जिन विचारों का बाह्य जगत बनता है, उन विचारों के बाह्य जगत से हम संसार की सुंदर क्रियाओं में परिणत होते हैं।

सृष्टि का मूल

मानो ये जो क्रिया है, वही हमारा कर्मकांड है। वही उस परमात्मा की एक आभा है, जिसको हमें प्रायः विचारना है। जहाँ मैं ये कहा करता हूँ कि यज्ञ हमारे यहाँ देव पूजा मानी जाती है–देव पूजा का अभिप्रायः देवों को जो हम हवि प्रदान कर रहे हैं। देवताओं को जो हम महत्व देते हैं, तो उस हवि से हमारा अंतरात्मा प्रसन्न होता है। क्योंकि हमारा जो ये जीवन है, ये देवताओं से सम्बन्धित है। अथवा देवताओं से हम प्रेरणा अथवा सहायता प्राप्त करते हैं और वे देवता जितने भी प्रसन्न होते हैं, जितने भी तृप्त रहते हैं, उतना ही हमारा हृदय, हमारी मानवता नम्र बनकर के देवताओं की पूजा में संलग्न होते हैं, परंतु यहाँ प्रत्येक मानव के नाना प्रकार के विचार रहते हैं।

मैं तो परंपरागतों से ये ही उच्चारण करता चला आया हूँ कि हम देवताओं की पूजा करें। देवता हमें उस मार्ग पर ले जाते हैं, जिस मार्ग पर जाने के पश्चात् मानव की आंतरिक ध्वनि पवित्र होती है। मेरे प्यारे ऋषिवर! हम जब आत्मा के संबंध में अथवा देवताओं के संबंध में विचार करने लगे, कि हमारा जो मानव शरीर है, इस मानव शरीर में देवता कार्य कर रहे हैं। मानव अग्नि से प्रकाश पाता है। किस से अमृत को पान करता है, वायु से क्रिया का अस्वात होता है। अग्नि से तेज प्राप्त होता है। पृथ्वी से मुनिवरो! देखो, हमें सुगंध प्राप्त होती है। अन्तरिक्ष से मुनिवरों! देखो, हमें भरणता की, अवकाश–कृति प्राप्त होती है। तो हमें इन सब वाक्यों पर विचार–विनिमय करना है कि याग से हम पंच महाभौतिक जो जगत है, इस पंच महाभूतों को श्रेष्ठ बनाना चाहते हैं। और ये पंचमहाभूत ही सृष्टि का मूल कारण है, ये ही मानव के शरीर की रचना का मूल कारण है। मेरे प्यारे! इसीलिए हमारे यहाँ ये सर्वत्र जगत एक प्रकार का यज्ञमयी माना गया है और इस यज्ञ को ही हमारे यहाँ, देवपूजा कहते हैं, देवताओं को तृप्त करना है।

आध्यात्मिकता के लिए याग

अब हमारे देवता कौन हैं? बेटा! जो बुद्धिमान, बह्मवेत्ता और जड़वत हैं, जड़ से हमें नाना प्रकार की वस्तुएँ प्राप्त होती हैं। तो हम जब एक, एक वस्तु पर अपना विचार विनिमय करते हैं तो हमें प्रायः ऐसा प्रतीत होने लगता है, ऐसा अनुभव होने लगता है कि वास्तव में हम परमपिता परमात्मा की आभा में युक्त हैं। परमात्मा की ही प्रतिभा में हम अपने को दृष्टिपात् करे, उसी में हमारा जीवन, उसी में हमारा याग है। मैंने कई काल में प्रकट करते हुए कहा कि–''संसार में नाना प्रकार के याग होते हैं परंतु उन यागों में भिन्न–भिन्न प्रकार की प्रक्रियाएं होती हैं।''

आज मैं अधिक चर्चा नहीं करूंगा, क्योंकि मेरे प्यारे महानंद जी अपना कुछ विचार व्यक्त करेंगे। जैसा इससे पूर्व शब्दों में हम उच्चारण कर आए हैं। केवल आज का विचार तो हमारा ये है, कि हम संसार में याज्ञिक कर्म करने वाले बने, क्योंकि देवपूजा से हम आध्यात्मिक मार्ग को प्राप्त कर सकते हैं। परंतु जैसे हम बाह्य जगत को रचाते हैं, यजमान होता है, होता–जन होते हैं, अध्वर्यु होता है, उद्गाता होता है, मानो ब्रह्मा होता है। ये यज्ञ का एक स्वरूप बन जाता है। इसी प्रकार जब हम आध्यात्मिक याग करते हैं, आध्यात्मिक बेला में जाते हैं, आध्यात्मिकता को जागरूक करना चाहते हैं तो उस समय हमें होता भी चुनने होंगे, हमें अध्वर्यु, उदगाता भी हमारे समीप होने चाहिए। मुनिवरो! देखो, हम प्रत्येक अंग को अपना अध्वर्यु और अपना यजमान स्वीकार करते रहे और जब हम इस प्रकार की प्रतिभा में रमण करते हैं, तो बेटा! हमें ये प्रतीत होता है कि वास्तव में जितना भी शुभकर्म कर रहे हैं वो सर्वत्र याग कहलाया गया है। उस याग में हमें वास्तव में परिणत होना है। याग का अभिप्राय ''यागोऽपि यदृत प्रवाहरुत्तम्,'' कि ये संसार रूप जो जगत है इसमें एक प्रकार का याग हो रहा है और ये याग होता हुआ, उसी याग में मानो परिणत है, उसी से ये कटिबद्ध है। इसीलिए अपने जीवन को, याग में सहकारिता, परिणत करते हुए मानो एक सुंदर याग के हम पथिक बने, हम अपने जीवन को आभा से युक्त बनाए। आज का विचार अब मैं समाप्त कर रहा हूँ अब मेरे प्यारे महानन्द जी कुछ अपना वाक् प्रकट करें–

पूज्य महानन्द जीः–ओ३म् यज्ञाः रथं मनो वाचन्नमाः वस्तकृते। विप्रजा यजूँ गायन्तताः मनो।।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मेरे भद्र–ऋषि मंडल! और ऋषि–समाज! मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने, याग की चर्चा प्रकट करते हुए मुझे भी कुछ समय प्रदान किया, कि तुम भी कोई वाक् प्रकट करो। परंतु आज मैं उपस्थित हूँ, उद्यत हूँ और अपने विचारों को कुछ सूक्ष्मता से प्रकट करूंगे। क्योंकि मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी–अभी याग के संबंध में नाना प्रकार की वार्ता प्रकट कर रहे थे। आज मुझे उन यागों के संबंध में तो विशेष चर्चा प्रगट नहीं करनी है। विचार विनिमय में ये है कि आज हम याज्ञिक बनते चले जाएँ, जैसा पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी अभी प्रगट करते हुए कहा कि हम याग को क्रिया में लाने का प्रयास करें। परंतु याग की मीमांसा करते हुए, उन्होंने ऐसा कहा है कि ये जो याग है यह यजमान के द्वारा होता है। परंतु याग का अभिप्राय तो यही, कि जितना भी शुभ और महान कार्य है, उस सर्वत्र का नाम, एक प्रकार का याग माना है। परंतु पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी नाना वार्ताएँ और नाना विचार देते हुए ऐसा कहा है कि सर्वत्र जितने प्राणी मात्र हैं, वे सब यहाँ याग करने के लिए आ पहुँचे हैं। संसार में जितना भी ये जगत है, समाज है, इसमें सर्वत्र एक प्रकार का याग हो रहा है।

कुवृत्तियों से याग की समाप्ति

पुरातन काल में मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव को निर्णय कराते हुए कहा, 'वास्तव में गुरुदेव तो सर्वत्र जानते हैं,' पुरातन काल में प्रत्येक मानव का जीवन एक प्रकार का याग बनकर के रहता था। याग का अभिप्रायः ये है कि हम संसार की उन कामनाओं में परिणत न हो जाएँ, इस संसार के, उन आवेशों में रमण न कर जाएँ, हमारा आत्मबल नष्ट, भ्रष्ट न होता रहे। परंतु मैंने पुरातन काल में कहा था कि ''मेरी प्यारी माताओं के प्रत्येक अंग को हमारे यहाँ यागरूप माना है। ऋषि कहता है–कि संसार में माता का जीवन, उनका प्रत्येक अंग, याग रूप रहता है, याग करते रहते हैं। परंतु देखो, उनसे जब हम कुवृत्तियों को धारण कर लेते हैं तो उससे हमारी याग की प्रथा समाप्त हो जाती है। परम्परा समाप्त हो जाती है। नाना प्रकार की रूढ़ियों में, आवरणों में, ये मानव समाज ऐसा कटिबद्ध हो गया है कि वे रूढ़ियाँ इस धर्म और माता को याग रूप स्वीकार नहीं करने देते, मुझे स्मरण आता रहता है संसार के उन आचार्यों की चर्चा, जिन्होंने देखो, धर्म को प्रचलित किया। धर्म को प्रवाह रूप देने का प्रयास किया।

सुयोग्य संतान

परंतु आज का विचार, केवल मैं धर्म की मीमांसा करने नहीं जा रहा हूँ। मैं ये उच्चारण करने जा रहा हूँ कि माताओं के यज्ञ स्वरूप को नष्ट करना, उनको न जान करके, विवेक न होकर के आज हम उनको भोग विलासों का एक साधन बना लेते हैं। परन्तु देखो, वास्तव में ये साधन नहीं है। मुझे तो स्मरण आता रहता है ऋषि मुनियों का जीवन, मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने कई काल में प्रगट करते हुए ये कहा कि जब पति–पत्नी की दर्शनों की चर्चाएँ प्रारंभ होती हैं तो वे एक प्रकार का याग करते हैं और कहाँ तक का याग करते हैं कि जब माता–पिता एकांत स्थान में, मध्य रात्रि में, जब अंधकार छाया हुआ हो,

उस समय जागरूक रहकर जब दर्शनों की चर्चाएँ, वेद की चर्चा होती हो, उस गृह में रहने वाला जो समाज है, उस गृह में, उस माता से जो पुत्र, पुत्रियाँ उत्पन्न होने वाली हैं, वे भी उन विचारों को व्यक्त करके, माता–पिता के विचारों को व्यक्त करके, अपने में धारण करें, तो वे संस्कार बनते चले जाते। तो वह कितना बड़ा याग, कितना विशाल याग है। मानो कैसा विशाल याग है कि वे स्वयं तो विचार विनिमय करते ही हैं परंतु देखो, वे बालक, बालिका जो उस गृह में उत्पन्न होने वाले हैं वे एक प्रकार के याग का फल है। आह, वे भी माता–पिता के संकलन को, उन विचारों को अपने में धारण करने वाले बना करते हैं।

नारी का पूजन

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो आत्मा की विवेचना करते रहते हैं। मैं आत्मा की विवेचना अधिक नहीं करने आया हूँ। केवल विचार विनिमय यह कि आज हम माताओं के शरीर को याग रूप स्वीकार करें। परंतु ये याग रूप क्यों नहीं होने दिया। इसका मूल कारण है कि रूढ़ियों में, आवरणों में छाया हुआ ऐसा जगत है कि इसमें ये भी उच्चारण किया जा सकता है, कि इस संसार का क्या बनेगा, इस जगत का क्या बनेगा? आचार्यों ने तो सुंदर–सुंदर हृदय ग्राही शब्दों का प्रतिपादन किया है। मुझे स्मरण है कोई सम्प्रदाएँ माताओं को एक दृष्टि से स्वीकार कर रहा, दूसरा सम्प्रदाएँ माताओं के अस्तित्व को स्वीकार नहीं कर रहा है। परन्तु यहां वेद कहता हैं माता प्रभां कृतं पूजन्नं ब्रो कृति आस्ताः ''कि माता पूजनीय होती है, माता का पूजन करो, ऋषि कहते हैं, मनु महाराज ने कहा **स्वाति प्रहा कृत्स्यनं वेदां मह कृति' अत्युहि देवाः** वेद का ऋषि तो बहुत ऊँची–ऊँची उड़ान उड़ता है और ये कहता है कि ''जिस गृह में माता के नेत्रों से अश्रुपात होता है वह गृह नारकीक बन जाता है।'' परंतु यहाँ ऋषि मुनियों ने कितनी ऊँची विचारधारा दीं, ये विचारधाराएँ हमें केवल वैदिक साहित्य में प्राप्त होती है। ये वार्ता हमें मानो मोहम्मद से प्राप्त नहीं होती, ये ईसा से प्राप्त नहीं होती, ये बुद्ध से प्राप्त नहीं होती, ये मानो देखो, हमें महावीर से प्राप्त नहीं होती, परंतु ये सब वार्ताएँ हमें वैदिकता से प्राप्त होती हैं। हमें उन विचारों को प्रायः धारण करना चाहिए, जो आर्ष पोथियाँ हैं। जैसा याज्ञवल्क्य मुनि ने माताओं को सर्वत्रता में एक प्रकार का याग माना है। यहाँ कन्यायाग माना है मानो देखो, यहाँ देवीयाग भी माना है।

देवीयाग

देवीयाग का अभिप्रायः– मेरे पूज्यपाद गुरुदेव इससे पूर्व के शब्दों में विवेचना कर रहे थे, देवी याग का अभिप्राय है कि ''देवी की पूजा करना।'' देवी के पूजा का अभिप्राय है, प्रकृति की पूजा करना। प्रकृति की पूजा का अभिप्राय है, प्रकृति के जो अवशेष हैं उनका सदुपयोग करना, उनको क्रिया में लाना। वही उनकी पूजा कहलायी जाती है। आज हम माता की पूजा करना चाहते हैं। आज हम कन्या को याग बनाना चाहते हैं। मानो देखो, हम देवी याग की रचना चाहते हैं। परंतु उन यागों में क्या है? याग की मीमांसा केवल संक्षिप्त रूप में पूज्यपाद गुरुदेव ने की है कि याग का अभिप्राय है, धारण करना, याग का अभिप्राय है पालन करना। उसके सदुपयोग करने का नाम याग माना है।

आज मै इन वाक्यों में अधिक नहीं जाना चाहता हूँ, परंतु यहाँ रूढ़ियों ने माताओं के अस्तित्व को नष्ट करते हुए, आज संसार में जो कुरीतियाँ दृष्टिपात आती है, आज माता के शृंगार को भ्रष्ट होता हुआ दृष्टिपात् किया जाता है। आज मानव यागों की प्रथा को समाप्त करके, अपनेपन में अभिमानी बनकर के और ये स्वीकार करके कि ईश्वर कोई वस्तु नहीं, ये सब पाखंड है। परंतु मैं आज नाना प्रकार की वार्ता प्रकट करने नहीं आया हूँ। मैं जब ये प्रश्न करता हूँ कि अरे, भाई, तू ये तो जानता है अस्वात् प्रति ब्रह्मा, ये संसार कोई वस्तु नहीं है। परंतु तुम्हारा भी कोई अस्तित्व है क्या? तुम्हारी भी कोई महानता है क्या? परंतु देखो, उस समय कोई उत्तर प्राप्त नहीं होता। तो परिणाम केवल यही कि हम संसार के अवशेषों पर विचार–विनिमय करें। जिन अवशेषों से मानो हमारा कल्याण होता है। हम वास्तव में वेद की पवित्र–ध्वनि को अपनाते हुए, याग में रमण करते चले जाएँ।

आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से वाक् प्रकट कर रहा हूँ कि जहाँ हमारी ये आकाशवाणी जा रही है, वहाँ सामगान का पारायण हुआ, उसकी पूर्ण ''अस्वाति अध्ध्रे'' समाप्त हुआ। परंतु देखो, मैं एक वाक् अवश्य प्रगट किया करता हूँ, कि संसार में मृत्यु दिवस कदापि, अवशेषों में नहीं आना चाहिए। क्योंकि हमारे वैदिक साहित्य में 'मृत्यु' कोई शब्द नहीं होता, जब मानव की मृत्यु नहीं होती, तो मृत्यु दिवस का मनाना भी, मानव के लिए एक प्रकार की विडंबना है। उस विडंबना को कदापि भी लाना नहीं चाहिए। हमारा आत्मबल ये कह रहा है, वेद का ऋषि कहता है ''आत्म ब्रह्मा प्रथम सूर्यलोकं ब्रह्मा कृति उधानो आस्ताः'' कि संसार में किसी भी काल में मृत्यु नहीं होती। जब आत्मा की मृत्यु नहीं होती, परमाणुवाद भी नष्ट नहीं होता तो मानो देखो, मृत्यु दिवस का भी अपना कोई अस्तित्व नहीं होता। इसीलिए यह मानव की विडंबना है।

ब्रह्मा का जन्म दिवस

जन्म दिवस मानव का सदैव होना चाहिए। हमारे वैदिक साहित्य में जन्म दिवस की महान से महान प्रथा आयी है। किसी काल में हमारे पडपिता का जन्म हुआ था, जमदग्नि ऋषि का जन्म हुआ, किसी काल में हमारे पिता, महापिता का जन्म हुआ, तो हम जन्मदिवस मनाते रहे। मैं परंपरागतों से ही अपने पूज्यपाद गुरुदेव से प्रेरणा लेता रहता हूँ। जब हम आश्रमों में रहते थे तो ब्रह्मा जी के जन्मदिवस की प्रथा को प्रायः मनाते रहते थे। आज भी वो परंपरा चली आ रही है मानो जिसको हम **पंचदशी** कहा करते हैं। उस दिवस संसार में ब्रह्मा का जन्म हुआ था। इसी प्रकार हमारे ऋषि मुनियों ने जन्म दिवस को उत्सव माना है। मृत्यु दिवस का अपना कोई अस्तित्व नहीं माना है। क्योंकि जब मृत्यु होती ही नहीं, तो उसका अस्तित्व भी क्या है। एक आत्मा गृह से चली गई, सूर्य मंडल में, उस आत्मा की प्रतिभा, उसके कर्मों का तारतम्य, उसके साथ में रमण करने लगा। वह आत्मा किसी न किसी लोकों में रमण करता चला गया, अपना आनन्द मना रहा है, जीवन की आभा में रमण कर रहा है।

परंतु देखो, उसके मृत्यु दिवस का अस्तित्व हमारे जीवन में, नहीं होना चाहिए। जन्मदिवस अवश्य मनाना चाहिए। वह जो जन्मदिवस है, वही मानव को अपने उस बाल्यकाल की आभा में पुनः से अवृत्त करता है और वह जो जन्म है, क्योंकि संसार में जीवन ही जीवन है 'मृत्यु, अंधकार, तो है ही नहीं। ज्ञान में अंधकार नहीं होता और अज्ञान में अंधकार होता है। इसीलिए हम अंधकार को लाने का प्रयास क्यों करें। परंतु मैं इस संबंध में अधिक विवेचना प्रगट करने नहीं आया हूँ। केवल ये वाक् प्रकट करने आया हूँ कि ''संसार में अपने मानवीय जीवन को सदैव ऊँचा बनाना चाहिए, ऊर्ध्वा गति में ले जाना चाहिए।'' आज ऐसे अवशेषों में परिणत, जिस आत्मा का ''पुत्रां यज्ञे ब्रह्मे वर्धा'' हम्ब्रहे कृत ''जन्मदिवस की आभा में कल्पना करते हैं, हम ये विचारते रहते हैं कि पुत्रों गत्प्रहवास्ति ऐसे पुत्र मानो संसार में सर्वत्र प्राणियों के होने चाहिए। जिनके हृदय में वेद की प्रथा, वेद की परंपरा लाने का प्रयास किया जाए, परंतु इसमें संशोधन केवल इतना अवश्य करना चाहिए कि मृत्यु दिवस के पश्चात् हम इनके आसन पर जन्मदिवस की प्रथा को, अपने गृह में लाने का प्रयास करें, जन्म दिवस पर याग की प्रथा को लाने का प्रयास करें, क्योंकि वह आत्मा न यहाँ मृत्यु में था, न सूर्य मंडल में, न किसी लोकों में जाने के पश्चात् मृत्यु को प्राप्त हुआ है। इसीलिए आज जीवन को उस महान वेदी पर लाने का प्रयास करें। आज मैं अधिक विवेचना तो देने, नहीं आया हूँ। केवल आज का विचार हमारा ये कि हम वैदिक साहित्य और वैदिक परंपरा पर विचार विनिमय करने वाले बनें और वैदिकता को लाने के लिए हम सदैव अपने जीवन में आभा से युक्त होते हुए, इस संसार सागर से पार हो जाएँ।

कुप्रथाओं का कारण

परंतु समाज में नाना प्रकार की कुप्रथाएँ तब प्रारंभ हो जाती हैं जब बुद्धिमान ब्राह्मण नहीं रहते। तब रूढ़ियों का प्रचलन हो जाता है तो यथार्थ पृथा, परंपराएँ समाप्त हो जाती हैं। यहाँ समाज में जब मैं दृष्टिपात करता हूँ तो नाना प्रकार की कुप्रथाएँ हैं और ऐसी प्रथाएँ हैं जिनको दृष्टिपात करके हमारा अंतरात्मा बड़ा दुखित होता है और हम ये कहा करते हैं, प्रभु! तू कहा चला गया? वेद के आचार्यो को तू संसार में क्यों नहीं जन्म देता। जिससे मानव वेद का पठन पाठन करके कुसमाज, कुरीतियों को नष्ट करने वाला, और मानो शुद्धता को धारण करने वाले पण्डित होने चाहिए। जिससे हमारा जीवन पवित्रता में परिणत होता हुआ महानता की वेदी पर रमण करता हुआ, इस संसार में मानवता का प्रसार कर सवें+।

आत्मा का भोजन

तो आओ, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को ये प्रगट कराने आया हूँ, मैं यजमान को अपना आशीर्वाद, उनको ये उच्चारण करने आया हूँ कि उनका जीवन सदैव पनपता रहे, उनका द्रव्य शुभकार्यों में परिणत होता रहे, वे देवीयाग करते रहें, सामगान गाते रहें, जिससे उनके गृह में, द्रव्य की किसी प्रकार की हानि न हो सके। क्योंकि द्रव्य की प्रायः उन मानवों के द्वारा हानि हो जाती है, जो द्रव्य में परिणत हो करके, उसमें इतने लिप्त हो जाते हैं कि अंत में वह आत्मा की पिपासा को भी पूर्ण नहीं कर पाते। आज जब मैं संसार को दृष्टिपात करता हूँ, जिन राष्ट्रों में, जिस समाज में देखो, याग इत्यादि आत्मिक कर्म नहीं होते, वे अपनी आत्मा में पिपासी रहते हैं। वे प्रीति चाहते हैं, प्रभु की महानता चाहते हैं, करुणा चाहते हैं परंतु वह करुणा तो मानव में होनी ही चाहिये।

आत्मा की पिपासा

तो विचार क्या ''अभ्यागतं मनुवाचा कर्मणं ब्रह्मे'' वेद का ऋषि कहता है, आचार्य कहा करते हैं, पूज्यपाद गुरुदेव ने भी कई काल में प्रगट कराते हुए कहा है, कि वे सदैव आत्मा की पिपासा को शान्त करते रहते हैं अहा–द्रव्य से जिस गृह में याग होते हैं, परमात्मा के निष्काम कर्म में परिणत होते हैं, उस गृह में, द्रव्य की हानि नहीं हो पाती। परंतु हानि कहां होती है जहां द्रव्य रहते हुए भी मानव हानि में रहता है। एक मानव द्रव्यपति है, आत्मा की पिपासा को शांत नहीं कर पाता, आत्मा की पिपासा बनी ही रहती है। परंतु वह द्रव्य आत्मा की पिपासा को शांत नहीं करेगा। आत्मा की पिपासा, जैसे मन की पिपासा, भौतिकवाद की पिपासा, शरीर के पालन–पोषण की पिपासा, द्रव्य से समाप्त हो जाती है परंतु देखो, आत्मा की पिपासा ज्ञान और प्रकाश से समाप्त होती है। इसलिए ज्ञान और प्रकाश होना चाहिए। धर्मता होनी चाहिए और द्रव्य का सदुपयोग होना चाहिए। तो जहाँ सदुपयोग होता है उसके द्वारा द्रव्य की हानि नहीं होती। हानि वहां होती है जहां द्रव्य का दुरुपयोग किया जाता है। चरित्र को द्रव्य से भ्रष्ट किया जाता है। इसी द्रव्य के कारण नारकिकता में परिणत हो जाता है, मादक वस्तुओं का पान करके ऐसी स्थिति पर चला जाता है कि मानो इसका शरीर ही नहीं रहता और उसका अंतरात्मा, पिपासी रहकर के उसको धिक्कारता रहता है। तो ऐसे जो द्रव्य का दुरुपयोग किया जाता है तो वह नारकी बनता है और अगले जन्मों में वह मानव, उन लोकों में जाता है जहां प्रकाश का एक अंकुर भी प्राप्त नहीं हो पाता।

तो इसीलिए आज का विचार हमारा क्या कि हम सदैव अपने जीवन को ऊँचा बनाने वाले बनें। मुझे अपने पूज्यपाद गुरुदेव के चरणों में ओत–प्रोत होकर के नाना प्रकार की आभाओं को सदैव धारण करने का सौभाग्य प्राप्त होता रहा है। मैं यागों की प्रशंसा में सदैव रमण रहा हूं। याग से ही हमारा उत्थान होता है क्योंकि इस बाह्य, भौतिक याग के साथ में जब हम आध्यात्मिक याग करते हैं, आध्यात्मिकवाद में रमण करते हैं तो हम आध्यात्मिक याग, ज्ञान और प्रकाश में रमण करते हुए, परमात्मा के समीप चले जाते हैं। ऋषि मुनियों ने कहा है ''कि ये जो संसार है, ये एक प्रकार का याग है। इसमें व्यापकता का नाम ही याग कहलाता है जितना मानव का वाद विचित्र और व्यापकवाद में रमण करता रहेगा उतना ही देखो, ये यागों में परिणत होता रहेगा।

याग में कुप्रथाएँ

परंतु वाममार्ग–समाज ने यागों की प्रथा को मानो देखो, कुप्रथा में परिवर्तित कर दिया। उनमें देखो, मांस की स्थापना जैसे अजामेघ याग–अजामेघ में बकरी के मांस की आहुति देना, गौ मेध याग में गौ नामक के पशु की आहुति देना, नरमेघ याग में मानव की बलि प्रदान करना, इसी प्रकार यहां देखो, अश्वमेघ याग में घोड़े जैसे पशु की बलि देना, ये मानो देखो, कुप्रथायें इस समाज में, महाभारत काल के पश्चात आयीं। अहा, देखो, उन कुरीतियों का परिणाम ये हुआ कि यागों की प्रथा समाप्त होने लगी और समाज ने संघर्ष कर दिया।

गौ और अजामेघ याग

परंतु देखो, गौ मेघ का अभिप्राय है–गौ कहते हैं ''ब्रह्मचारी को'' मेघ कहते हैं ''विद्या को'', जो बालक को, पशु को प्रकाश में लाता है अथवा मेघ में लगा देता है उसका नाम गौ मेघ कहते हैं। उसी के आधार पर साकल्य से याग किया जाता है अजा नाम बकरी को भी कहते हैं और अजा नाम प्रकृति का भी है मानो देखो, प्रकृति को जब हम अजा में परिणत करते, प्रकृति के विज्ञान को जानें, और विज्ञान को जानने का नाम अजामेघ याग है। मानो, याग के परमाणुओं से हम यंत्रों का निर्माण करें, उनसे लोक लोकांतरों की यात्रा करें, तो वो हमारे यहाँ अजामेघ याग कहलाता है।

अश्वमेध याग

देखो 'अश्व' नाम राजा का है। राजा और प्रजा दोनों मिल करके राष्ट्र को ऊँचा बनायें, और संसार को विजय करके अश्वमेघ याग करें। परंतु संसार में वाम मार्ग अर्थ का अनर्थ करके यज्ञों की प्रथा को समाप्त करने लगा। मानो देखो, समाप्त क्या? मानव के हृदय में एक विडंबना जागी, महात्मा बुद्ध ने कहा कि ''मैं ऐसे वेद को स्वीकार नहीं करता, जिस वेद में हिंसा हो, जिस यज्ञ जैसे शुभ कर्मों में बलि की प्रथा हो। ऐसा याग मैं कदापि स्वीकार नहीं करता। चाहे वह कितना भी महान कर्म हो,'' परंतु बुद्धि नहीं कह सकते इस वाक् को, हम भी उच्चारण कर सकते हैं। परंतु बुद्ध की इतनी सूक्ष्मता रही कि उन्होंने वेद का अध्ययन, तार्किक रूपों से नहीं किया उनके वेद के अध्ययन को गम्भीरता से न करने का परिणाम क्या हुआ, कि बुद्ध परम्परा ने मानो देखो, समाज को और भी अंधकार में परिणत कर दिया।

माता की पूजा

परिणाम क्या, हम वाममार्ग को, कुप्रथावादियों को समाप्त करना चाहते है तो हमारे द्वार ज्ञान और विवेक होना चाहिये। हमारे द्वारा एक ऊँची प्रथा होनी चाहिए। हमारा प्रयास कुविचारों को समाप्त करके, हमारे सुविचार होने चाहिए। जिससे हम समाज को अग्रणीय बना सकें। परंतु इसी प्रकार नाना आचार्यों ने कहा–कि हमारे यहां समाज में देखो, पुत्रियों का और पत्नियों का अस्तित्व नहीं है। ईसा ने और मोहम्मद दोनों ने ही एक अस्थि से माता के शरीरों को स्वीकार किया। एक अस्थि से शरीर को स्वीकार करने वालों से यदि हम ये प्रश्न करते हैं और कहते हैं कि तुम्हें लज्जा नहीं आयी इन वाक्यों को स्वीकार करते हुए, जिस माता के गर्भ से हम उत्पन्न होते हैं, उस माता का अस्तित्व न करेंगे तो हमारा समाज और हमारा धर्म, हमारी मानवता कुछ काल में समाप्त हो जाएगी।

इसीलिए आज का विचार क्या कि वेद कहता है कि हम माताओं का पूजन करें, माताओं के प्रति हमारी निष्ठा होनी चाहिये परंतु देखो, जिनके गर्भ से ऋषि मुनियों का जन्म होता है, जिनसे जीवन उद्‌गम और ऊर्ध्वा बना करता है हम सदैव उनके पुजारी बनें।

हम सदैव वेद के साहित्य को अपनाने वाले बनें। आज मैं अधिक विवेचना नहीं दूंगा, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को ये निर्णय देना चाहता हूं कि जितनी कुप्रथायें हैं, इन कुप्रथाओं को समाप्त करना है तो हमें एक महान मार्ग को अपनाना होगा और वह मार्ग है याग का, याग करते हुए उस पर हमारी एक क्रान्ति होनी चाहिए, ज्ञान और विवेक होना चाहिए। जिससे हम राष्ट्र और समाज को ऊँचा बना सकें। आज मैं इन शब्दों के साथ में अधिक विवेचना प्रगट करने नहीं आया हूं। विचार विनिमय में ये कि आज ये जो समाज में, आधुनिक काल में त्राहि–त्राहि हो रही है, उसका मूल कारण है, कि हमने धर्म और मानवता को जाना नहीं। यदि आज का राष्ट्र और मानव धर्म और मानवता को जान जाये तो ये मानो कुप्रथायें समाप्त हो जायेंगी और राष्ट्र को एकोकी चरी करते हुए मानो देखो, हम उससे समाज को ऊँचा बनाये।

अहा, ये न रह करके, कोई समय आ रहा है जब मैंने बहुत पुरातन काल में कहा है कि वो समय निकट है जब यहां देखो, एक एक स्थली पर संग्राम की प्रतिभा और अग्नि प्रचण्ड होती चली जायेगी। परंतु वो समय दूरी नहीं है जब मानव–मानव के रक्त का भक्षण करने वाला बनेगा। तो वह समय दूरी नहीं, वह समय निकट आ रहा है और आता रहता है। परंतु देखो, मैं ये विचार केवल इसीलिए व्यक्त करने जा रहा हूं कि आज यदि मानव ने अपनी मानवीयता को ऊँचा नहीं बनाया, तो समाज में वह समय निकट आ रहा है।

परंतु इन वाक्यों को मुझे उच्चारण करना नहीं है, मैं तो केवल ये वाक् प्रकट करने आया हूं–अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाता हुआ, यजमान को अपना आशीर्वाद तो क्या, मैं ये उच्चारण करना चाहता हूं कि आयु दीर्घ होनी चाहिए, जिससे धर्म और मर्यादा की रक्षा होती रहे। हे यजमान! मैं केवल

अपनी इस वाणी से यही उच्चारण कर रहा हूं कि तेरा हृदय उदार और महानता में परिणत होता रहे, गृह में कुप्रथा समाप्त होनी चाहिए और वेद और ज्ञान के द्वारा प्रत्येक मानव को महानता में परिणत होना चाहिए। परंतु जिससे हमारी मानवता, हमारा जीवन ऊँचा बने, गृह में सदैव किसी प्रकार की भी हानि न हो पाये, धर्म की और धर्म के साथ में श्री लक्ष्मी की भी हानि न हो पाये।

इन वाक्यों के साथ मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊँगा। विचार क्या कि आज यही आशीर्वाद कहो परंतु सदैव मेरी ये उद्गमता रहती है कि जिन ब्राह्मणों के द्वारा वेद का पठन–पाठन होता है उनका आयु दीर्घ हो, होताजन अपनी त्रुटियों को समाप्त करके, ऊँचे से ऊँची गति को प्राप्त होते रहें। ये मेरा सदैव एक वाक् रहता है, इन वाक्यों के साथ हे यजमान! तू! सपत्नी विराजमान होकर के यज्ञवेदी पर देखो, जैसे अर्धभाग और दिग्ध उत्तर प्रश्नों में परिणत होते रहे, जैसे प्रजापति के यहां–मैं तो अपने पूज्यपाद गुरुदेव का वो समय कितना विचित्र था, मानो जहां उत्तर, प्रश्न होते थे, महा भयंकर वनों से लाया जाता, मैं तो जब संसार को, कर्म की प्रथा को, कर्म के उस विचित्र दृश्य को दृष्टिपात करता हूं तो मेरा हृदय तो किसी काल में दुखित हो जाता है और किसी काल में हर्ष ध्वनि करने लगता है।

परंतु मैं इन वाक्यों को अधिक उच्चारण करना नहीं चाहता हूं। विचार–विनिमय में ये, मेरा अंतरात्मा बड़ा प्रसन्न रहता है कि समाज में जब ऐसे ऐसे उत्तम कर्म होते रहें, याग होते रहें, परंतु कुप्रथा से नहीं, केवल मृत्यु दिवस नहीं, जन्मदिवस की प्रतिभा होनी चाहिए, जिससे हमारी संस्कृति में, हमारे वैदिक साहित्य में, मृत्यु का कोई शब्द नहीं है। केवल जीवन ही जीवन को स्वीकार किया है ऋषियों ने। तो इसके साथ मैं, यजमान को सदैव यही कि उनका जीवन दीर्घ बने, उनके हृदय से शोकाकुल की भावनायें, शोकाकुल की तरंगें न आयें, सदैव प्रकाश ही प्रकाश रहे। इसके साथ मैं अपने वाक्यों को यही विराम दे रहा हूं।

पूज्यपाद गुरुदेवः–आज मेरे प्यारे महानन्द जी ने कुछ परम्परा की वार्तायें प्रगट कीं, कुछ आधुनिक काल की प्रतिभा भी थी। परंतु ये कोई वाक् नहीं, महानन्द जी की कुछ ऐसी प्रेरणा है कि आप भी कुछ उच्चारण करें। मेरे प्यारे महानन्द जी ने यज्ञ की कुछ चर्चायें कीं। परंतु हम भी इनके साथ यजमान को यही उच्चारण करने आये हैं, यही उच्चारण करेंगे कि स्वाति द्रष्यदे सौभाग्यं' ब्रह्मस्ते मानो इनका सौभाग्य और जीवन की ज्योति सदैव जगती रहे, वह मानो सुषुप्ति में न जाये, उनका जीवन सदैव महान, सुदृढ़ और मानवता की, मानवीयता में देववत् बनता रहे। इनके व्यापक विचार, संकीर्णता में न आये, व्यापकता में सदैव परिणत रहे, ये वाक् अब समाप्त होने जा रहा है।आज का वाक् समाप्त, अब वेदों का पठन पाठन, होगा इसके पश्चात् वार्ता समाप्त होगी। **दिनांक :07–05–73 , जोर बाग**

आत्मा का भोजन– दिनांक–17–02–74

जीते रहो,

देखो मुनिवरो, आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मंत्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मंत्रों का पठन–पाठन किया, हमारे यहां परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेद–वाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में, उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की प्रतिभा का वर्णन किया जाता है। क्योंकि जितना भी ये जड़ जगत अथवा चैतन्य जगत हमें दृष्टिपात आ रहा है, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में, वह मेरा देव दृष्टिपात आ रहा है, क्योंकि प्रत्येक वेद मंत्र, उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है, जिस प्रकार माता का पुत्र, माता की गाथा गा रहा है। जिस प्रकार ये पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है। इसी प्रकार प्रत्येक वेद का मंत्र, उस ब्रह्म की गाथा गा रहा है। अथवा उस ब्रह्म का वर्णन कर रहा है।

वसुन्धरा

आज के हमारे वेद के पठन–पाठन में, नाना प्रकार के मंत्रों की विवेचना हो रही थी। अथवा उस वेद मंत्र में परमात्मा के ब्रह्माण्डमयी आभा का वर्णन हो रहा था। जैसे आज का वेद मंत्र कह रहा था–''हे माता वसुन्धरा! तेरे गर्भस्थल में ये संसार वशीभूत हो रहा है।'' क्योंकि शब्द ये कहता है ''वसुन्धरं ब्रह्मा वाचा देव ब्रह्मा' हे माता वसुन्धरा! ये ब्रह्माण्ड तेरे में ही ओत–प्रोत हो रहा है'' हमारे वैदिक साहित्य में वसुन्धरा के नाना प्रकार के पर्यायवाची शब्द माने गये हैं। वसुन्धरा नाम जैसे माता को कहा गया है, पृथ्वी का नाम भी वसुन्धरा है और वसुन्धरा नाम मेरे उस देव का है जो संसार को चेतनामयी, मानो ये जो संसार दृष्टिपात आ रहा है और जड़ जगत में भी मानो उसी की पिण्डाकारमयी जड़वत् में दृष्टिपात आने वाला जगत में भी वही देव मानो विद्यमान रहता है। जहाँ बेटा! ये वेद का मंत्र, हमें वसुन्धरा के आंगन में ले जा रहा है। वहां आज का वेद मंत्र कह रहा था 'आत्मा ब्रह्मे वाचं वृत्ति देवाः हे आत्मा! तू संसार में, आत्मवत् दृष्टिपात आने वाला मानो शुद्यनं ब्रह्म वाचाः। मानो देखो, तू योगेश्वरों को अन्तर्हृदय रूपी गुफा में जो विद्यमान होते हैं उनको, तू स्वतः अपने में, प्रकाशमान, दृष्टिपात होने लगता है।

अनुसंधान की शैली

आओ मेरे पुत्रो! आज मैं तुम्हें, कुछ ऋषि मुनियों की विवेचना करने के लिए जा रहा हूं। आज मैं व्याख्या देने नहीं आया हूं। मैं केवल कुछ परिचय देने के लिए आया हूं। हमारे यहां प्रत्येक मानव, परम्परागतों से ही अनुसंधान करता रहा है और उसके अनुसंधान की जो शैली रही है, आध्यात्मिकवाद और भौतिक विज्ञान इन दोनों को जानना चाहता है। दोनों में जो रत रहना चाहता है। परम्परागतों से ही मानवीय हृदयों में दोनों प्रकार की अग्नि प्रदीप्त रही है और ये विचारता रहा है कि मैं भौतिक विज्ञानवेत्ता भी बनना चाहता हूं और आध्यात्मिकवेत्ता भी बनना चाहता हूं। दोनों प्रकार के विज्ञान को जानने के लिए मानव की परम्परागतों से बेटा! ये आकांक्षा बनी रहती है। मेरी पुत्रियां परम्परागतों से ही अपने में प्रकाश को दृष्टिपात करने वाली मानो उस विज्ञान में रत रहने के लिये पिपासी बनी रही हैं।

आओ मुनिवरो! देखो, आज मैं तुम्हें ऐसे क्षेत्र में ले जा रहा हूं, जहां मुनिवरो! देखो, ब्रह्म याग होता रहता है, वहां देवयाग भी होता रहता है। जहां देवयाग होता रहता है वहां पितरयाग भी होता रहता है। तो मेरे पुत्रो! मुझे एक वाक् स्मरण आ रहा है, आज मैं तुम्हें उस क्षेत्र में, उस काल में ले जाना चाहता हूं। जहाँ राजा जनक के यहां नाना प्रकार का आध्यात्मिक याग होता रहता था। एक समय बेटा! राजा जनक अपने कक्ष में विद्यमान थे, चिंतन में रत हो रहे थे। जहां राजा चिंतन करते थे वहां उनकी पत्नी उनसे अग्रणीय रहती।

वेदमन्त्र की विशेषता

मुझे स्मरण आता रहता है, एक समय सायंकाल को महर्षि अर्धभाग ने राजा जनक के गृह में प्रवेश किया। सायंकाल के समय में मुनिवरो! देखो, जनक और उनकी पत्नी रम्भेश्वरी अपने आसन पर विद्यमान थीं। तो बेटा! न्यौदामयी मंत्रों का उच्चारण कर रही थीं। न्यौदामयी मंत्रों का उच्चारण करते हुए, उनकी विवेचना महर्षि अर्धभाग कर रहे थे। इसी चिंतन और मनन में रहते हुए, रात्रि का काल था बेटा! निद्रा की गोद में प्रवेश हो गये। तो महर्षि अर्धभाग अपने कक्ष में जा पहुंचा। परंतु देखो, जब ''अब्रधो ब्रह्म वाचाः'' मध्य रात्रि को उनकी निद्रा जागरुक हो गयी। तो एक वेद का मंत्र उन्हें स्मरण आया और वेद मंत्र ये कह रहा था ''सूर्य ब्रह्मे वाचाः द्यौ लोकां ब्रह्मे वाचाः देवं चक्षुः रुद्रो वासुस्ति रुद्राः'' मेरे प्यारे! वेद का मंत्र ये कह रहा था कि हमारे जो नेत्र हैं, मानो ये किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं? जैसे ''अध्रतां'' सूर्य द्यौ से प्रकाश लेता है। ''प्रकाशत्वे'' वेद के मंत्रों में बेटा! ये विशेषता रही है, कि जहां वेद का मंत्र प्रश्न कर रहा है, वहीं मुनिवरो! देखो, उनका उत्तर भी दे रहा है। वेद कहता है कि सूर्य के प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं। वे सूर्य तक सीमाबद्ध हो गई, विचारने लगी। परंतु विचारते हुए अपने में कोई अनुसंधान नहीं कर सकी। मुनिवरो! उन्होंने अपने पति देव को जागरूक किया। राजा जनक से कहा–''प्रभु! ये न्यौदामयी मंत्र है और न्यौदामयी मंत्र ये कहता है, कि ''हमारे नेत्र किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं? कौन प्रकाश को देने वाला है, कौन प्रकाश दे रहा है, सूर्य भी द्यौ से सहायता लेता है। परंतु जो सहायता देने वाला है, वह मुझे प्रकाशक, दृष्टिपात नहीं आ रहा है।

राजा जनक का वेद–चिन्तन

तो मेरे प्यारे! जब ये वाक् उन्होंने प्रकट किया तो उनकी पत्नी रम्भेश्वरी चिंतन मग्न हो गयी। चिंतन होता रहा, मध्य रात्रि से मुनिवरो! देखो, प्रातःकालीन हो गया। प्रातःकाल होते, अपने–अपने कक्षों, अपने–अपने आसन को त्याग करके, अपनी क्रिया निवृत्त हो करके, क्रिया कलाप ''अस्वतो ब्रह्मवाचाः'' मेरे प्यारे! देखो, अपने मैं वो अनुसंधान बना रहा। हृदय में तो वाक् समाहित रहा, कि इसका निवारण नहीं हुआ हैं। राजा जनक के यहां बेटा! एक सुंदर भव्य यज्ञशाला थी। जिस यज्ञशाला में वो प्रातःकाल, सायंकाल दोनों समय बेटा! देव पूजा करते थे। अथवा अग्निहोत्र करते थे, अग्नि का पूजन करते थे। तो मेरे प्यारे! मुझे कुछ ऐसा स्मरण है पति और पत्नी दोनों प्रातःकालीन अपनी क्रियाओं से निवृत्त हो करके यज्ञशाला में जा पहुंचे। यज्ञशाला में नाना प्रकार के आसन विद्यमान थे मुनिवरो! देखो, एक आसन पर महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज विद्यमान हैं, एक आसन पर ब्रह्मचारी कवन्धि विद्यमान हैं, एक आसन पर उनके पुरोहित अश्वल विद्यमान हैं। नाना ऋषि मुनियों का बेटा! आसन लगा हुआ था। उनमें कुछ ब्रह्मवेत्ता, कुछ ब्रह्मनिष्ठ थे मानो कुछ श्रोत्रिय ब्रह्मचारी थे, कुछ चक्षुमहि ब्रह्मचारी थे, नाना ब्रह्मचारी, बेटा! आसनों पर विद्यमान थे। राजा जनक और उनकी पत्नी ने अग्न्याधान किया। अग्न्याधान करके उन्होंने देवपूजा की, देवपूजा के पश्चात् मेरे प्यारे! देखो, दोनों पति पत्नी मौन हो गये और उन्होंने ये संकल्प किया कि हम, आज आचार्य से कोई प्रश्न नहीं करेंगे।

नेत्रों का प्रकाशक

मेरे प्यारे! देखो, याग समाप्त करने के पश्चात् वे मौन हो गये। तो ''अस्सुतं ब्रह्मे वाचां।'' मुनिवरो! देखो, याग समाप्त होने के पश्चात् याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा कि यजमान मेरे से कोई प्रश्न कर सकता है। उन्होंने बेटा! देखो, हर्षध्वनि करते हुए पति–पत्नियों ने कहा–हे प्रभु! हम कुछ प्रश्न करना चाहते हैं। उन्होंने कहा–बोला। राजा जनक और उनकी पत्नी ने कुछ वेद मंत्रों का उच्चारण किया और ये कहा कि न्यौदामयी मंत्रों में कुछ सूक्त आते हैं, और उन सूक्तों में आता है

सम्भवा देवब्रह्मे ब्रह्मे चक्षुः रुद्रो भागं ब्रह्मं वाचाः
देवत्यां लोकं ब्रह्मे वा सुखस्त रुद्रह्मा अस्सुतं सूर्या

हे प्रभु! हम ये जानना चाहते हैं कि हमारे जो नेत्र हैं वे किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं। मानो हमारे नेत्रों का देवता कौन, जो प्रकाश के देने वाला है? तो मुनिवरो! देखो, राजा जनक के वाक्यों को पान करते हुए, महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज, ब्रह्मवेत्ता ने कहा–''कि हे राजन! देखो, हमारे जो नेत्र हैं, ये सूर्य के प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं। सूर्य प्रातःकाल में उदय होता है। अपने क्रियाकलाप में रत हो जाता है। मानो देखो, सूर्य का प्रकाश आता रहता है, हम प्रकाशमान होते रहते हैं। तो नेत्रों का देवता सूर्य कहलाता है। तो इसीलिए सूर्य हमारा 'प्रह्म' है देखो, यही सूर्य नाना प्रकार की वनस्पतियों को तपाने वाला है, जब वैद्यराज बनकर के वनस्पतियों के समीप पहुंचता है तो मानो देखो, वह जो प्रकाशमयी, ज्योतिर्मयी दृष्टिपात आती रहती है तो उनको परिपक्व बनाने वाला ये सूर्य है। जब वैज्ञानिकजन इस पृथ्वी के गर्भ में प्रवेश करते हैं तो कहीं सूर्य की किरणों के द्वारा, जल शक्तिशाली बन रहा है, कहीं रत्नों का निर्माण हो रहा है, कहीं स्वर्ण की धातु का निर्माण हो रहा है। मानो देखो, ब्रह्माण्ड वैज्ञानिकों को, दृष्टिपात आने लगता है। ये माता वसुन्धरा के गर्भ में नाना प्रकाश का खाद्य, खनिज तपायमान हो रहा है। तो ये सूर्य के कारण हो रहा है। सूर्य हमारा प्रकाशक है, प्रकाश के देने वाला है, ये प्रकाशक बना हुआ है। माता के गर्भस्थल में, जब हम जैसे शिशु विद्यमान होते हैं तो गर्भाशय को तपाने वाला, ये सूर्य कहलाता है, ये वसु–वृत्ति कहलाता है। हमारे आचार्यों ने बेटा! जब सूर्य की विवेचना प्रारम्भ की, तो कहीं सूर्य को आदित्य रूपों में परिणत किया है। कहीं इसे भास्कर कहते हैं, कहीं मेरे प्यारे! इसे वृख कहा जाता है। सूर्य के नाना पर्यायवाची शब्दों की विवेचना, हमारे वैदिक साहित्य में आती रहती है।

गौ–दुग्ध में स्वर्णमात्रा

परंतु ऋषि ने कहा ''हे राजन! ये जो गौ नाम का पशु है, इसके रीढ़ के विभाग में ''सम्ब्रति'' सूर्यकेतु नाम की नाड़ी होती है, उसे स्वर्ण वाहिनी भी कहते है। मानो जब सूर्य की किरणें आती हैं, तो जो स्वर्णमयी किरणें होती हैं उनका ऊर्ध्वा मुख हो जाता है, वे उन परमाणुओं को अपने में ग्रहण करने लगती है, परंतु वही परमाणु जब, गौ नाम के पशु के रीढ़ के विभाग से जो नाना प्रकार के यंत्रालय हैं, उन यंत्रों में जब किरणें प्रवेश करती हैं तो उनमें से दूध की झड़ियां लग जाती हैं। तो वेद का आचार्य कहता है, याज्ञवल्क्य मुनि ने कहा है कि गौ नाम के दुग्ध में जो पीत वर्ण है देखो, उसके मूल में क्या है? गौ के घृत में, गौ के दूध में स्वर्ण की विशेष मात्रा होती है।'' आचार्य ने कहा हे राजन! ये सूर्य हमारे नेत्रों का देवता ही नहीं है, ये संसार की आभा का देवत्व कहलाता है। नाना प्रकार की वनस्पतियों को तपाने वाला है, नाना पृथ्वियों के प्रकाश का द्योतक कहलाया गया है। आज हम सूर्य की उपासना करते चले जाएं, ये सूर्य हमारे नेत्रों का देवता कहलाता है।

परंतु राजा और उनकी पत्नी ने नतमस्तक होकर के कहा–''हे प्रभु! हम ये जानना चाहते हैं कि जब ये सूर्य नहीं होता, तब हम किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं ?

प्रकाशक चन्द्रमा

मेरे प्यारे! राजा जनक ने जब ऐसा कहा, तो महर्षि याज्ञवल्क्य ने कहा ''हे राजन! जब ये सूर्य नहीं होता तो हम चंद्रमा के प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं। ये चंद्रमा हमें प्रकाश देने वाला है। चंद्रमा, जिसको वैदिक साहित्य में सोम कहते हैं। मानो ये सोम की वृष्टि करने वाला है। कहीं चंद्रमा को अमृत वाहिनी अवृत्तियां कहलाया जाता है, कहीं देखो, इसको कांता के रूप में, परिणत किया गया है, ये जो चंद्रमा है ये सोम की वृष्टि करने वाला है मानो ये चंद्रमा अप्रतं आपोमयी ज्योति कहलाता है। माता के गर्भ स्थल में जब हम जैसे शिशु विद्यमान होते हैं तो देखो, ये चंद्रमा अपना अमृत बहाने का कार्य, करने लगता है। माता की रसना के निचले विभाग में, एक चंद्रकेतु नाम की नाड़ी होती है उसका संबंध चंद्रमा की कांतियों से होता है। मानो वह अमृत बहाने लगता है, उसी नाड़ी का संबंध माता की पुरातत नाम की नाड़ी से होता है। पुरातत नाम की नाड़ी का संबंध, माता की पंचम नाड़ियों से होता है। पंचम नाड़ियों का संबंध माता की लोरियों से होता है। परंतु वे नाड़ियां, वृत्तियां बन करके माता की नाभि से उनका समन्वय होते हुए, बालक की नाभि से उनका संबंध होता है। बेटा! देखो, वहां अमृत प्रवेश कर जाता है।

वहा रे, मेरे प्यारे देव! तू कितना वैज्ञानिक है। तेरे विज्ञान की कोई सीमा नहीं है। माता के गर्भ स्थल में एक शिशु के प्रवेश होने से ही नाना देवता उसकी सहायता के लिए उद्यत हो जाते हैं। मानो कहीं चंद्रमा आ जाता है, कहीं सूर्य आ जाता है, कहीं तारा मंडलों की माला बन जाती है। बेटा! ये कैसा अनुपम भव्य जगत कहलाता है।

प्रभु की प्रतिभा

''हे ममत्वां ब्रह्म वाचाः देवत्यां लोकाः सुत्यहि,'' मेरे प्यारे! देखो, ये चंद्रमा अमृत के बहाने वाला है। मानव को अमृत की आभा में रमण कराता है। जब कृषक पृथ्वी के गर्भ में, बीज की स्थापना कर देता है। तो मुनिवरों! देखो, ये चंद्रमा, सोम की वृष्टि कर देता है। कृषि सुन्दर उपजने लगती है ये संसार को अमृत देने वाला, ये सौम, चंद्रमा कहलाता है। जिसका समन्वय बेटा! समुद्रों से होता है। जिसका समन्वय देखो, अमृतमयी ज्योति से, आपो से होता है। आपोमयी ज्योति मानो देखो, प्रभु की प्रतिभा कहलाती है।

अमृत का वाहक

तो मुनिवरो! देखो, चंद्रमा अमृत के बहाने वाला है। याज्ञवल्क्य मुनि बोले–''हे राजन! जब ये सूर्य नहीं होता, तो चंद्रमा का धीमा–धीमा प्रकाश आता है। उसी प्रकाश में, मानव अपने को रत कर लेता है; अपने में क्रिया कलाप करने लगता है; अपने में प्रकाशित हो जाता है; अपने में ही क्रियाकलाप करता

हुआ, मानव भव्यता को प्राप्त हो जाता है।'' परंतु राजा ने कहा–''हे प्रभु! हम ये जानना चाहते हैं कि जब ये चंद्रमा भी नहीं होता, तब हम किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं?'' उन्होंने कहा–''हे राजन! जब ये चंद्रमा नहीं होता, तो धीमा–धीमा प्रकाश आता है। वह धीमा–धीमा प्रकाश तारामंडलों का है। तारामंडलों का धीमा–धीमा प्रकाश आ रहा है। मानव अपनी पगडंडी को ग्रहण कर लेता है। पगडंडी का पथिक बन जाता है। उसी पथ से अपने को प्रकाशमान बना लेता है। ये मानो देखो, जो तारामण्डल है, ये एक–दूसरे में ओत प्रोत हो रहे हैं।

मण्डलों की माला

आओ, मेरे प्यारे! याज्ञवल्क्य मुनि महाराज जहां बेटा! वे आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता थे, वहां भौतिक विज्ञान में उनकी भव्य गति रहती थी; ऐसा उन्होंने वर्णन किया है कि–''हे राजन! जैसा ये पृथ्वी मंडल हमें दृष्टिपात आ रहा है, ऐसी ऐसी तीस लाख पृथ्वियां मानो देखो, सूर्य मंडल में समाहित हो जाती हैं। हे राजन! जैसा ये सूर्य मंडल है, ऐसे ऐसे एक सहस्र सूर्य, बृहस्पति मंडल में समाहित हो जाते हैं और जैसा ये बृहस्पति मंडल है, ऐसे ऐसे एक सहस्र बृहस्पति मण्डल आरुणि मंडल में समाहित हो जाते हैं और जैसा ये आरुणि मंडल है मानो एक सहस्र आरुणि मंडल, ध्रुव मंडल में समाहित हो जाते हैं और जैसा ये ध्रुव मंडल है, ऐसे ऐसे एक सहस्र ध्रुव मंडल मानो देखो, स्वाति नक्षत्र में ओत प्रोत हो जाते हैं, जैसा ये स्वाति नक्षत्र है ऐसे–ऐसे एक सहस्र स्वाति नक्षत्र मूल नक्षत्र में ओत–प्रोत हो जाते हैं, जैसा ये मूल नक्षत्र है ऐसे ऐसे एक सहस्र मूल नक्षत्र, रोहिणी कृतिभा मंडल में ओत प्रोत हो जाते हैं। जैसा रोहिणी मंडल है, ऐसे ऐसे एक सहस्र रोहिणी मण्डल मानो देखो, अचंग मंडल में ओत–प्रोत हो जाते हैं, जैसा ये अचंग मंडल हैं मानो देखो, स्वाम्भूत मण्डलों में ओत–प्रोत होते हुए मानो बेटा! ये एक प्रकार का सौर मंडल बन जाता है।'' इतने मंडलों में ओत–प्रोत होने वाला ये तारामण्डल है। यह एक प्रकार का एक सौर मण्डल हो जाता है। और एक सौर मण्डल आकाश गंगा में ओत–प्रोत होता हुआ, ऐसा वेद का ऋषि कहता है कि मेरी विज्ञानशाला में लगभग मानो देखो, एक लाख सौर मण्डल मुझे दृष्टिपात हुए हैं। तो मेरे प्यारे! ये कैसा ब्रह्माण्ड है, कैसी प्रतिभा उस मेरे देव की है, वो कितना वैज्ञानिक है, एक दूसरे में ये ब्रह्माण्ड, ओत–प्रोत हो रहा है। एक दूसरे में दृष्टिपात आ रहा है। वहा, रे मेरे देव! तू कैसी माला को धारण कर रहा है, कैसी ये पवित्र माला है, जिसको योगी जन धारण करके बेटा! उस परमपिता परमात्मा की प्रतिभा में रत हो जाते हैं। मेरे पुत्रो! ये कैसी विचित्र माला है, जिस माला को वैज्ञानिक अपने में धारण कर लेता है। ये माला है, ये माला मानो उस देव की प्रतिभा कहलाती है।

अग्नि का प्रकाश

मेरे प्यारे! देखो, ऋषि ने जब ये 'ब्रणरूप्रस्तो' वर्णन किया तो राजा ने नतमस्तक होकर के कहा–''प्रभु! मैं ये जानना चाहता हूं, जब ये तारामण्डल भी नहीं होते, तो हमारे नेत्र किसके प्रकाश से प्रकाशित होते हैं? मेरे पुत्रो! देखो, जब राजा ने ये कहा, तो ऋषि ने कहा–''हे राजन! जब ये तारामण्डल नहीं होते, तो हम अग्नि के प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं। अंधकार छाया हुआ है, मेरी प्यारी माता अपने गृह को अग्नि से प्रकाशित कर लेती, अग्नि में प्रकाश होते हुए देखो, उसी के प्रकाश में मानव रत हो जाता है। ये अग्नि का प्रकाश, अग्नि की नाना प्रकार की जो रश्मियां हैं, अथवा तरंगें हैं मेरे पुत्रो! जब ये तरंगें आयुर्वेदाचार्यों के समीप पहुंची, तो आचार्यों ने 85 प्रकार की अग्नियों का चयन किया। जब यही अग्नि, मुनिवरो! देखो, ऋषि, ब्रह्मचारियों के मध्य में पहुंची, तो तीन प्रकार की अग्नि का चयन किया गया बेटा! जब गृहपथ्य नाम की अग्नि का वर्णन आया, तो बेटा! देखो, पति, पत्नियों के मध्य में, जब ये अग्नि प्रवेश हुई तो इन्होंने गृहपथ्य, गाहर्पथ्य, वैश्वानर और मुनिवरो! देखो, विश्वस्ति अग्नि का वर्णन किया है। इसी प्रकार ये अग्नि मानो देखो, परिवर्तित होती हुई, आश्रमों में परिणत हो गई। मानव की प्रतिभा में प्रतिष्ठित होने लगी। यही अग्नि बेटा! जब वैज्ञानिकों के मध्य में पहुंची, तो इस अग्नि के परमाणुओं का विभाजन होना प्रारम्भ हुआ। 85 प्रकार की अग्नि को आयुर्वेदाचार्य जब अपने में चयन करता हुआ मौन हो गया, इसी अग्नि की 85 प्रकार की धारा को जब वैज्ञानिकों ने बेटा! इसका विभाजन करना प्रारम्भ किया, तो उस एक अग्नि का, जब उसमें संघर्ष हुआ तो मुनिवरो! देखो, अरबों, खरबों प्रकार की तरंगों का जन्म हुआ। अरबों, खरबों प्रकार की तरंगों का जब विभाजन किया तो उसमें से बेटा! और असंख्य किरणों का जन्म हो गया। मानो अग्नि की धारायें उत्पन्न होने लगी, जिन अग्नि की धाराओं में, मेरे पुत्रो! नाना प्रकार के परमाणु गति करते रहते हैं, उन परमाणुओं से ब्रह्माण्ड की आभा का निर्माण होता रहता है। ब्रह्माण्ड की वृत्तियों का निर्माण होता रहता है।

ब्रह्माग्नि

तो मेरे पुत्रो! देखो, ये जो ब्रह्माण्ड है वह एक विचित्रता में परिणत होता हुआ, अग्नि का एक भव्य अस्तुत दृष्टिपात होता है। आज का वेद मंत्र कह रहा था ''ब्रह्माग्निं ब्रह्मे वाचाः रुद्रो भवितुं भवा गुरुति देवाः'' मानो देखो, ये अग्नि, ब्रह्माग्नि कहलाती है। ब्रह्माग्नि उसे कहते हैं जो मेरे पुत्रों! देखो, एक–दूसरे ब्रह्माण्ड को प्रकाश देने वाली है। एक–दूसरे ब्रह्माण्ड को अपनी वृत्तियों में कर रही हैं। मेरे प्यारे! वृत्तियों में देखो, एक सूत्र में इसको पिरो रही है। विचार आता रहता है प्राणं ब्रह्म वाचप्रह्मे लोकाः ये प्राण सूत्र है, जो अग्नि के प्रकाश से प्रकाशित होता हुआ, अग्नि उसको एक सूत्र में पिरोकर के लोक–लोकांतरों में स्थिर हो रहे हैं। मेरे पुत्रो! ये प्राण सूत्र की, विवेचना अवृत्तियों में कहलायी गई है। आज मैं इस संबंध में विशेष विवेचना देने नहीं आया हूं।

विचार–विनिमय में ये है बेटा! ये अग्नि कितने भव्य रूपों में रमण करती रहती है। यही अग्नि है बेटा! जो वाणी के रूप में माता–पिता के मध्य में रहती है उससे बेटा! गृह स्वर्ग बनता है। यही अग्नि जब ब्रह्मचारी अपने में अध्ययन करना प्रारम्भ करता है, तो अध्ययनशील होता हुआ मुनिवरो! देखो, अपने विचारों को ब्रह्मवर्चोसि में पिरो देता है। गाहर्पथ्य नाम की अग्नि का पूजन करके विद्या का अध्ययन करता हुआ, ब्रह्मवर्चोसि बनता है। मुनिवरो! देखो, यह अश्रुत कहलाया गया है। माता–पिता जब ब्रह्मवाचक अग्नि में गृहपथ्य अग्नि को ऊँचा बनाते हैं। गृह ऊँचा तब बनता है जब माता पिता के द्वारा देखो शुद्ध विचारों की अग्नि होती है, शुद्ध विचार होते हैं। ''विचारां ब्रह्माग्नि वृत्ति अस्तो देवाः'' मेरे पुत्रो! देखो, उस अग्नि से ये संसार ऊँचा बनता है। इसी प्रकार ये अग्नि कहीं वाणी के रूप में रहती है, कहीं प्रकाश के रूप में रहती है, यही अग्नि प्राणों के रूप में परिणत होती हुई मेरे पुत्रो! यही अग्नि पृथ्वी के गर्भ में नाना प्रकार के जल तत्वों को तपाने का कार्य करती है। यही अग्नि है मुनिवरो! देखो, जो मानव को ऊँचा बनाती है; यही अग्नि है जो राष्ट्र की प्रतिभा को ऊँचा बनाती है। यही अग्नि है जो वैज्ञानिकों के मध्य में मुनिवरो! देखो, नाना प्रकार के यंत्रों को निर्माणित करते हुई कोई सूर्य की परिक्रमा कर रहा है, कोई मानो देखो, बृहस्पति की परिक्रमा कर रहा है, ऐसे–ऐसे वैज्ञानिक बेटा! हमारे यहां हुए हैं कि मानो देखो, देवर्षि नारद और महात्मा ध्रुव दोनों सूर्य की किरणों की परिक्रमा करते रहते थे। सूर्य से ऊर्ज्वा को लेते, कहीं बृहस्पति की परिक्रमा होती रही है। परंतु ये अग्नि बड़ी विचित्रता में परिणत रही है। आज मैं इसके गर्भ में प्रवेश होना नहीं चाहता हूं, परंतु देखो, वेद के ऋषि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने ये विवेचना प्रकट की।

शब्द का प्रकाश

उसके पश्चात् राजा जनक और उनकी पत्नी ने ये कहा–''हे प्रभु! हम ये जानना चाहते हैं कि जब ये अग्नि नहीं होती, तब हम किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं?'' मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने ये श्रवण किया, तो ऋषि ने कहा–''हे राजन! जब ये अग्नि नहीं होती, तो हम शब्द के प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं। ये शब्द ही हैं बेटा! जो मानव को पथ–दर्शन करवाता है। मानव को पथ दर्शन में ले जाता है। मुनिवरो! देखो, शब्द ही मानव का प्रकाशक है। उन्होंने प्रमाण देते हुए कहा–''जैसे एक मानव मार्ग में चला जा रहा है, मार्ग से कुमार्ग में, भयंकर वन में चला जाता है, तो भयंकर वन में जाने के पश्चात् वह मानव कहता है अरे, है कोई मार्ग चेताने वाला, उस समय जो मानव, मार्ग में स्थिर है, वह कह रहा है आ जाओ, मैं मार्ग में स्थिर हूं। मेरे पुत्रो! देखो, उस शब्द रूपी प्रकाश से, वह अंधकार वाला मानव भयंकर वन से अपने पथ को ग्रहण कर लेता है। इसी प्रकार मेरे पुत्रो! देखो, पण्डित ऊँचा बनता है तो शब्दों की वृष्टि से बनता है। शब्द जितना महान होता है, शब्द जितना सत्वमयी होता है उतना ही मुनिवरो! देखो, समाज ऊँचा बनता है। देखो, वह विचारां ब्रह्मे वाचाः मानो देखो, जब माता–पिता के मध्य में सत्यता से शब्द भ्रमण करता है, तो उनकी मानो देखो, संतान ऊँची बनती है। उनके बाल्य भव्यता में परिणत होते हुए अपने को ऊँचा बना लेते हैं।

सत्य में शब्द

मेरे पुत्रो! इसीलिए वेद का ऋषि कहता है कि मानव को सत्य उच्चारण करना चाहिये। ये शब्द हैं, जो अन्तरिक्ष में स्थिर रहता है। मेरे पुत्रो! देखो, वैज्ञानिक जन इन शब्दों को ग्रहण करते रहते हैं। मानो शब्दों के साथ में जो मानव का आकार बन करके, चित्र जाता है अंतरिक्ष में ओत–प्रोत होता है। वे उन शब्दों को दृष्टिपात करते रहे हैं। मेरे पुत्रों! देखो, वैज्ञानिकों ने परंपरागतों से ही ये विचार बनाया कि शब्दों को ग्रहण करना चाहिये। जो अंतरिक्ष में शब्द, शब्द के साथ में निहित रहते चित्रों को दृष्टिपात करना। ये वाक् तो बेटा! मैं कल ही विवेचना दे सकूँगा। आज इतना समय आज्ञा नहीं दे रहा है, परंतु देखो, वेद का ऋषि कहता है कि मानव को सत्यवादी बनना चाहिये। सत्य वचन ही होना चाहिये। क्योंकि सत्य की संसार में सदैव विजय होती है, सत्यवादी को ही कहते, कि ये मानव सत्य कहता है इसीलिए इसका वाक् सत्य है, ये पूज्य है।

तो मेरे पुत्रों! देखो, इसीलिये जब अग्नि नहीं होती, तो शब्द के प्रकाश से मानव प्रकाशमान होता है, शब्द से अपने मार्ग को प्राप्त कर लेता है, शब्द के कारण ही बेटा! देखो, दर्शनों का जब शब्द मानव के श्रोत्रों में प्रवेश करता है, तो मानव के हृदय को पवित्र बना देता है, मानव की नाना प्रकार की ज्ञान रूपी रश्मियां जागरूक हो जाती हैं। तो बेटा! देखो, वह भव्यता वाला एक संसार कहलाता है। परंतु देखो, राजा जनक ने ये कहा कि–"हे प्रभु! मैंने ये सब व्याख्या पूर्व कई ऋषियों से श्रवण की है। परंतु मैं ये जानना चाहता हूं कि जब ये शब्द भी नहीं होता तब हम किसके प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं? मेरे प्यारे! देखो, राजा जनक ने कहा–सम्भवे देवां ब्रह्म वाचाः "हे प्रभु! मैंने इन शब्दों की विवेचना तो महखष अर्धभाग से, ब्रह्मचारी कवन्धि से, नाना ऋषि मुनियों से श्रवण की है। परंतु मैं "आत्मा ब्रह्म वाचप्रहे" तो राजा के वाक् पान करके ऋषि याज्ञवल्क्य मुनि जी कहते हैं "हे राजन! जब ये शब्द नहीं होता, तो उसके पश्चात् आत्मा के प्रकाश से प्रकाशमान होते हैं। ये आत्मा हमारा प्रकाशक है, आत्मा हमारा देवत्व कहलाता है।

प्रकाशक आत्मा

मानो देखो, जब ये आत्मा इस मानव शरीर से निकल जाता है, तो अपने चित्त के मण्डल को लेकर के–हे राजन! उस समय सूर्य प्रकाश दे रहा है ये नेत्र ज्यों के त्यों बने हुए हैं अरे मानव! तू क्यों नहीं प्रकाशमान हो जाता। मेरे प्यारे! देखो, चंद्रमा अमृत बिखेर रहा है, अरे, एक आत्मा शरीर में नहीं है। अरे मानव! तू क्यों नहीं अमृत को प्राप्त कर लेता। मेरे प्यारे! तारामण्डल अपनी माला में ओत–प्रोत होते हुए, मानव को प्रकाश दे रहे हैं। धीमा प्रकाश आ रहा है। अरे मानव! एक आत्मा शरीर में नहीं है, तू क्यों नहीं प्रकाशमान हो जाता। अग्नि अपने प्रकाश में रत है नाना प्रकार के अणुओं के रूप में प्रकाश दे रही है। नाना काष्ठों के रूप में प्रकाश दे रही है, अरे, मानव! तू क्यों नहीं प्रकाशमान हो जाता। क्योंकि शरीर में आत्मा नहीं है। मेरे प्यारे! देखो, अंतरिक्ष से वो शब्द ध्वनि आ रही है। कि इस मानव के शरीर में आत्मा नहीं है। अरे मानव! तू क्यों नहीं इस ध्वनि को श्रवण कर रहा है। तू ध्वनि से क्यों नहीं ध्वनित हो रहा है।

मेरे प्यारे! याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा–"हे राजन! इस से ये प्रतीत होता है ये आत्मा मानो देखो, अपने में प्रकाशमान है। इस आत्मा के प्रकाश के लिये, जो आत्मवेत्ता होते हैं, इस आत्मा के प्रकाश के लिए वे सदैव रत रहते हैं, अपने में स्वतः प्रकाशमान हो जाते हैं। तो हे राजन! ये आत्मा हमारे नेत्रों का प्रकाशक है। जब तक मानव के शरीर में आत्मा होता है, अरे, उस समय मानव की सर्वत्र इंद्रियां मानो अपने में प्रकाशमान हो रही हैं। नाना प्रकार की अग्नियां प्रदीप्त हो करके, वे अपने में चयन कर रही हैं। इसी प्रकार हमें आत्मा को जानना चाहिये। हे मानव! तू संसार में अपनी आत्मा को जानने का प्रयास कर, प्रातः काल से ले करके सायं काल तक मेरे पुत्रो! देखो, उदर की पूर्ति करने में मानव सदैव रत रहता है।

आत्मा का भोजन

हे मानव! जैसे शरीर को तू भोजन देता है, अरे आत्मा को भी तो भोजन देने का प्रयास कर। क्योंकि आत्मा के कारण ही मानव में ये सर्वत्र रश्मियां जागरूक रहती हैं। आत्मा को जानने का प्रयास करना ही, आत्मा का भोजन क्या है? परमपिता परमात्मा का चिंतन करना ही आत्मा का भोजन माना गया है। प्रत्येक मानव को बेटा! उस परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए आत्मवत्, "आत्मा" तत्व को जानते हुए अपने में प्रकाशमान होना चाहिये। जब मानव अपने प्रकाश में रत हो जाता है तो बेटा! मानव का जीवन, मानव की प्रतिभा मानो देखो, ये जो भौतिक विज्ञान–संसार में जितना भी विज्ञान है ये सब सीमित रहता है। जितना भौतिक विज्ञान है, चाहे वह सूर्य की यात्रा हो, चंद्रमा की यात्रा हो, अग्नि के नाना प्रकार, आक्रमण होने वाला परमाणु क्यों न हो, चित्रावलियां क्यों न हों, मुनिवरो! देखो, ये सब शब्द तक सीमित रहता है, परमात्मा का विज्ञान, परमात्मा मंगलवृत्तिदेवाः ये विज्ञान मानो देखो, भौतिक विज्ञान के रूप में परिणत रहता है। अरे मानव! तुमने इस कालं ब्रह्मी वस्तो जहाँ देखो, ये भौतिक विज्ञान समाप्त होता है, वहां से आध्यात्मिकवाद का प्रारम्भ होता है। शेष अनुपलब्ध..... **दिनांक–17–02–74 ,बरनावा**

महर्षि वशिष्ठ–दिनांक–05–11–75

जीते रहो!

देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति कुछ मनोहर वेद मंत्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन मंत्रों का पठन–पाठन किया। हमारे यहां, परम्परगतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में, उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान, विज्ञान का प्रायः वर्णन किया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा सदैव ज्ञान और विज्ञान में रमण करते रहते हैं। जब हम प्रकृति के गर्भ में परिणत होते हैं, और बाह्य प्रकृति के सूत्र को दृष्टिपात करने लगते हैं, तो सर्वत्रता में एक चेतना दृष्टिपात आने लगती है। और ऐसा प्रतीत होने लगता है, जैसे परमपिता परमात्मा की अनुपमता है, मानो उसकी जो चेतनता है, वह इस प्रकृति के कण–कण में ओत–प्रोत है।

बेटा! जितनी भी संसार में क्रियाएं दृष्टिपात आ रही हैं, उन सर्वत्र क्रियाओं का जो मूलक है, वह मानो एक चेतना है और उस चेतना को द्वितीय रूपों में हम परमपिता परमात्मा की ही आभा स्वीकार करते हैं। क्योंकि ब्रह्मवेत्ताओं ने, और भी नाना ऋषि–मुनियों ने, मेरे पुत्रो! घोषणा की है और वह घोषणा यह, कि प्रकृति का जो एक–एक कण है अथवा एक–एक जो परमाणु है, वह उस परमपिता परमात्मा की आभा से पिरोया हुआ है। जिस प्रकार माला का निर्माण होता है और उस माला से पूर्व, मनके भिन्न होते, और सूत्र भिन्न होता है। परंतु जब, उस एक सूत्र में प्रत्येक मनके पिरोये जाते हैं, तो मेरे प्यारे! मनके और धागे अथवा सूत्र के संबंध का नाम माला कहलाती है। यदि वे दोनों सूत्र और मनके पृथक् होते तो मेरे पुत्रो! वह माला नहीं कहलायी जा सकती। इसी प्रकार ये जो ब्रह्माण्ड है, यह माला के सदृश माना जाता है। प्रत्येक प्रकृति का जो एक–एक कण है वह उस चेतना से पिरोया हुआ है।

मैंने पुरातन काल में पुत्र! तुम्हें निर्णय करते हुए कहा था, कि मानव की स्मरण शक्ति में भी एक सूत्र पिरोया हुआ है। उस सूत्र का सम्बन्ध मानव के चित्त से रहता है। नाना जन्मों की स्मरण शक्तियों का वो केन्द्र कहलाया गया है। मेरे प्यारे! जब मानव के समीप, वे नाना प्रकार के संस्कार स्पष्ट होकर के समीप आते हैं, चित्त पटल पर आने लगते हैं। तो मेरे प्यारे! देखो, मानव को उस काल में ये भान होता है, कि एक कण–कण में विश्व का विज्ञान विद्यमान है। मेरे प्यारे, राष्ट्र के राष्ट्र एक एक परमाणु में निहित रहते हैं मानव की स्मरण शक्ति में रहते हैं। एक मानव गमन करने के लिए जाता है। वह ध्रुव मण्डल की यात्रा करता है, अथवा मंगल की यात्रा करता है। उसकी जो बुद्धि का केन्द्र है, अथवा चित्त का जो स्थल है उसका सर्वत्र मानो चित्रण हो जाता है और चित्रण होने के पश्चात् जिस भी काल में मानव स्मरण शक्ति को जागरूक करता है, वर्णन आता है मेरे प्यारे! एक परमाणु में जो स्मरण शक्ति के रूप में, एक परमाणु मात्र है। उसमें सर्वत्र चंद्र मण्डल विराजमान है मानो ध्रुव मण्डल विराजमान है। मेरा देव कितना रचयिता है बेटा! आज हम उस परमात्मा की रचना पर जब विचार–विनिमय प्रारम्भ करते हैं तो प्रायः ऐसा दृष्टिपात होता है कि एक–एक परमाणु क्या, एक एक अणु में बेटा! सृष्टि का सर्वत्र विज्ञान निहित रहता है।

आत्मा का भोजन

चिन्तकों की उड़ानें

मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें निर्णय देते हुए कहा था, विज्ञान की आभाओं में रमण करते हुए, उनकी तरंगों में गति करने वाला, उड़ान उड़ने वाला बेटा! जब उड़ान उड़ता है तो इस संसार को, नाना रूपों में काल की दृष्टि से दृष्टिपात करता है। मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें वर्णन करते हुए कहा बेटा! जिस भी काल में दार्शनिकों का समूह विराजमान होता है और अपनी उड़ान उड़ना प्रारम्भ करते हैं। एक मानो देखो, ये उड़ान उड़ रहा है, कि ये जो संसार है, ये एक प्रकार का कल्पवृक्ष है। यहां मानव को कल्पना मात्र से ही वस्तु प्राप्त हो जाती है। द्वितीय मानव कहता है कि एक–एक परमाणु एक–दूसरे से संबंधित है, एक–दूसरे को सुगन्धि युक्त बना रहा है। एक–दूसरे से एक सूत्र में पिरोये हुए है। तो विज्ञान की आभा पर, वैज्ञानिकों ने इस संसार को विज्ञानशाला के रूप में परिणत किया। एक मानव ये उड़ान उड़ रहा है, कि ये जो संसार है, ये एक प्रकार की यज्ञशाला है। प्रत्येक प्राणी पुत्रियाँ याग करने के लिए आये हैं और याग में परिणत हो रहे है, परंतु एक मानव ये कल्पना कर रहा है कि यहां तो ब्रह्मा बनते हैं, अथवा आत्मवेत्ता, आत्मा की उड़ान उड़ते हैं। उदान प्राण, जब आत्मा को लेकर के, यहां से शरीर से गमन करता है तो चित्त का मण्डल उसके साथ जाता है। मेरे प्यारे! इस संसार को एक प्रकार की चित्रशाला के रूप में परिणत किया है। मेरे प्यारे! इस संसार को नाना रूपों से, नाना उड़ान उड़ने वालों ने कहा है।

परंतु जब मुनिवरो! देखो, ऋषि मुनियों के क्षेत्रों में विराजमान होते हैं अथवा उनके विचारों को विचारणीय क्षेत्र में ले जाते हैं, तो मेरे प्यारे! हमें तो ये प्रतीत होता है कि ये संसार तो अनन्तवत् माना है। जिस भी क्षेत्र में तुम जाना प्रारम्भ करोगे, वहीं अनन्तवत दृष्टिपात आयेगा। लोकों की गणना करने लगे तो वह गणना में नहीं आयेगा, आकाश गंगाओं को जानने लगोगे तो जाना नहीं जायेगा, परंतु मेरे पूज्यपाद गुरुदेव तो ये कहा करते थे, कि अरे, न जानने से कुछ जानना भी बहुत प्रियतम कहलाया गया है।

ब्रह्मवेत्ताओं की सभा

तो मेरे प्यारे! आओ, आज मैं तुम्हें ब्रह्मवेत्ताओं की सभा में ले जाना चाहता हूं, ब्रह्मवेत्ताओं की सभा में भिन्न–भिन्न प्रकार का विचार–विनिमय होता रहा है। मेरे प्यारे! ब्रह्मवेत्ता जो तपस्वी पुरुष होते हैं, उनके हृदयों में ईर्ष्या नहीं होती, उनके हृदयों में विडम्बना नहीं होती, उनके हृदय में सदैव एक रसता रहती है। वे जानते हैं, प्रत्येक प्राणी मात्र के हृदय में वे प्रवेश करके जानते हैं कि इसका जो संस्कार है, इसके जो प्रारब्ध हैं, उनके आधार से चित्त पर, वहीं पटल आते उसी के आधार पर प्राणी अपने कर्तव्य को करता चला जाता है। मेरे प्यारे! ऋषि की उड़ान, इस संबंध में बहुत ऊँची रही है। तो आज मैं बेटा! एक उड़ान उड़ने जा रहा हूं। आज तुम्हें मैं विज्ञान के क्षेत्र में नहीं ले जाना चाहता। मेरे प्यारे! आध्यात्मिकवाद में मानव सदैव परिणत होता रहता है मानव के हृदय में ये पिपासा स्वतः जागरूक रहती है, कि मैं आत्मवेत्ता बनूं। आत्मा के लिए उड़ान उड़ने के लिए तत्पर रहता है, आत्मा स्वयं इस मानव शरीर में पिपासी रहती है, भोजन के लिए लालाहित रहती है जैसे मानव शरीर के पालन–पोषण के लिए, अपने जीवन को सजातीय बनाता रहता है। शरीर के लिए नाना प्रकार के, आभूषणों में मानो संलग्न रहता है। इसी प्रकार हे मानव! तेरी आत्मा अंतर्हृदय में विराजमान है अरे, उसको भी तो भोजन देने का प्रयत्न करो, यदि आत्मा को भोजन प्राप्त नहीं होगा, तो ये जीवन निस्सार होता चला जाएगा, इस जीवन में कोई सार्थकता प्रतीत नहीं होती, निस्सार, नीरसता आ जाती है, जीवन में।

तो मेरे प्यारे! देखो, आज मैं तुम्हें ब्रह्मवेत्ताओं की सभा में, जहां ब्रह्म विचार होता था, हमारे यहां परम्परागतो से ही नाना प्रकार की उपाधियों में ये संसार परिणत रहा है। संसार में जितने विषय है उतनी उपाधियां हैं। हमारे यहां सर्वोच्च जो उपाधि मानी जाती है वह ब्रह्मवेत्ताओं की मानी जाती है। मेरे प्यारे! एक समय, नाना ऋषि मुनि ब्रह्मवेत्ताओं का समूह एकत्रित हुआ। इसमें बेटा! महर्षि प्रवाहण, महर्षि शिलक, महर्षि दालम्य, महर्षि दद्दड, महर्षि मुदगल, महर्षि शाण्डिल्य, महर्षि रेवक, महर्षि आस्काचार्य, महर्षि श्वेतकेतु, महर्षि सम्भावन्त्री, महर्षि दधीचि, महर्षि सोमकेतु। मुनिवरो! देखो, उस काल में अश्विनीकुमार भी ब्रह्मवेत्ताओं की सभा में प्रतिष्ठित कहलाए जाते थे। मेरे प्यारे! महर्षि सोमभानु और भी नाना ऋषि विराजमान थे। परंतु वह सभा, कजली वनों में मानो देखो, आनन्दित होने के लिए, अपना निर्णय, अपना विचारार्थ करने के लिए एकत्रित हुई। उस सभा में ये निर्णायक होने वाला था, कि हम में कौन ब्रह्मवेत्ता बने।

तो मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मवेत्ता की उपाधि प्रदान करने के लिए, ये सर्वत्र ही ब्रह्मवेत्ता थे, क्योंकि प्रवाहण और शिलक इनका तो जन्मसिद्ध अधिकार था कि वे ब्रह्म की उड़ान उड़ते रहते थे। मेरे प्यारे! देखो, माता ने पांच वर्ष की आयु में ही इनको ब्रह्मवेत्ता की उपाधि प्रदान कर दी थी। ये तो ऐसे महान ब्रह्मवेत्ता थे, परंतु जब ब्रह्मवेत्ताओं का समूह एकत्रित हुआ तो ब्रह्मवेत्ताओं में ही निर्णय हुआ कि कौन ब्रह्मवेत्ता है? तो मुनिवरो! देखो, ये सभा विराजमान हुई, इस सभा में मेरे प्यारे! कुछ राष्ट्रीय भी, उस काल में जो राष्ट्र था, राष्ट्र के भी कुछ राष्ट्रीय पुरुष विराजमान होते थे, दार्शनिक की सभा हुई, तो मुनिवरो! देखो, वे पांच महापुरुष कहलाते हैं। उनका नाम हमारे यहां पुत्रों ''कृत'' कहलाया जाता है।

हमारे यहां वशिष्ठ मुनि के संबंध में, ये कहा जाता है कि इनकी मां का नाम अप्सरा था। उस माता के पांच पति थे, और पांचों पतियों से न प्रतीति, मानो किसके पुत्र कहलाये गये। तो ऐसा महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज के संबंध में कहा जाता है। परंतु प्रायः वाक् तो बहुत प्रिय, वेद में एक मंत्र आता है, वशिष्ठां ब्रहे व्रतं बृहि व्रत्ततं देवत्यां अप्सरो वृद्धयां देवाः पंच जाया धृत रुद्राः ये वेद का मंत्र कहलाता है, वेद का ऋषि ये कहता है, उड़ान उड़ता हुआ, कि राष्ट्र का जब निर्माण हो, तो राष्ट्र के निर्माण में मानो देखो, एक अप्सरा, नामक एक वृत्त होता है, विद्या है, उसके पांच पति कहलाए जाते हैं। क्योंकि राष्ट्र की जो पद्धति है, उस पद्धति का नाम अप्सरा कहलाया जाता है। मेरे प्यारे! और उसके पांच पति हैं क्योंकि उसके पांच पति, पांच ब्रहे मानो उस पद्धति का निर्माण करते हैं। निर्माण करके मानो देखो, उनमें से एक वशिष्ठता को जन्म दिया जाता है। वशिष्ठ को चुनौती प्रदान की जाती है। वह वशिष्ठ कहलाता है।

तो इसी प्रकार हमारे यहां ब्रह्मवेत्ताओं की सभा में राजा को भी वशिष्ठ कहते हैं। क्योंकि राजा भी उन पांचों के द्वारा देखो, जो पद्धति है उसके आधार से उसका जन्म होता है। वह नियमावली बन जाती है। इसी प्रकार हमारे यहां परम्परागतों ये भी माना गया है, कि वशिष्ठां ब्रह्मवेत्तां नस्ते हमारे यहां त्रेता काल में एक पद्धति मानी गई। जिसको हमें ब्रह्मवेत्ता की उपाधि प्रदान करते हैं उसको भी वशिष्ठ कहा जाता है। तो ये वशिष्ठ उपाधि सृष्टि के आदि से प्रारम्भ रही।

वशिष्ठ उपाधि का प्रारम्भ

मानो देखो, इसको आदि ब्रह्मा ने, आदि ब्रह्मा के पुत्र का नाम अथर्वा था, और ब्रह्मा जी के आश्रम में बेटा! देखो, चार ब्रह्मचारी भी थे, जो शिक्षा का अध्ययन करते थे। पठन पाठन का कार्य करते थे। तो उस समय मानो देखो, वशिष्ठता का निर्माण हुआ। तो सबसे प्रथम वशिष्ठ उपाधि वहां से प्रारम्भ हुई। मेरे प्यारे! देखो, वशिष्ठता का अभिप्रायः ये कि ब्रह्मवेत्ताओं का समूह विराजमान होता और ब्रह्मवेत्ताओं में जो महान ब्रह्मवेत्ता, उसको ब्रह्म की उपाधि प्रदान की जाती। तो मेरे प्यारे! महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज, त्रेता के काल में भी कहा जाता है। पुरातन काल में, मेरे प्यारे! अयोध्या का जब से निर्माण हुआ, उसी काल से वशिष्ठ उपाधि प्रारम्भ रही। तो ऐसा मुझे स्मरण आता रहता है पुत्रों! कि जिस समय इस अयोध्या का निर्माण हुआ, अयोध्या नगरी का निर्माण करने वाले सबसे प्रथम भगवान मनु थे। और भगवान मनु जिस समय देखो यहां विश्राम करते थे तो इसके तट पर, कुछ ही दूरी पर समुद्र का वास रहता था। आधुनिक काल का तो मुझे प्रतीत नहीं, कि समुद्र कहां ? परंतु भगवान मनु के काल में, अयोध्या के निकट ही समुद्र की तरंगें मानी जाती है, परंतु देखो, जो साहित्य कहता है, जो स्मरण शक्तियों से भी प्रतीत हुआ है। परंतु भगवान मनु ने सबसे प्रथम अयोध्या का निर्माण किया था। उस अयोध्या के निर्माण में मेरे प्यारे! देखो, नाना मनु वंशलज हुए, नाना अथर्वा गोत्रीय हुए, नाना दद्दड गोत्रीय हुए, क्योंकि हमारे यहां क्षत्रिय का जो निकास माना वह दद्दड गोत्रीय से माना है। क्योंकि दद्दड गोत्रीय का जो वंशलज था वह नाना रूपों में परिणत रहा क्षत्रिय का निकास वहीं से प्रारम्भ हुआ। उसके पश्चात् आगे अग्रणीय बनकर के इस ही शासन में नाना गोत्रीय बने और गोत्र बनकर के इसका ओर भी निकास हुआ।

तो बेटा! मैं उन सारे वाक्यों में जाना नहीं चाहता हूं। ये तो भयंकर वन है। मैं ऋषि मुनियों के गोत्रों में चला गया। विचार–विनिमय में ये कि हमारे यहां जो ये ऋषि एकत्रित हुए, इन ऋषियों की सभा में, मेरे प्यारे! वशिष्ठ का निर्माण करना था, वशिष्ठ का निर्वाचन करना था। तो वशिष्ठ मुनि का निर्वाचन किया। वशिष्ठ मुनिवरो! देखो, उसे कहा जाता है जो ब्रह्म वेत्ताओं में अग्रणीय हों। जिसके द्वारा न मान हो न अपमान हो। मेरे प्यारे! जिसे मृत्यु का भय न हो। मानो जिसे किसी प्राणी की मृत्यु आ जाये उसे उसका भी मोह न हो। तो मेरे प्यारे! ये महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज का निर्वाचन हुआ, और ब्रह्मवेत्ताओं ने इसका निर्वाचन किया। जो एक उपाधि मानी जाती है।

तो मेरे प्यारे! देखो ये अपने आश्रम में आनन्दयुक्त रहते थे। विश्राम करते थे। परंतु ब्रह्म का चिंतन होता रहता। महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज उनकी पत्नी अरुन्धती उनके द्वार पर रहती। सदैव दोनों का विचार–विनिमय होता, चिंतन होता रहता। रात्रि समय और दिवस काल में, ब्रह्मचारी गण अध्ययन करते। जब अध्ययन करते थे तो मेरे प्यारे! बड़े आनन्दपूर्वक आश्रम का संचार रूप से कार्य हो रहा था। उसकी कार्यवाही दर्शन के आधार पर, शास्त्रार्थ भी होता, विचार–विनिमय में भी होता। नाना ब्रह्मचारी ब्रह्मवेत्ता बनने के लिए आश्रम में प्रवेश करते ?

तो मुनिवरो! माता अरुन्धती भी ब्रह्मचारियों को शिक्षा देती। अपने जीवन के कुछ अनुभव भी प्रकट किया करती, कुछ दर्शनों की चर्चायें होती, कुछ मानो विज्ञान की उड़ानें उड़ते रहते। क्योंकि माता अरुन्धती की उड़ान बहुत ऊँची रही है विज्ञान में, मुझे स्मरण है माता अरुन्धती जब ऊँची उड़ान उड़ती थी विज्ञान की, तो मुनिवरो! उड़ान उड़ती हुई वह मेरे प्यारे! अरुन्धती मण्डल तक चली जाती। क्योंकि हमारे यहां सप्त ऋषि मण्डलों के निकट ही एक अरुन्धती मण्डल है। एक वशिष्ठ मण्डल कहलाता है। तो मेरे प्यारे! वैज्ञानिकों का ये कथन है देखो, वशिष्ठ मुनि की विज्ञानशाला में ब्रह्मचारी रोहिणीवृत्त केतु और माता अरुन्धती का ये प्रयास रहता कि हम लोकों की कैसे यात्रा कर सकते हैं? तो मुनिवरो! देखो, माता अरुन्धती सदैव चिन्तन भी करती और चिन्तन के साथ उड़ान उड़ना, विचारों की उड़ान उड़ना, प्रारम्भ करती, उसके पश्चात् उन्होंने तत्त्वों की उड़ान उड़ना प्रारम्भ किया और ये विचारा कि अरुन्धती मण्डल में कौन–सा तत्व प्रधान है जब ये निश्चिय हो गया तो उन्होंने उसी तत्व को लेकर के, उन्हीं पदार्थों को लेकर के एक यान का निर्माण किया। उस यान का नाम था अरुणकृति प्रातं ब्रहि अस्तुतायन मेरे प्यारे! जब उसकी उड़ान उड़ने लगते तो मानो देखो, अरुन्धती, उस यान में विराजमान होकर, वशिष्ठ मुनि से बोली कि प्रभु! मैं अन्तरिक्ष की यात्रा को जा रही हूं। वशिष्ठ कहते–हे देवी! ये तो बहुत ही शोभनीय विचार है, शोभनीय तुम्हारा कर्त्तव्य है। यदि तुम उड़ान उड़ना चाहती हो तो मेरा जीवन तो सफलता को प्राप्त हो रहा है।

तो मुनिवरो! देखो माता अरुन्धती और ब्रह्मचारी दोनों विराजमान हो करके बेटा! देखो, अन्तरिक्ष की, उड़ान उड़ते हैं चंद्रमा से पार होते हुए मानो वह सप्तऋषि मण्डल में प्रवेश करते। मेरे प्यारे! अरुन्धती मण्डल तक प्रायः उनकी उड़ान रही। मेरे प्यारे! हमारे यहां विज्ञान और योग दोनों का समन्वय होता रहा है। दोनों का आंतरिक जगत में मेरे प्यारे! संघर्ष होता रहा। परंतु अन्तिम विचार ये कि ये जो आध्यात्मिक विज्ञान है और भौतिक विज्ञान दोनों विज्ञान मानव के हृदय से उत्पन्न होते हैं। मानव के मस्तिष्क से उत्पन्न होते हैं। परंतु दोनों की उड़ान बेटा! भिन्न–भिन्न मानी गई हैं। मार्ग भिन्न–भिन्न है। परंतु एक स्थली पर तो मार्ग एकोकी है प्रारम्भ का मार्ग दोनों का एक है, परंतु जिस समय अन्तिम चरम सीमा पर मानव चला जाता है तो विज्ञान निचले स्थल पर रह जाता है, और आध्यात्मिकवाद ऊर्ध्वा गति को चला जाता है।

महर्षि वशिष्ठ का आश्रम

मेरे प्यारे! वह अरुन्धती, अरुन्धती मण्डल तक जाती, परंतु जब वशिष्ठ योग की उड़ान उड़ते हैं तो ये विज्ञान नीचे होकर के मेरे प्यारे! सर्वत्र आकाश गंगा उनके मस्तिष्क में दृष्टिपात हो जाती है। तो विचार यह कि योग की कितनी विशेषता अपने स्थान में मानी जाती है। तो आज मैं बेटा! उन विचारों में विशेष जाना नहीं जाता हूं। विचार विनिमय में क्या मेरे प्यारे! देखो, उनके आश्रम में, विज्ञान के भिन्न–भिन्न प्रकार के स्थान थे। एक स्थान में मानो देखो, लोक लोकान्तरों की उड़ान उड़ने वाले यानों का निर्माण होता, एक स्थान में ब्रह्मवेत्ताओं की सभा में ब्रह्म विचार होता, एक स्थली पर मेरे प्यारे! भुवन में याग होता, याग भी उसी प्रकार का जो परमाणुओं पर हम मानो अनुसंधान कर सके। उसके पश्चात् एक चित्रशाला थी, जिसमें नाना प्रकार की चित्रवलियों का निर्माण किया जाता था। लोकों के कैसे चित्र आ सकते हैं? वाणी के शब्दों के कैसे चित्र आ सकते हैं? तरंगों के कैसे चित्र आएंगे? मानो देखो, हम कोई भी कर्म करते हैं शब्दों का श्वांस का कैसे चित्र आएगा? तो ये सर्वत्र मानो एक स्थली पर चित्रावलियों का निर्माण होता। ब्रह्मचारीजन सर्वत्र क्रिया करते। वशिष्ठ मुनि महाराज मानो इन विद्या में, दोनों पति पत्नी पारंगत थे।

स्वर्ग–गृह

तो विचार मेरे प्यारे! भिन्न–भिन्न प्रकार की उड़ान उड़ना ये मानव का कर्तव्य है। और मानो देखो, मानवीयता को जानता हुआ ऊँची उड़ान उड़ सकता है। तो आज मैं बेटा! विज्ञान के क्षेत्र में विशेष जाना नहीं चाहता हूं। विचार–विनिमय में क्या, मेरे प्यारे! देखो, ये प्रातः सायं, सन्धि काल में पति पत्नी विराजमान हो करके, मेरे प्यारे! आश्रम को स्वर्ग बनाने के लिए अपना विचार–विनिमय में करते। हम किसी भी गृह को स्वर्ग बनाना चाहते हैं, आश्रम को स्वर्ग बनाना चाहते हैं। तो उस काल में बन सकते हैं जब हमारे विचारों में तथ्य होगा, सात्विकता होगी, महानता होगी, यौगिकता होगी मानो देखो, उसमें एक ऊँची उड़ान होगी। तो मेरे प्यारे! पति पत्नी सायंकाल को विराजमान होते तो ब्रह्म की चर्चाएं होतीं, प्रभु की प्रतिभा पर चिंतन प्रारम्भ होता रहता था।

तो मेरे प्यारे! देखो, उसी काल में एक समय चिंतन प्रारम्भ था परंतु कुछ समय के पश्चात् महाराजा विश्वामित्र अपनी कुछ सेना के सहित, मेरे प्यारे! उन्हें रात्रि छा गयी और उन्होंने उस आश्रम में प्रवेश किया। महर्षि वशिष्ठ ने राजा की सेना और राजा का स्वागत किया। स्वागत करके मेरे प्यारे! उन्होंने उन्हें उचित स्थान प्रदान किया। आइये, भगवन पधारो! विराजमान होइये। ऋषि बोले कि महाराज! क्या पान करोगे तुम? ऐसा कहा जाता है उनके आश्रम में कामधेनु गऊ रहती थीं। वह कामधेनु महाराजा इन्द्र से प्राप्त हुईं। तो उसके दुग्ध का आहार कराया राजा को, तो सायं काल का समय था, राजा प्रसन्न हो गये।

कामधेनु

कामधेनु के हमारे वैदिक साहित्य में नाना प्रकार के पर्यायवाची माने जाते हैं। कामधेनु नाम पशु को भी कहा जाता है, जो दुग्ध देने वाला पशु। कामधेनु पृथ्वी को भी कहा जाता है, जो भी मानव कामना करता है ये माता वसुन्धरा वही प्रदान कर देती। नाना प्रकार के व्यंजन दे देती है, नाना प्रकार की वनस्पतियां इसी के द्वार से उत्पन्न होती, तो इसको कामधेनु कहते। परंतु कामधेनु नाम मेरे प्यारे! बुद्धि का भी है, सरस्वती मानो ज्ञान युक्ति जो बुद्धि होती है उसका नाम भी कामधेनु है। और कामधेनु नाम प्रजा का भी है, मेरे प्यारे! देखो, साधु महात्मा आज्ञा देते हैं। ऋषि आज्ञा देते हैं अपनी प्रजा से हे प्रजाओं! मेरे मित्रो! कोई वस्तु चाहते तो प्रजा ऐसे लाती है जैसे मानो वर्षा काल में नाना व्यंजन करने वाली पृथ्वी से नाना वनस्पतियां उत्पन्न होती। तो प्रजा को भी कामधेनु कहते हैं। आज मैं पुत्र! इनकी विवेचना तो करने तो नहीं जा रहा हूं। कामधेनु का अभिप्रायः यह है कि जो मानव कामना चाहता है वह मानो पूर्ण कर देती है।

तो उसका नाम कामधेनु है। परंतु यहां प्रकरण एक पशु का भी आता है; प्रजा का भी आता है। तो राजा विश्वामित्र के हृदय में जब कामधेनु के दुग्ध को आहार किया, तो विचार आया कि ऐसी कामधेनु जो यहां सर्वत्रता को प्रदान कर रही है। ऐसी कामधेनु मेरे राष्ट्र में होनी चाहिये। महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज से, राजा ने कहा हे ऋषिवर! ये कामधेनु मेरे राष्ट्र में प्रवेश करेगी। ऋषि कहते हैं ये देवताओं की धरोहर है राजन! इसको मैं प्रदान नहीं करूंगा। क्योंकि जो देवताओं की धरोहर है उसे मैं कैसे प्रदान कर सकता हूं?

राजा ने कहा इस कामधेनु को मैं अवश्य अपने राष्ट्र में प्रवेश कराऊँगा। अपने–अपने कक्ष में विश्राम जा किया, प्रातःकाल होते ही राजा ने अपने सेना नायकों को कहा कि कामधेनु को अपने राष्ट्र में गमन कराओ। मेरे प्यारे! देखो, ऋषि कहता है–राजन! ऐसा न कीजिए, क्योंकि ये देवताओं की धरोहर है।

परंतु राजा कहां स्वीकार करने वाला था। कामधेनु को जब मेरे प्यारे! गमन कराने लगे, तो माता अरुन्धती कहती है—हे कामधेनु! तू देवताओं की धरोहर है हमारे द्वार, से तुम हमारी इच्छा से, नहीं जा रही हो, यदि तुम्हारी स्वतः इच्छा हो तो राष्ट्र गृह में प्रवेश कर सकती हो। परंतु हमारी इच्छा नहीं।

राष्ट्रीय नियमावली

मेरे प्यारे! ब्रह्मवेत्ता का आत्मिक बल कितना वशिष्ठ होता है। उस कामधेनु पशु ने मेरे प्यारे! अपने सिंहनी के स्वरूप को धारण कर लिया। अपने तीखें सींगों से सेना को नष्ट कर दिया। मेरे प्यारे! मुझे वो काल स्मरण है, आधुनिकाल का तो प्रतीत नहीं, राजाओं की एक नियमावली होती है, कि कामधेनु पशु को नष्ट नहीं करना है। ये राष्ट्र की सम्पदा है, प्रजा की सम्पदा है। तो मुनिवरों! देखो, राष्ट्रीय एक नियमावली बनी हुई थी, कि इस पर कोई अस्त्रों—शस्त्रों का प्रहार नहीं कर सकता था। इसका पूजन किया जाता है। पूजन का अभिप्राय उपयोग में लाया जाए इस पशु को। मेरे प्यारे! देखो, राजा ने अपनी सेनापतियों से कहा—त्याग दो मानो देखो, वहां से गमन किया और कामधेनु को त्याग दिया। उनका साहस नहीं हुआ कि कामधेनु को ले जाए। मेरे प्यारे! देखो, महाराजा विश्वामित्र जब अपने राष्ट्र में पहुंचे, तो विचार—विनिमय में करने लगे कि मानव को ऐसा तपस्वी बनना चाहिये, जिस मानव की रक्षा करने के लिए पशु हो, पशु भी जिनकी रक्षा कर सकते हो।

एक स्थान में राष्ट्र, एक स्थान में पशु है, हम उसको विजय नहीं कर सके।

मेरे प्यारे! देखो, राजा ने ये विचारा कि मुझे भी तप करना है। तो गायत्री छन्दों के पठन—पाठन की नियमावली का उन्होंने निर्माण किया। नियमावली जब बन गई कि अब मुझे तपस्या करनी है। तो मेरे प्यारे! वो करोड़ों गायत्री छन्दों में युक्त होकर के, मानसिक जपन प्रारम्भ हो गया। मेरे प्यारे! मनसा वाचा कर्मणा तीनों ही क्रियाओं में मुनिवरो! देखो, गायत्री की ध्वनि प्रारम्भ हुई। महान तपस्वी बन गये। अब विचारा कि अब मैं महर्षि वशिष्ठ के द्वार पर पहुँचूंगा और वे मुझे ब्रह्मवेत्ता की उपाधि प्रदान करेंगे। क्योंकि मैं ब्रह्मवेत्ता बन गया है।

मेरे प्यारे! जब वे अपने राष्ट्र से आए तो उन्होंने अश्व पर अश्वस्थ होते हुए, अस्त्रों शस्त्रों से युक्त होकर गमन किया। वे कजली वनों में आए, जहां वशिष्ठ और अरुन्धती ब्रह्मचारियों को शिक्षा प्रदान कर रहे थे। जब उनके द्वार पर पहुंचे तो वशिष्ठ ने उन्हें मन ही मन में प्रणाम करके ये कहा, कि आओ, राजर्षि जी! विराजो। अब राजर्षि उच्चारण करते ही उनके शरीर की क्रोधाग्नि जागरुक हो गई, और ये कहा हे ब्राह्मण! तुम्हें अभिमान है।

तो कहा जाता है विश्वामित्र ने उनके सर्वत्र ब्रह्मचारियों को मृत्युदण्ड देना प्रारम्भ कर दिया। मेरे प्यारे! जब मानव की क्रोधाग्नि जागृत होती है और शक्ति होती है तो वह ऐसे कार्य कर देता है जो मानो देखो, शोभनीय नहीं होते हैं। उन्होंने जब आश्रम से गमन कर, कुछ ब्रह्मचारियों को विनाश के मार्ग पर पहुंचा, अपने राष्ट्र में पहुंचे तो ये विचारा कि मैंने ये क्या कर दिया, वह प्रतिष्ठित राजा थे। विचारा तो ये उन्हें आह्वान हुआ कि मेरा तो सात जन्मों का पुण्य समाप्त हो गया। मेरे प्यारे! सात—सात जन्मों का पुण्य ऋषियों का समाप्त हो जाता। पुनः प्रभु की गोद में पहुंचे, तपस्या करने लगे। मां गायत्री की याचना करने लगे कहा देवी! तुम मुझे क्षमा कर, मेरी क्रोधाग्नि को शांत कर। मेरे प्यारे! उन्होंने पुनः गायत्राणी छंदों का पठन पाठन प्रारम्भ किया। शेष अनुपलब्ध **दिनांक—05—11—75 नूरमहल, पंजाब**

याग की प्रभा—दिनांक—01—12—85

जीते रहो,

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति कुछ मनोहर वेद मंत्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व में जिन वेद मंत्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहां, परम्परागतों से ही उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में उस मेरे देव परमपिता परमात्मा की महती का वर्णन किया जाता है क्योंकि वे परमपिता परमात्मा महिमावादी है जितना भी ये जड़ जगत् अथवा चेतन्य जगत् हमें दृष्टिपात आ रहा है इस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में प्रायः वो मेरा देव दृष्टिपात आ रहा है क्योंकि जितना भी ये ब्रह्माण्ड नाना रूपों में, ये जगत् अपने में निहित हो रहा है। तो मानो ऐसा हमें दृष्टिपात आ रहा है जैसे हमारा मानवीय क्षेत्र और मानवीयता महान देव की आभा में निहित हो रहा है क्योंकि प्रत्येक वेद मंत्र उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है।

मन्त्र में ब्रह्माण्ड

जिस प्रकार माता का पुत्र, माता की गाथा गा रहा है, जिस प्रकार ये पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है उसी प्रकार प्रत्येक वेद मंत्र उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है। जिस भी वेद मंत्र के ऊपर हम अनुसंधान प्रारम्भ करने लगते हैं तो मानो उसी वेद मंत्र में एक अनन्तमयी ब्रह्माण्ड हमारे समीप आ जाता है। तो मुनिवरो! प्रत्येक वेद मंत्र जैसे एक माला होती है और उस माला में भिन्न—भिन्न प्रकार के मनके होते हैं परंतु उनमें एक सूत्र जब पिरोया जाता है तो माला बन जाती है। इसी प्रकार ये ब्रह्माण्ड एक माला के सदृश है। जैसे एक माला और मनके दोनों का समन्वय होता है इसी प्रकार ये जो नाना प्रकार के लोक—लोकान्तरों वाला जो ब्रह्माण्ड हमें दृष्टिपात आ रहा है ये देखो, जैसे एक माला मनकों में सूत्र होता है और ये ब्रह्माण्ड एक माला में निहित हो रहा है।

मेरे प्यारे! जब मैं एक दूसरे की आभा में निहित होने की चर्चा करता हूं तो प्रायः हमें ऐसा दृष्टिपात होने लगता है कि ये कैसा अनुपम जगत है, जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से बेटा! अन्वेषण अथवा अनुसंधान करता रहा है। मानो देखो, जैसे माता का पुत्र है वह भी एक माला और धागे दोनों का समन्वय है। मानो मनके और सूत्र दोनों का समन्वय रहता है। मैंने बहुत पुरातन काल में निर्णय देते हुए कहा था—कि एक बिंदु है, बिंदु में ही एक शिशु है। शिशु का जब माता के गर्भस्थल में प्रवेश हो जाता है तो बेटा! जैसे एक सूत्र में मनके पिरोने से माला बन जाती है इसी प्रकार माता के गर्भस्थल में शिशु के प्रवेश होने मात्र से सर्वत्र देवता अपनी—अपनी गाथा वर्णन करने लगते हैं, अथवा अपना—अपना गुण उसमें गुणित करने लगते हैं। जैसे बेटा! देखो, चंद्रमा अमृत देता है। सूर्य प्रकाश देता है और अग्नि उसे ऊष्ण बना रही है और मुनिवरों! देखो, जैसे अग्नि ऊष्ण बनाती है, वायु प्राण देती है और अन्तरिक्ष आकाश देता है। मेरे प्यारे! देखो, पृथ्वी गुरुत्व देती है आपोमयी ज्योति बन करके मेरे पुत्रों! देखो, पालना हो रही है। मेरी भोली माता को कोई ज्ञान नहीं है, मानो ये क्या हो रहा है। तो मुनिवरो! वेद का मंत्र कहता है कि जैसे माता का पुत्र माता की गाथा गा रहा है। हे माता! तू वसुन्धरा है और तू वसुन्धरा बन करके अपने में हमें परिणत करा रही है।

प्रभु की रचना

आओ मेरे प्यारे! मैं, इस संबंध में केवल इतना, कि माता के गर्भस्थल से जब हम जैसे पुत्र पृथक् होते हैं। तो मुनिवरो! देखो, इस बाह्य जगत् में, पृथ्वी माता की गोद में आ जाते हैं। ये पृथ्वी माता कैसी वसुन्धरा है। नाना प्रकार के खाद् व खनिज पदार्थों का मानो इसी के द्वार से जन्म होता है और जब खाद्, खनिज पदार्थ मेरे पुत्रों! देखो, इसके ऊपर अन्वेषण करते हैं। इसी से वैधराज और वैज्ञानिक बन जाते हैं। जब माता वसुन्धरा के ऊपर हम विचार विनिमय करते हैं तो कहीं बेटा! नाना प्रकार के खाद्यान्नों की उत्पत्ति हो रही है। कहीं नाना प्रकार के खनिज पदार्थों का जन्म हो रहा है। परमाणु को आदान प्रदान किया जा रहा है, वे परमाणु एक दूसरे में निहित हो रहे हैं। मेरे प्यारे! प्रभु की कितनी महान ये रचना है जिस रचना के ऊपर परम्परागतों से बेटा! ऋषि मुनि अध्ययन करते रहे हें। और उनकी अध्ययन करने की शैली बड़ी विचित्र रही है। और वे कहते हैं सम्भवाः ब्रहे वाचन्नमः मानो देखो! वह जो मेरे अस्तुतां ब्रह्मी है। हे माता! तू वसुन्धरा बन करके मानो जब वैज्ञानिक तेरे गर्भ में प्रवेश करता है और तुझे वसुन्धरा स्वीकार करता है तो मानो तेरे गर्भ से नाना प्रकार के खाद्यान्न परमाणुओं को, खाद्यान्न खनिजों को उस पृथ्वी के गृह में बेटा! वैज्ञानिक प्रवेश कर जाता है। कहीं परमाणुओं को अग्नि के रूपों में बेटा! आदान प्रदान किया जा रहा है। कहीं स्वर्ण—परमाणुओं को अभ्योदय किया जा रहा है। इसी प्रकार मेरे पुत्रों! देखो, वह अग्नि का भण्डार मानो जल को शक्तिशाली बनाया जा रहा है अपनी जीवनसत्ता के द्वारा वही जल बेटा! देखो, आपामेयी—तप करके अग्नि में तप करके मुनिवरो! वहीं वाहनों के क्रियाकलापों में रत होने लगता है।

वसुन्धरा का गर्भ

तो विचार, मुनिवरों! देखो, माता वसुन्धरा के गर्भ में क्या नहीं है। हे माता! तू वसुन्धरा है। सबसे प्रथम तो माता प्रभु चेतन्य देव को कहते हैं। जो संस्कारों का नियंता, निर्माण करने वाला है। द्वितीय मानो देखो, उस माता का नाम वसुन्धरा है, जिसके गर्भस्थल में बेटा! हम जैसे पुत्र पनपते रहते हैं और तृतीय मानो देखो, पृथ्वी माता वसुन्धरा कहलाती है, जिसके गर्भ में आ करके मानो हम बस रहे हैं। इसी प्रकार मुनिवरो! देखो, एक दूसरे में प्राणी वशीभूत हो रहा है। वाह रे प्रभु, तेरी ये कैसी विचित्र माला है। इस माला के ऊपर हम विचार विनिमय करते रहते हैं। मुझे बेटा! महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज की चर्चाएं स्मरण आती हैं। मानो कैसी सुसज्जित माला है। बहुत पुरातन काल हुआ, मानो देखो, वैदिक साहित्य में एक याग का वर्णन आया है। हमारे यहां भिन्न–भिन्न प्रकार के याग होते हैं। एक याग हमारे यहां अश्वमेघ याग है। जब राजा और प्रजा मिल करके उस याग का क्रियाकलाप करते हैं। एक याग वह होता है जो अग्निष्टोम याग, वाजपेयी यागों में परिणत रहता है। एक याग का नाम बेटा! कन्या याग है।

कन्या याग

मैं कन्या याग की चर्चाएं करता रहता हूं। तो मानो मुझे बड़ा विचित्र, एक ब्रह्माण्ड हमारे समीप आने लगता है। मेरे प्यारे! हमारे यहां वैदिक आचार्यों ने, वैदिक ऋषियों ने बेटा! कन्या याग का वर्णन करते हुए कहा है कि कन्या, प्रथम तो देव लोक में रहती है, उसके पश्चात् वो पितरलोक में रहती है और जब पितरलोक से उपराम होकर के वह पतिलोक को प्राप्त हो करके वह याग करती है तो मानो उसे याग करने का अधिकार प्राप्त होता है। ऐसा बेटा! वैदिक साहित्य में आया है। इसके ऊपर बेटा! ऋषि मुनियों के मध्य बहुत घनिष्ठता से अध्ययन हुआ। याज्ञवल्क्य मुनि महाराज इस संबंध में विवेचना करते हुए कहते हैं कि सबसे प्रथम देवलोक वह है जब संसार में कन्या का जन्म होता है। तो ये कन्या सबसे प्रथम देवलोक में रहती है। देवता इसकी रक्षा करते रहते हैं। मेरे प्यारे! जब देवलोक उपराम हो जाता है। तो वह देखो, पितरलोक को पहुंच जाती है। कन्या जब पितरलोक में जाती है तो पितर उसे शिक्षित बनाता है। पितर उसे महान बना देता है। मानो देखो, वह सुसज्जित हो करके पितरों के अंगरक्षकों में रहती है।

हमारे यहां पितर–नाम माता–पिता को भी कहा गया है। और पितर नाम आचार्यजनों का भी है। पितर उनको कहते हैं जो हमारी रक्षा करता है। पितर नाम परमपिता परमात्मा का भी है और पितर नाम मुनिवरों! देखो, यह जड़ देवता भी हमारे पितर रूप में रहते हैं। जैसे सूर्य, चंद्रमा, नाना नक्षत्र भी सब पितरों के रूप में ही मुनिवरों! देखो, गति करते रहते हैं। ये हमारे जीवन को महानता देते चले जाते हैं। सूर्य प्रकाश देता ही रहता है, चंद्रमा अमृत देता ही रहता है और ये वायु मानो देखो, अपने में बसाये रहती है। तो इसी प्रकार ये सब पितरजन कहलाते हैं।

मानो देखो, वास्तविक स्वरूप क्या, मैं बेटा! लोकी पितर की चर्चा कर रहा हूं। मानो देखो, माता पिता सब पितर कहलाते हैं। पितरों का अभिप्राय यह है कि वह हमारी रक्षा करते हैं, उसकी लालना, पालना पवित्र शिक्षा देना है यह उनका मानो क्रिया में रत रहना चाहिए। मेरे पुत्रों! देखो, जब वह कन्या युवावस्था को प्राप्त हो करके पति कुलेभ्योः नमः वेद का एक शब्द है कुल्वब्रहा व्रातं देवो सम्भवाः कुलेभ्योः नमः मानो देखो, वह अपने कुल को प्राप्त होती है। वह पति के कुल को प्राप्त हो करके, वेद का ऋषि कहता है पुत्रों भवः ब्रह्मा वार्चो सर्वणं ब्रह्मे त्रासुस्ति रुद्रो का वाक् कहता है कि वहां वह पुत्र याग करने का अथवा संतान–याग करने का अधिकार होता है। हमारे आचार्यों ने, ऋषि मुनियों ने बेटा! देखों, संतान की उत्पत्ति को भी याग कहा है। उसे शिक्षा देना यह मानो वृत्ति कहलाता है।

माता मल्दालसा की आकांक्षा

मानो देखो, जैसे मुझे स्मरण आता है माता मल्दालसा का जीवन। माता मल्दालसा के जीवन में एक महानता रही है। मैंने बहुत पुरातन काल में वर्णन किया। माता मल्दालता मुनिवरो! आचार्य कुल में जब अध्ययन करती रहती थी, तो एक समय अध्ययन करते–करते, उस युवा काल में ''बाल्यां ब्रह्मे'' आचार्य मैं इस संसार में संतानों के जन्म के लिए नहीं हूं। मैं वेदाध्ययन करने के लिए हूं। तो मुनिवरो! देखो, ऋषि ने कहा–हे पुत्री! जैसी तुम्हारी इच्छा हो वैसा ही करो। मेरे प्यारे! अध्ययन चलता रहा, वेद में बेटा! जब नाना प्रकार के यागों का प्रकरण आया तो उसमें बेटा! सम्भोति एक याग का वर्णन आया। परंतु उसमें यह विचारा कि संतानोपार्जन करने में अपराध नहीं है। परंतु यह तो मेरा सौभाग्य होगा कि मैं एक को वेदपाठी या ब्रह्मवेत्ता बना सकूं। तो माता मल्दालता के हृदय में एक आकांक्षा का जन्म हुआ।

मेरे प्यारे! एक समय पूज्यपाद गुरुदेव के द्वारा, सायंकाल को अध्ययन कर रही थी। अध्ययन करते हुए उन्होंने कहा–कि प्रभु! मेरी इच्छा यह है कि मैं गृह में तो प्रवेश हो सकती हूं परंतु मेरी एक इच्छा है भगवन! कि पांच वर्ष तक बाल्य को मेरी शिक्षा रहनी चाहिए। माता मल्दालसा ने जब ये कहा तो ऋषि ने कहा–''पुत्री जैसा तुम्हारा संकल्प हो, वैसा ही हो।

मेरे प्यारे! जब कन्या युवा हो गई तो मुनिवरो! देखो, उस समय महाराजा मनु वंश में बेटा! व्रेतकेतु नाम के एक राजा थे। राजा व्रेतकेतु के पिता तो अपने पुत्र को राष्ट्र दे करके भयंकर वनों में तपस्या के लिए गए और बाल्य को राज्य दे दिया। तो वह भ्रमण करते हुए एक समय बेटा! देखो, कुंजुक ऋषि महाराज के द्वार पर आये। कुंजुक ऋषि आश्रम में, बाल्य–बालिका सब मानो अध्ययन करती थी। जब वह उनके विद्यालय में पहुंचे, तो विद्यालय में जाने के पश्चात् उन्होंने माता मल्दालसा का नामोकरण मानो देखो, बड़े ऊर्ध्वा से प्राप्त किया। उन्होंने कहा–हे ऋषिवर! मेरी ऐसी इच्छा है कि यह जो तुम्हारे आश्रम में बालिका अध्ययन करती हैं मानो यह ब्रह्मचारिणी मल्दालसा इसका संस्कार मेरे द्वार पर हो जाए। मैं अपने गृह को इससे सुशोभित करना चाहता हूं। मेरे प्यारे, देखो जब यह वाक् ऋषि ने प्राप्त किया। उन्होंने कहा–यह तो कन्या से प्राप्त करें। तो राजा ने कहा–''देवी! मेरी इच्छा यह है कि तुम मनु वंश को सुशोभित करो जिससे वह गृह पवित्र हो जाए।

मेरे प्यारे! देखो, माता मल्दालता ने कहा–''हे सम्भोत ब्रहे हे राजन! मेरी कुछ प्रतिज्ञाएं हैं। ''उन्होंने कहा–बोलो देवी! क्या प्रतिज्ञा है? उन्होंने कहा–''सबसे प्रथम मेरी प्रतिज्ञा यह है कि मैं यह चाहती हूं कि मेरे गर्भ से उत्पन्न होने वाले बालक को पांच वर्ष तक मेरे से शिक्षा हो। राजा ने कहा–''बहुत प्रिय देवी! ऐसा ही होगा।'' उन्होंने कहा–''एक मेरी प्रतिज्ञा यह है कि जब मेरे वाक्यों का उल्लंघन कर दिया जाएगा तो उस समय से बारह वर्ष के पश्चात् मैं अपने शरीर का अंत करूंगी। उन्होंने कहा–'ब्रह्मे व्रतेः कि मैं अप्रतां भूवोव्रत्ति सुप्रजाः देखो, संसार की किसी प्रकार की आभा में नहीं रह सकूंगी।

गर्भस्थ शिशु से वार्ता

मेरे प्यारे! राजा ने यह स्वीकार कर लिया। राजा और माता मल्दालता दोनों का संस्कार हो गया। मेरे प्यारे! देखो, वह गृह में, अयोध्या में जा पहुंचे। जिसका निर्माण सबसे प्रथम भगवान मनु ने किया था। भगवान मनु से ले करके नाना राजा हुए मनु वंश के (7,500) साढ़े सात हजार वंशों का राष्ट्र देखो, अयोध्या में रहा। तो मैं इस संबंध में नहीं जाना चाहता हूं। विचार केवल क्या है, बेटा! माता मल्दालता गृह में प्रवेश हो गई, राष्ट्र में ध्वनियां हुईं, कहीं वेद ध्वनि हुई, मुनिवरो! देखो, गृह अस्सुतां राजा का राष्ट्र प्रियता में परिणत हो गया। ऐसा मुझे बेटा! स्मरण है माता मल्दालता के गर्भ में जब आत्मा का प्रवेश हो गया, तो मुनिवरो! देखो, माता मल्दालता उस गर्भवाली आत्मा से बेटा! चर्चा करती थी, और वह चर्चा कैसे होती है? यह बड़ा विचित्र एक गहन विषय हैं। जब माता के गर्भ में शिशु है तो वह मानो एकांत मौन होकर के और अन्तर्ध्यान हो करके अपने बाह्य जगत् से प्रवृत्तियों को निवृत्त करके मुनिवरो! देखो, वह अन्तरात्मा ब्रह्मे वाचो देवः हिरण्यंस्थली वह आत्मा से चर्चा करती।

ज्ञान से साधना

हे आत्मा! तू महान है। हे आत्मा! तू पवित्र है। मानो मैं तेरे से यह जानना चाहती हूँ तू कौन आत्मा है? तो मेरे प्यारे! देखो उसको कतमोऽसि और यह कहती हैं कि हे आत्मं ब्रह्माः तू ब्रह्म है। हे आत्मा! तू ब्रह्मज्ञानी है। हे आत्मा! तू अखण्ड है। तू सदैव रहने वाली है। आत्मा तू मृत्यु को प्राप्त नहीं होती। हे आत्मा! तू शुद्ध है, तू बुद्धिमान है। शुद्ध, पवित्र है। इस प्रकार की विवेचना बेटा! माता प्रायः करती रहती है। जब यह बाह्य जगत् में बेटा! आत्मा शरीर को धारण करके आया तो उस समय वह कहती बुद्धो शुद्धो निरंनं ब्रह्माः। मेरे प्यारे! देखो, आत्मा को लोरियों का पान कराती रहती और इस प्रकार

की दर्शनों की शिक्षा देती रहती कि वेदमंत्र क्या कहता है कि यह संसार निस्सार है इसमें कोई सारता नहीं। मेरे प्यारे! देखो, माता का पांच वर्ष का बालक, ब्रह्मवेत्ता बन करके कहता है। हे माता! मुझे आज्ञा दीजिए, मैं ब्रह्मवेत्ता बन गया हूं, मैं तपस्या करने जा रहा हूं। क्योंकि ज्ञान के पश्चात् ही साधना की उपलब्धि होती है। मेरे प्यारे! वह बाल्य कहता है, हे माता! अब मुझे साधना की उपलब्धि हो गई है, मैं साधना में प्रवेश करना चाहता हूं। तो मुझे आज्ञा दो। माता मल्दालता प्रसन्न हो गईं। माता मल्दालता के अन्तर्हृदय में एक प्रसन्नता की तरंगें, कि आज मैं कितनी सौभाग्यशालिनी हूं मानो जो मेरे गर्भ से उत्पन्न होने वाला पुत्र, इस संसार के वैभव में, संसार के रजोगुणी, तमोगुणी पदार्थों में रत नहीं रह सका। मानो यह मेरी तपस्या का, अपने में हर्षध्वनि करती हुई, बेटा! माता मल्दालता कहती है हे सम्भवः पुत्रो भवः ब्रह्मे वाचन्नमे ब्रह्माः मेरे प्यारे! माता कहती है ''जाओ, बालक! ब्रह्मवेत्ता बनो।

मेरे प्यारे! देखो, तपस्या करने के लिए, ब्रह्मचारी तप करने भयंकर वन में चले गए। माता मल्दालता के तीन पुत्र, इसी प्रकार जिनका नामोकरण हुआ। एक का नाम बेटा! देखो, प्रवाहण, एक का नाम शिलक और तृतीय का दालभ्य। मेरे प्यारे! देखो, तीन पुत्रों का जब जन्म हो गया। उनका नामोकरण करके और उनको वेदाप्रतं ब्रह्मे मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मज्ञान के लिए भयंकर वन में चले गये। तो जब चतुर्थ आत्मा का गर्भ में प्रवेश हो गया, तो राजा ने विचारा कि मैं क्या करूंगा? अब राष्ट्र को कोई भोगने वाला नहीं रहेगा। तो एक समय राजा मल्दालता से बोले कि—''हे देवी! यह राष्ट्र कैसे चलेगा? उन्होंने कहा—''भगवन् अब के राजकुमार का जन्म होगा, परंतु मैं बारह वर्ष के पश्चात् अपना शरीरान्त करूंगी। मेरी तो प्रतिज्ञा है।

मेरे प्यारे! देखो, माता मल्दालता मौन हो गई, कोई शिक्षा नहीं दी उस आत्मा से कोई चर्चा नहीं की। राष्ट्रीय अन्न को ग्रहण करना और मानो देखो, वो बालक पनपता रहा। जब वह गर्भ से पृथक हुआ तो पालना भी राष्ट्रीय विचारों में होने लगी। तो मेरे प्यारे! देखो, जब वह बाल्य बारह वर्ष का हो गया तो मुनिवरो! उन्होंने प्रातःकालीन याग की रचना की और याग करने के पश्चात् गायत्री छंदों का पठन पाठन किया। और मुनिवरो! देखो, एक स्थली पर पुत्र है, तो द्वितीय पर राजा। उन्होंने कहा—हे राजन्! मेरा बारह वर्ष पूर्ण हो गया है। अब मैं अपने शरीर को त्याग रही हूं। भगवन्! मैं अपने लोक को जा रही हूं, जहां से मेरा आत्मा ब्रह्मे, मैं आत्मा हूं। मैं अपने लोक को जा रही हूं।

मेरे प्यारे! राजा ने कहा—''देवी हमारा क्या बनेगा? भगवन्! मैं नहीं जानती, मेरी तो प्रतिज्ञा है। मैंने तो वेद के अध्ययन के साथ जो प्रतिज्ञाएं की हैं वह मेरी देखो महान हैं। मुनिवरो! देखो, इसके साथ ''अप्रतं ब्रह्माः'' याग किया और गायत्री का जपन करके उन्होंने एक वसीयत अपने पुत्र को दी और वह कण्ठ में नियुक्त कर गई, उसमें दो ही शब्द हैं कि पुत्र यह संसार निस्सार है। उच्चारण कर रहा था नमस्तं ब्रह्माः हमारे आचार्यों का, वेद की जो पवित्र विद्या है वह मानव को उर्ध्वा में उपदेश दे रही है। आज हमारा जो विचार है, हे माता! तू वसुन्धरा है! तू वसुन्धरा बन करके, हमें अपने गर्भ स्थल में वसा रही है। जब तू वसा लेती है तो यह संसार महान बन जाता है। अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उद्‌गीत रूप में गायेंगे, उच्चारण करेंगे।

पूज्य महानन्द जी

ओ३म् श ना रथं ब्रह्माः दिव्यां गतप्रजां देवः।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मेरे भद्र ऋषि मण्डल। अभी अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ब्रह्म की चर्चा कर रहे थे, मानो ऐसे समन्वय की चर्चा कर रहे थे, जिस चर्चा को ऐसा हृदय अगम्य हो रहा था कि इन वाक्यों को हम श्रवण करते रहे। परंतु मेरे पूज्यपाद गुरुदेव जहां ये हमारी आकाशवाणी जा रही है आपको यह कैसे प्रतीत हुआ कि यह अमुख उड़ान व्रतव्रहे प्रेरणां भवि सम्भवो लोकां वृदि अस्तिः आपको मैंने एक प्रेरणा दी, परंतु उसी के साथ आपने एक वाक् प्रारम्भ किया। तो भगवन्! जहां यह आकाशवाणी जा रही है वहां एक मानो कुलेभ्यो नमः की, जो आपने चर्चा की देखो, कुलों का परिवर्तन होना, कन्या का वास, युवा पति कुलेभ्योः ब्रहां पितरलोकां भवितेब्रहा मेरे पूज्यपाद! ये बड़ा सौभाग्य है। आज देखो, यहां याग का आयोजन, जो स्वाति ब्रह्मा कुछ मंत्रों के द्वारा याग का प्रारम्भ हुआ। मेरा अन्तरात्मा बड़ा प्रसन्न हो रहा था कि ये जो समाज बहुत घृणित हो गया। महाभारत काल के पश्चात् में, मेरी पुत्रियों का इस संसार में तिरस्कार हुआ है वो प्रायः उस देवी का पूजन होना चाहिए।

वर्तमान काल

भगवान् मनु ने जो कहा है वो बड़ा विचित्र कहा है। यागों में मैं तो यजमान का सौभाग्य स्वीकार करता हूं, क्योंकि मेरी तो प्रेरणा ही यजमान के साथ रहती है। हे यजमान! तेरे जीवन का यह सौभाग्य अखण्ड बना रहे। और तेरी प्रतिभा एक महान बनी रहे। मेरी तो सदैव यह प्रेरणा रहती है। परंतु मैं यागों के सम्बन्ध में, नाना प्रकार के यागों की चर्चाएं मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने की। परंतु देखो, मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह निर्णय देने आया हूँ, एक मानो परिचय देना चाहता हूं जिसका मुझे प्रतीत है कि महाभारत काल के पश्चात् यागों और पुत्रियों दोनों का तिरस्कार हुआ। और वह तिरस्कार किस रूप में हुआ, वह वाम मार्ग के रूप में हुआ। देखो, यागों में मांसों की आहुतियां दी जाने लगीं। जो अहिंसा परमोधर्म का क्रियाकलाप है, देवताओं का ओज है। अग्नि के मुखारबिन्दु में जो भी हम पदार्थ प्रदान करते हैं मानो सब देवता उसे ग्रहण करते हैं। और उससे वायुमण्डल पवित्र होता है। ग्रहण ही नहीं, परंतु पदार्थों का विभाजन कर दिया जाता है। परंतु देखो, मध्यकाल ऐसा आया कि अश्वमेघ में देखो, घोड़े के मांस की आहुति दी जाने लगी। गौमेघ में देखो, गौ के मांस की आहुति दी जाने लगी। ये बड़ा दुर्भाग्य रहा है इस पृथ्वी मण्डल के प्राणियों का। मैं ये उद्‌गीत नहीं थे उच्चारण करने आया हूं कि ये बड़ा सौभाग्य है आज देखो, उसी का परिणाम है कि संसार में मुनिवरो! देखो, मैंने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से निर्णय कराया कि उसी याग में मांस की आहुति देने का परिणाम ये बन रहा है कि यहां तक समाज बन गया कि स्वयं उसका आहार करने लगा। आहार करके ही देखो, अपने उदरों को वह मानो देखो, प्राणियों के रक्त का पिपासी बना रहता है।

तो मैं इस संबंध में कोई विवेचना देने नहीं आया हूं, पूज्यपाद गुरुदेव को एक परिचय देना है कि देखो, यागों का कितना तिरस्कार हुआ है। मेरी पुत्रियों का तिरस्कार हुआ। परंतु देखो, उसका द्वितीय रूप बन गया है। उसी याग में मांस की आहूति देने का परिणाम यह बन गया है कि आधुनिक काल का जो जगत् चल रहा है, भगवन्! यह जो काल चल रहा है, जिसे ऋषि मुनियों की पवित्र भूमि कहते हैं, आज देखो, भगवान् कृष्ण की राष्ट्रीय प्रणाली है मानो देखो, उस आधार पर जब मैं गति करने लगता हूं, तो मुझे प्रायः ऐसा प्रतीत होता है कि इस समाज को क्या हो गया है। मानो देखो, राष्ट्र में चरित्र नहीं रहा है। मानो जिस राष्ट्र की मेरे पूज्यपाद चर्चा कर रहे थे वो राष्ट्र कितना महान था मानो देखो, उस राजा के राष्ट्र में प्रातःकालीन राजा अपने व्यायाम आदि से निवृत्त हो करके मानो वेदाध्ययन करके, याग करने के पश्चात् अहिंसा परमो धर्म में परिणत हो करके देखो, प्रजा को उसी आधार पर शिक्षा देना प्रारम्भ होता था। परंतु आधुनिक काल का राष्ट्र कैसा है कि प्रातःकालीन जो राष्ट्र के कर्णधार है वह नाना प्राणियों को अग्नि में तपा करके और उसका रस बनाकर के, पान करके अपने आसन त्यागते हैं। मानो देखो, इतना अन्तर्द्वन्द्व ये क्या है? यह वाममार्ग ही मुझे प्रतीत होता है।

वाममार्ग

वाम मार्ग उसे कहते हैं जो उल्टे मार्ग पर गति करने लगता है। अपने आहार से द्वितीय आहार का पान करने लगता है। उसे वाम मार्ग कहते हैं। तो यह समाज, राष्ट्र आज वाममार्गी बन रहा है जो मैं दृष्टिपात् कर रहा हूं। हे राजन! यदि तू समाज को ऊँचा बनाना चाहता है, तू इस राष्ट्र को महान बनाना चाहता है, इस राष्ट्र को राम की भूमि बनाना चाहता है। तो मानो देखो, उस राष्ट्र में अहिंसा परमो धर्म का पालन किया जाए। अहिंसा परमो धर्म ही तेरा जीवन है और तू यागिक बन करके, सुगंधि देने वाला बन।

याग से शुद्धि

क्योंकि आधुनिक काल के वैज्ञानिक कहते हैं कि वायु मण्डल परमाणुओं से इतना दूषित हो गया है कि कुछ समय आएगा कि श्वांस लेने मात्र से प्राणी नष्ट हो जाएगा। ऐसा आधुनिक काल का विज्ञान कहता है। मैं कहता हूं ''भोले प्राणियों! तुम समाज को तिरस्कार मत करो, विज्ञान का दुरुपयोग न करो। परंतु देखो, वह विज्ञानाम् जब तुम याग करना प्रारम्भ करोगे। तो देखो, विज्ञानशालाओं में जहां उपकरण होते हैं जहां नाना प्रकार के आविष्कार होते

हैं वहां तुम याग के ऊपर भी आविष्कार करो और आविष्कार करके देखो, याग में वो सत्ता हैं कि वायुमण्डल में जब ये तरंगें गति करती हैं, अशुद्ध परमाणुओं को निगल जाती हैं और मानो वायुमण्डल का शुद्धिकरण कर देती है।

तो मेरे प्यारे! देखो, आधुनिक काल का विज्ञान ये कहता है, अब विचार चल रहा है, कुछ समय आएगा जब ये याग की रचना पुनः उसी प्रकार से हो जाएगी जैसे राम के काल में या कृष्ण के काल में या जैसे उससे पूर्व काल में होती रही है। आज मैं विशेष चर्चा तो तुम्हें देने नहीं आया हूं, केवल पूज्यपाद गुरुदेव से ये वर्णन कराने के लिए आया हूं, अपना कुछ सूक्ष्म सा परिचय जो आज मुझे अनुभूति हुई है हे यजमानं ब्रहे कृतां लोकाः मानो देखो, याग करना चाहिए, सुगन्धि करनी चाहिए। दुर्गंधि को नष्ट करना चाहिए। अणु और परमाणुओं को भी शोधन करने वाला यह याग हैं।

राष्ट्र का कर्तव्य

तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव आधुनिक काल के राष्ट्र में मानो जो रूढ़ियां पनप रही हैं। कोई यहां मुहम्मद के मानने वाला है, कोई नानक के मानने वाला है, कोई ईसा के मानने वाला है। भिन्न–भिन्न प्रकार की जो रूढ़ियां हैं ये समाज में परिणत हो रही है। हे राजन्! यदि तू अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहता है, तो ये भिन्न–भिन्न प्रकार की रूढ़ि समाप्त हो करके वैदिक स्वत् मानो देखो, प्रतिभा राष्ट्र में होनी चाहिए। इसका निराकरण राष्ट्र ही कर सकता है कि प्रत्येक राष्ट्र में मानो देखो, जितनी भी रूढ़ि है, रूढ़ियों के आचार्यों को एकत्रित किया जाए और एकत्रित करके देखो, उसका विचार–विनिमय हो, गम्भीरता से और बुद्धिमान् राजा उसकी मध्यस्थता करने वाला हो, तो मानो देखो, जो विज्ञान, धर्म और मानवीयता पर निहित हो जाए उसी आभा को अपनाना, यह राष्ट्र का कर्त्तव्य कहलाता है। मानो एक रूढ़ि, दूसरी रूढ़ि के रक्त का पिपासी बनी हुई है मानो देखो, इसको धर्म और मानवता नहीं कहते हैं। मानव और धर्म कहते हैं, कि जो धर्म, मानव की इन्द्रियों में समाहित हो रहा है। धर्म मानव के आचरणों में पवित्र और निहित हो रहा है तो इसको हमें अपने में धारण करना चाहिए। मैं पूज्यपाद गुरुदेव को विशेष चर्चा प्रकट करने नहीं आया हूं, विचार केवल यह कि हे यजमान! तेरे गृह पवित्र हो, तेरे द्रव्य का सदैव यागों के द्वारा सदुपयोग होता रहे। ये मेरी कामना रहती है हे यजमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। मानो देखो, यह मेरे हृदय की वृत्तियां रहती हैं। मानो देखो, इस प्रकार मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को विशेष चर्चा में नहीं ले जा रहा हूं।

करणीय

विचार क्या, मुनिवरो! देखो, दो शब्द मैंने उच्चारण किए हैं। एक तो मानव अहिंसा परमोधर्म बन जाए और याग और देवी का तिरस्कार नहीं होना चाहिए। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने अभी–अभी वाक् प्रकट किया था। माता मल्दालता की चर्चा कर रहे थे। मल्दालता अपने गर्भ में ही पुत्रों को निर्माणित कर देती। हे विदुषी! हे गृह स्वामिनी! तेरा यह कर्त्तव्य है कि त्याग और तपस्या के द्वारा तू संतान का उपार्जन कर, मानो गृह को पवित्र बना सके, उनके गृह–घट में पवित्र विद्या का संचार हो जाए जिससे वे ब्रह्म की चर्चा करें और महानता की चर्चा करते चले जाएं। तो इसी रम्ब्रहा गौतं ब्रह्मे मेरे पूज्यपाद जो वाक् कहते हैं उनके ऊपर टिप्पणी करना हमारे लिए सूर्य और जुगनू दोनों की एक प्रतिभूतियां कहलाती हैं आज मैं उस संबंध में तो विचार देने नहीं आया हूं। आज का विचार केवल, मेरे दो शब्द हैं मेरी तो राष्ट्रीयवाद के ऊपर एक विवेचना रहती है। परंतु देखो, वो कैसे महान बनें? कैसे अहिंसा परमोधर्मी बनें? कैसे विष्णु राष्ट्र बने? कैसे वो देखो, राम की आभा को अपनाने वाला हो।

राम राष्ट्र की घोषण

भगवान् राम के राष्ट्र में, अयोध्या में यह घोषणा हो गई कि प्रत्येक गृह में याग होना है, गृह को स्वर्ग बनाना है और सुगन्धि होनी है और वायुमण्डल को पवित्र बनाना है तो ये आज का वाक् केवल हमारा क्या कि हम मानो देखो, ये कि हे राजन्! तू अपने राष्ट्र में से रूढ़ियों को नष्ट कर, वैदिकता को अपनाने का प्रयास कर, याग और देखो, देवी का, पुत्री का तिरस्कार नहीं होना चाहिए, उसका पूजन होना चाहिए। ये आज का वाक् समाप्त अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से, आज्ञा से पूर्व–हे यजमान! जहां ये हमारी आकाशवाणी जा रही है तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे महानता के लिए द्रव्य का सदैव इसी प्रकार सदुपयोग होता रहे। यह आज का वाक् समाप्त, अब मैं पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊँगा।

पूज्यपाद गुरुदेव

मेरे प्यारे ऋषिवर! मेरे प्यारे महानन्द जी के हृदय में, जो एक मौलिक वेदना रहती है और वह वेदना यह है कि अहिंसा परमोधर्मी प्रत्येक प्राणी को बनना चाहिए। क्योंकि हमारे यहां राष्ट्र में, परम्परा के नियमों में वैदिक प्रणाली के आधार पर प्रायः ये अपने वाक्यों को उद्‌गीत रूप में गाते रहते हैं कोई समय आएगा, राष्ट्र भी पवित्र होगा और प्रजा भी महानता की वेदी पर आएगी और विज्ञान का दुरुपयोग भी नहीं होगा। वो समय निकटतम आने वाला है। ये कोई वाक् नहीं, परंतु आज का विचार क्या, मेरे प्यारे! महानन्द जी ने अपने विचार दिए, इनके विचारों में सारगर्भिता एक महानता की ज्योति जागरूक रहती है, ये क्या चाहते इस समाज का हैं, कि समाज किस वेदी पर ले जाना चाहते हैं। ये उनके हृदय की वेदना उद्‌गीत गाती रहती है। और नाना प्रकार की रूढ़ि भी नहीं होनी चाहिए। ये रूढ़ियां राष्ट्र का विनाश करती हैं, समाज में प्रीति नहीं होने देती और ये नाना प्रकार की जो रूढ़ि हैं ये राष्ट्र के ऊपर घातक बन कर रहती है। तो आज का विचार अब हमारा समाप्त। मेरे प्यारे! महानन्द जी ने बहुत प्रिय वाक्, आज को वाक्, उच्चारण करने का अभिप्रायः क्या हे माता वसुन्धरा! तू कल्याण करने वाली है। हे माता! तेरे आंगन में हम अपने जीवन को पनपाते रहते हैं। तू चेतना है, प्रकाशं ब्रह्मे ये है बेटा! आज का वाक् अब समय मिलेगा शेष चर्चाएं कल प्रकट करेंगे। **ओ३म् देवाः यो सर्वं भद्राः मनु गायन्त्वाः यं रथाः। ओ३म् यनिता रथं ब्रह्मणत्वाः स्वादः।** अच्छा भगवन् आज्ञा शान्ति **दिनांक–01–12–85 ग्राम : विसावर, मथुरा**

राष्ट्रीयता की चर्चाएँ–दिनांक–22–03–86

ओ३म् यज्ञो रथम मान्रवा सन्धमम आपा खेम भद्रा माणमरथम प्राची गत
ओ३म् ब्रह्मण रथम आपा ऋशि वरुण गृता आभ्याम देवम मणा घृणाम त्वायम आभा
ओ३म् सूर्य रथम माणा आभ्याम् रुग्र रथ घ्राणम त्वा यम रथ
ओ३म् यरशच रथ प्राणाय घ्राणा त्वायम वीवा आभ्याम देवा माणा
ओ३म् जनिता रथप्रीशा गतम आभ्याम देवा
आपो गाय अग्नम ब्रीहीश्चा रथम माणा
ओ३म् सर्वाणि गतप प्रीवीगया माम धेनु रथा आभ्यां मणो वाचनमः ऋषिः आभारथं आपो गत्प्रायशा मामृषि आभाम्
ओ३म् दिव्यं रथं प्रह्वा वाचन्न माणं त्वा यं रथाणा देवं आपा ऋषि वाचन्नमः
ओ३म् यशा रथं मा यशो गायनत्वा ऋषि वाचनमः आ भा रेविगाया
ओ३म् तनु मन्था माणं आपा ऋषे यंचना राजा बृविशा रथं मन्था माणं आपो जिषणं आभाम
ओ३म् सूर्या चन्द्रमसा यं गत्प्रायशो आभ्यां देवं माणाः यं भविताः
ओ३म् मधुम ब्रीह्वा आत्मा रथमन्था आभ्यां देवाः यं गाताम्
ओ३म् विष्णु रुद्रा गतं मानं त्वाः विष्णु रेवं आपा यं सर्वं आ भाम
ओ३म् दधिः ब्रह्माः यं विष्णु गत प्राची आभ्यां देवाः यो सर्वा
ओ३म् सर्वं भद्राः मा गतै आप्यां लोकाः सर्वं भद्राणि आ पा

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहां परम्परागतों से उस मनोहर वेद–वाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेद–वाणी में, उस मेरे देव, परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि जितना भी ये जड़ जगत अथवा चैतन्य जगत हमें दृष्टिपात् आ रहा है, उस सर्वत्र ब्रह्माण्ड के मूल में, प्रायः वह मेरा देव दृष्टिपात् आ रहा है, प्रत्येक वेद मन्त्र, उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है। जिस प्रकार माता का पुत्र, माता की गाथा गा रहा है, जिस प्रकार यह पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा गा रही है, इसी प्रकार, प्रत्येक वेद मन्त्र उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है, और उदगीत गा रहा है कि वे परमपिता परमात्मा महान और सर्वत्रता में ओतप्रोत है।

विज्ञान का स्रोत

हमारे यहां सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके, वर्तमान के काल तक नाना वैज्ञानिक हुए हैं, परन्तु कोई विज्ञानवेत्ता ऐसा नहीं हुआ, जो उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को सीमाबद्ध कर सके, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा सीमा से रहित है, वे सीमा में आने वाले नहीं है। इसलिए प्रत्येक वेद मन्त्र, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गाना गा रहा है अथवा महिमा का वर्णन कर रहा है। हमारे यहां नाना विज्ञानवेत्ता हुए हैं, और नाना योगेश्वर हुए, दोनों प्रकार के ज्ञान और विज्ञान को सीमा में लाने के लिए प्रत्येक मानव परम्परागतों से ही, भिन्न–भिन्न प्रकार की उड़ाने उड़ता रहा है मानो नाना प्रकार के लोक लोकान्तरों में जाने के लिए, सदैव मानव तत्पर रहा है, परन्तु विज्ञान अपने में अनूठा बनकर करके रहता है। उस विज्ञान का जो स्रोत है वह मानो परमपिता परमात्मा माने जाते हैं। दोनों प्रकार के ज्ञान और विज्ञान के ऊपर मानव बेटा! अपनी उड़ान उड़ता रहा है। एक भौतिक विज्ञान है तो द्वितीय आध्यात्मिक विज्ञान कहलाता है। हमारे यहाँ दोनों प्रकार का जो विज्ञान है वह अपने में अनूठा माना गया है। परन्तु प्रत्येक आभा में जब हम अपनी मानवीयता को ले जाते हैं और मानो दर्शन के ऊपर विचार–विनिमय करने लगते हैं तो बेटा! यह संसार एक अनूठा और मानवीय दर्शनों में निहित हो रहा है। प्रत्येक आभा में रत होने से मानव अपने में प्रायः अन्वेषण करता रहा है।

तो आओ मेरे प्यारे! मैं तुम्हें अन्वेषण की चर्चा तो आज नहीं करने आया, आज मैं तुम्हें उस क्षेत्र में ले जाना चाहता हूं, जिस क्षेत्र में मेरे पुत्रों! मैं कई समय से अपनी चर्चा करता चला आ रहा हूं और वह चर्चाएं क्या हैं? मानो देखो, राष्ट्रीयता की चर्चाएं हैं। हमारे यहां महाराजा अश्वपति का काल मुझे प्रायः स्मरण आता रहता है। महाराजा अश्वपति के यहां नाना ऋषि–मुनियों का एक समाज एकत्रित हुआ और महाराजा अश्वपति ने एक ही वाक् कहा है, कि हे प्रभु! मैं अपने राष्ट्र को किस दिशा में ले जाऊँ? और क्या मेरा नृत होना चाहिए? मेरे पुत्रो! देखो, इसमें नाना ऋषि मुनियों ने अपना अपना वक्तव्य दिया, वह वक्तव्य मानो पूर्व भी मैंने वर्णन किया है। आज मानो देखो, उस आभा में ले जाना चाहता हूं। श्वनेत ऋषि ने यह कहा था कि हे राजन! तेरे राष्ट्र में विज्ञानवेत्ता होने चाहिए और विज्ञानवेत्ता कैसे हो? मानो जो ऊर्ध्वा में उड़ान उड़ने वाले हों, और इस ब्रह्माण्ड की माला बनाने वाले हों। मेरे प्यारे! देखो, राजा ने इस वाक् को स्वीकार कर लिया, परन्तु उन्होंने एक वाक् कहा कि तुम्हारे राष्ट्र में, विद्यालय पवित्र होने चाहिए। मानो देखो, विद्यालय कैसा हो? जिसमें ब्रह्मचारी अध्ययन करने वाले हों, और ब्रह्मचारियों को अध्ययन कराने वाला मानो ब्रह्मे वानप्रस्थ होना चाहिए। यह वाक् बेटा! मैं इन वाक्यों पर टिप्पणियां करता चला आ रहा हूं, विचार देते रहना हमारा एक कर्त्तव्य रहता है। क्योंकि हमारे यहां प्रायः देखो, राजा अश्वपति के राष्ट्र में बेटा! समय समय पर मानो प्रकृति अपना नृत करती रही है। मेरे पुत्रों! देखो, समय पर वृष्टि होना, समय पर मानो देखो, अपनी–अपनी क्रियाओं में रत रहना यह एक समाज का नृत माना गया है।

अतिवृष्टि का कारण

आओ मेरे प्यारे! मैंने बहुत पुरातन काल में तुम्हें एक वाक् निर्णय देते हुए कहा था, मुनिवरो! देखो, महाराजा अश्वपति ने, ब्रह्मचारी कवन्धि से एक समय एक वाक् कहा था कि हे प्रभु! यह जो राष्ट्र में या समाज में अति वृष्टि और अनावृष्टि होती है इनके मूल में कौन–सा विज्ञान है? मेरे प्यारे! देखो, ब्रह्मचारी कवन्धि ने, राजा के प्रश्नों का उत्तर देते हुए कहा–कि हे राजन! मेरे विचार में तो ऐसा आता है कि यह प्रजा का और राष्ट्र का दोनों का एक दोषारोपण कहलाता है। दोनों का ही दोषारोपण है। उन्होंने कहा प्रभु! यह कैसे स्वीकार किया जाए? उन्होंने कहा– युक्तियों से यह वाक् सिद्ध होता है। जैसे उन्होंने बेटा! एक वाक् प्रगट करते हुए कहा–ब्रह्मचारी कवन्धि ने कि हे प्रभु! मुझे कुछ ऐसा प्रतीत है, एक लोकोक्ति हमारे यहां वैदिक साहित्य में आती है। वैदिक साहित्य में देवताओं की गणना की जाती है और देवताओं की गणना करते–करते मानो देखो, अन्तिम छोर पर वहीं जहां से प्रारम्भ होती है वहीं उसका समापन हो जाता है। जैसे मानो उन्होंने युक्तियां प्रगट की। कि एक समय बिना समय के वृष्टि हुई और बिना समय के जब वृष्टि हो गई तो प्रजा का विनाश हो गया। प्रजा का मानो देखो, अन्नाद सब समाप्त हो गया; गृह समाप्त हो गए। तो मानो देखो, प्रजाओं ने विचारा कि यह वृष्टि हुई है इसमें हमारा विनाश हो गया है तो सब प्रजा मानो देखो, अपना संगठन बना करके वह प्रजापति के द्वार पर पहुंची और प्रजापति से कहा कि हे प्रजा के स्वामी! प्रजा का विनाश हो गया है। मानो अति वृष्टि हो गयी है। मानो देखो, पण अकाल आ गया है। सर्वत्र विनाश को प्राप्त हो गये हैं। हे प्रभु! यह क्या हुआ है? आप प्रजापति हैं हमारा निवारण कीजिए।

तो महाराजा प्रजापति ने कहा कि–भई! यह वृष्टि कहां से हुई है? उन्होंने कहा कि–महाराज! यह वृष्टि तो मेघमण्डलों से हुई है। तो मुनिवरो! देखो, वह प्रजापति मेघमण्डलों के द्वार पर पहुंचे और मेघों से कहा हे मेघों! यह बिना समय के वृष्टि क्यों हुई? पण अकाल हो गया है। प्रजा का विनाश हो गया, प्रजा रसातल को चली गई है। मेघमण्डल बोले कि प्रभु! इसमें हमारा कोई दोषरोपण नहीं है। मानो देखो, उन्होंने कहा हमसे तो महाराजा इन्द्र ने कहा था अब वह मुनिवरो! देखो, प्रजापति, महाराजा इन्द्र के द्वार पर पहुंचे और इन्द्र से कहा–हे इन्द्र! तुमने यह बिना समय के वृष्टि क्यों कराई? उन्होंने कहा–प्रभु! इसमें मेरा कोई दोष नहीं है, मेरा कोई अपराध नहीं है। मानो देखो, मैंने ब्रह्मम् मेरे से तो मेरी पत्नी शचि ने कहा था और अब बेटा! देखो, वह शचि के द्वार पहुंचे और उनकी पत्नी शचि से बोले हे शचि! ये बिना समय के तुमने अपने पति इन्द्र को आज्ञा क्यों दी, कि वृष्टि हो जाए। उन्होंने कहा–प्रभु! इसमें मेरा कोई दोष नहीं है। मेरे से तो मानो देखो, सूर्य ने कहा था।

अब मुनिवरो! देखो, प्रजापति सूर्य के द्वार पर पहुंचे और सूर्य से कहा–हे सूर्य! तुमने यह बिना समय के वृष्टि क्यों कराई? उन्होंने कहा–प्रभु! इसमें मेरा कोई दोष नहीं है। मेरे से तो इस पृथ्वी ने कहा था और पृथ्वी ने कहा–मैं तपायमान हो रही हूं, मेरा निवारण करो, मुझे सांत्वना दो, आपो के द्वारा। मानो देखो, मैंने अपनी तीखी किरणों को मानो समुद्र को दी है और मेरे से तो वास्तव में समुद्रं ब्रह्मा व्रतं देवाः वह जब समुद्रों में मेरी टेढ़ी किरणें मानो परिणत हुई, दक्षिणायन में जा करके और वहीं देखो, किरणों का मिलान, जब समुद्र से हुआ तो समुद्रों से जल का उत्थान हुआ और जल से ही मेघों की उत्पत्ति होती है और मेघ जब छायामान हो जाते हैं। इन्द्र नाम मानो देखो, विद्युत को कहा गया है। इन्द्र नाम मुनिवरो! देखो, वायु को कहा गया है और शचि नाम विद्युत का है। जब इन तीनों का संघर्ष होता है तो वृष्टि हो जाती है और पृथ्वी अपनी ताप को शांत कर लेती है और मानो देखो, प्रजा अपने किए हुए कर्मों का फल भोग लेती है।

प्रजा के पाप से अतिवृष्टि

तो मेरे प्यारे! देखो, यह वाक् वैदिक साहित्य में आता रहा है और इसका निर्णय यह हुआ कि प्रजापति पृथ्वी के द्वार पर पहुंचे और पृथ्वी से कहा–हे पृथ्वी मां! तुमने बिना समय के वृष्टि की इच्छा की है? तो पृथ्वी ने एक ही वाक् कहा है हे प्रजापति! मानो यह प्रजा जब मेरे ऊपर पाप कर्म करती है, मैं पाप में सन जाती हूं, मैं पाप में तपायमान हो जाती हूं। मैं अपनी मानो उसमें द्रवितता में, सांत्वना लाने के लिए प्रार्थना करती हूं देवताओं से, तो मेरे प्यारे! विचार विनिमय यह कि हमारे यहां जितना भी अनावृष्टि, अतिवृष्टि का जो मूल कारण है उसके मूल में मुनिवरो! देखो, यह प्रजा का सब दोषरोपण कहा जाता है। इसलिए हमारे यहां वैदिक साहित्य वाले ऋषि आचार्यों ने कहा है कि हे मानव! तू अपने मानवीय दर्शन को इतना विचार, इतना महान बना करके चल जिससे मानो देखो, तेरा राष्ट्र, तेरा समाज पवित्र बन जाए और यह प्रकृति समय–समय पर अपना–अपना क्रिया–कलाप करती रहे।

पुत्रियों को आयुर्वेद का ज्ञान

तो मेरे प्यारे! देखो, यह वाक् ब्रह्मचारी कवन्धि ने महाराजा अश्वपति से प्रगट किया। तो महाराजा अश्वपति ने कहा कि प्रभु! मैं अपने राष्ट्र को कैसा बनाऊँ? उन्होंने कहा—जैसी तुम्हारी इच्छा हो। कई समय से ऋषि मुनियों का एक उपदेश चल रहा है और उपदेश मंजरी में यही वाक् आ रहा है कि तुम मानव दर्शन को ब्रह्मवर्चोसि को ऊँचा बनाओ, यदि तुम अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाना चाहते हो तो मेरे प्यारे! देखो, पुरातन काल में ये निर्णय लिया कि मेरी पुत्रियों को आयुर्वेद विद्या का अध्ययन करना चाहिए, आयुर्वेद विद्या का अध्ययन करने से, जिससे वह ब्रह्मचारियों का निर्माण अपने गर्भस्थल में, विशुद्ध रूपों से निर्माणित कर सके। तो मानो देखो, यह वाक् ब्रह्मचारी कवन्धि ने उच्चारण किया। उन्होंने कहा—उसके पश्चात् ब्रह्मचारी अध्ययन करे और वानप्रस्थी उनको देखो, अध्यापन के क्रियाकलाप में उनको ले जाए, जिससे उनका जीवन, महान और पवित्र बन करके मानो देखो, राष्ट्रीयता पवित्र हो जाए। गार्हपथ्य नाम की अग्नि का पूजन करने वाले, गृह स्वामी, गृह स्वामिनी मानो देखो, वह जब गृहपध्य नाम की अग्नि का पूजन करते हैं तो गृह पवित्र बन जाते हैं इसीलिए तुम्हारे राष्ट्र में गृहस्वामी और गृहस्वामिनी दोनों ही मानो देखो, प्रातः कालीन उद्गीत गाने वाले हो, उद्घृतता में रत होने वाले हो। तो मेरे प्यारे! देखो, यह ब्रह्मचारी कवन्धि ने अपने वाक्यों में कहा है, उन्होंने कहा—तुम्हारे राष्ट्र में विज्ञानवेत्ता होने चाहिए और विज्ञानवेत्ता कैसे हो मानो लोक—लोकान्तरों की उड़ाने उड़ने वाले हों और लोक लोकान्तरों में क्या मानो देखो, इस संसार को मनकों की माला बनाने के लिए सदैव तत्पर हो।

मुनिवरो! देखो, जैसे माता के गर्भ स्थल में जब शिशु का प्रवेश होता है तो माता के गर्भ स्थल में मानो एक माला बन जाती है और वह माला मुनिवरो! उस माला को शिशु अपने में धारण करके अपने में मग्न हो रहा है। हे माता! तू नहीं जानती माला कैसे बनती है। मानो देखो, माला उस काल में बनती है। जब माला ब्रह्मे वाचन्नमः मेरे प्यारे! देखो, एक बिन्दु है। बिन्दु में शिशु है, उस शिशु के प्रवेश होते ही देवताओं का अंग संग हो करके बेटा! माला बन जाती है। मेरे प्यारे! देखो, उस माला को मुनिवरो! देखो, धारण करने वाला वह शिशु है, वह आत्मा है, जो माता के गर्भ में बिन्दु में प्रवेश हो रहा है। मुनिवरो! देखो, वह माला कैसे बनी है।

मेरे पुत्रों! देखो, चन्द्रमा अमृत दे रहा है, सूर्य प्रकाश दे रहा है, अग्नि उष्ण बना रही है, आपो आसन दे रहा है। मेरे प्यारे! तारामण्डलों की माला बनी हुई है और वह माला अपने में मानो विशुद्ध कहलाती है। यह पृथ्वी गुरुत्व देना प्रारम्भ करती है। वायु प्राण दे रहा है और अन्तरिक्ष उसे अवकाश दे रहा है। मेरे प्यारे! देखो, वह प्रिय माला बन करके, उस माला को, आत्मा अपने में धारण कर रहा है। हे माता! तू नहीं जानती कि तेरे गर्भ स्थल में शिशु ने माला को धारण कर लिया है और वह कैसी प्रिय माला है बेटा! ब्रह्माण्ड का ब्रह्माण्ड उसमें निहित हो रहा है। जब मैं ब्रह्माण्ड की चर्चा करता हूं तो बेटा! यह मानो देखो माला सिद्ध हो जाती है। ये माला कैसी विचित्र है बेटा! इस माला के ऊपर मैं पूर्व कालो में कई प्रकार की चर्चा कर चुका हूं। आज मैं मानो देखो, इसकी चर्चा पुनः करने लगूंगा, समय की वृत्तियां कहलाती हैं। परन्तु माला कैसी है।

एक समय बेटा! मुझे स्मरण है महाराजा अश्वपति के यहां वैज्ञानिकों का एक समूह विद्यमान हुआ और उन वैज्ञानिकों ने यह निर्णय दिया कि वेद का मन्त्र मम ब्रह्मे मारवब्रहे सम्भवा लोकां वेद का वाक् यह कहता है कि हे मानव! तू माला को धारण कर और माला को बना। मेरे प्यारे! देखो, एक वाक् ऐसा आया आत्मा ब्रह्मे सोवर्चतम मेधं ब्रह्मा व्रणं स्वस्ति व्रधाः मानो देखो, वेद वाक् कहता है हे आत्मा! तू माला को धारण कर और तू धारण कर रहा है परन्तु उस माला को प्रत्यक्ष लाने का प्रयास कर। मेरे प्यारे! देखो, वैज्ञानिक एक माला बनाता है वेद के मन्त्र को ले करके, एक माला को उद्धृत कर रहा है। बेटा! देखो, माला को ले करके वैज्ञानिक अपने अपने आंगन में विद्यमान हो करके विचारने लगे, विचारते—विचारते इस माला पर आये कि हम सबसे प्रथम पृथ्वियों को जानने का प्रयास करें।

तीस लाख पृथ्वियाँ

बेटा! देखो, महर्षि श्वेता ने महखष व्रेतकेतु दोनों ने मुनिवरो! देखो, उन महर्षियों ने जहां वह आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता थे वहां भौतिक विज्ञानवेत्ता भी मानो देखो, अपनी आभा में रत हो रहे हैं और भौतिक विज्ञानवेता बेटा! अपने में मानो उड़ान उड़ रहे हैं। भौतिक विज्ञानवेत्ताओं ने उड़ान उड़ना प्रारम्भ किया तो मुनिवरो! देखो, माला में एक पृथ्वी के मनको को गणित करने लगे। बेटा! गणना में लाते रहे, समाधिष्ठ हो गये, परमाणुओं का एक दूसरे में मिलान करने लगे परन्तु पुनः समाधिष्ठ हो करके मेरे पुत्रों! देखो, यह निर्णय दिया, कि तीस लाख पृथ्वियां हैं बेटा! इस ब्रह्माण्ड में, ऐसा उन्होंने निर्णय दिया तो उसकी माला बनाई, बेटा! वह किसमें पिरोई हुई है। विचारा गया कि तीस लाख पृथ्वियां बेटा! समाधि के द्वारा, परमाणुवाद के द्वारा, मुझे दृष्टिपात् आ रही है परन्तु देखो, यह किस सूत्र में पिरोई हुई है। तो सूत्र को विचारने लगे तो विचारा गया कि मुनिवरो! देखो, वह जो सूर्य मण्डल हैं उस सूर्य में बेटा! वह तीस लाख पृथ्वियां पिरोई हुई हैं।

तो विचारा गया, वैज्ञानिकों ने कहा है, पुरातन काल के वैज्ञानिकों ने बेटा! बहुत समय हो गया अपनी आभा में आये हुए तो विचारा गया वैदिक आचार्यों ने कि यह तीस लाख पृथ्वियों की माला बनी है और उसका सूत्र, जिस सूत्र में वह पृथ्वी पिरोई हुई है बेटा! देखो, वह सूत्र सूर्य कहलाता है। तो मेरे प्यारे! देखो, विचार आया एक वेद मन्त्र ऋषियों के स्मरण आया, वेद मन्त्र कहता है सूर्याणि गच्छत्व्रभा व्रतं सहस्राणि गच्छत्प्रह्वे लोकान् तो एक कृतिका वृत कहलाता है। तो विचारा गया बेटा! अनुसन्धान करने से यह प्रतीत हुआ कि एक सूर्य नहीं है, दो सूर्य नहीं है, यह तो अनन्य सूर्य मुझे दृष्टिपात आ रहे हैं। बेटा! वेद का वाक् यह कहता है सहस्राणि गच्छत्प्रह्वे लोकान् सूर्याणि गच्छताः वेद का वाक् कहता है कि यह तो एक सहस्र सूर्यों को वर्णन कर रहा है अब मेरे प्यारे! देखो, ऋषि—मुनियों ने परमाणुवाद को विचारने के लिए तत्पर हो गये, एक दूसरा परमाणु—परमाणु, से सुगठित करते हुए, एक परमाणु में ब्रह्माण्ड को दृष्टिपात करते हुए, मेरे पुत्रों! ऐसा मुझे स्मरण है बेटा! उन्होंने एक सहस्र सूर्यों की गणना की और एक सहस्र सूर्यों का भी बेटा! कोई सूत्र है? तो बेटा! वह सूत्र क्या है? जिसके ऊपर विचारने से प्रतीत हुआ कि वह जो एक सहस्र सूर्यों की मानो देखो, माला बनी है उस माला को कौन धारण कर रहा है? उसको बृहस्पति अपने में धारण कर रहा है। बेटा! देखो, बृहस्पति ऊर्ध्वां ब्रह्मा वाचन्नमं ब्रह्मे लोकाम् वेद का वाक् कहता है कि मानो देखो, एक सहस्र सूर्य मुनिवरो! देखो, उसको बृहस्पति अपने में धारण कर रहा है, अपने में ओत—प्रोत कर रहा है, अपने में मानो देखो, सूत्रों में सूत्रित हो रहा है।

तो मेरे प्यारे! देखो, जब ऋषि ने यह विचारा ऋषि मुनियों ने देखो, महाराजा अश्वपति के विद्यालय में, मानो विज्ञानशाला में कि यह तो बड़ा नृत होने लगा है। आओ मुनिवरो! देखो, आगे विचारने लगे तो मुनिवरो! देखो, समाधिष्ठ हो गये, ब्रह्माण्ड को निहारने लगे, मुनिवरो! देखो, एक मन्त्र उन्हें वेदों में प्राप्त हो गया। वेद कहता है बृहस्पति ऊर्ध्वां ब्रह्मा वर्णस्सुतं वाचप्रह्वे लोकां ऊर्ध्वां जम्भ्रह्वे व्रताः बेटा! वेद का वाक् कहता है हे बृहस्पति! तू ऊर्ध्वा में रत होने वाला है। तू ऊर्ध्वा में गति करने वाला है, मानो तू नाना सूर्यों को अपने में धारण कर रहा है। मेरे प्यारे! देखो, निहारते—निहारते आचार्यों ने एक सहस्र बेटा! देखो, बृहस्पतियों को निहारने का प्रयास किया। एक सहस्र बृहस्पतियों को निहारा।

लोकों की माला

तो मेरे प्यारे! देखो, यह ब्रह्माण्ड आंगन में आने लगा, विचारने लगे एक सहस्र बृहस्पतियों की भी कोई माला है। बेटा! वह माला कौन—सी है? वह माला आरूणि मण्डल है। मेरे पुत्रों! देखो, आरुणि मण्डल में ये नाना बृहस्पतियों की माला बन जाती है, उस माला को वह मानो देखो, आरुणि उसका सूत्र बना हुआ है और सूत्रित हो करके जैसे मुनिवरो! देखो, नाना शब्दों की माला को एक वेद मन्त्र की आभा में ध्वनित होता रहता है। तो मेरे प्यारे! देखो, मैं विज्ञान के युग में तुम्हें ले गया हूं बेटा! मैं इस क्षेत्र में जाना तो नहीं चाहता था, परन्तु विचार ऐसा ही वेद का आ गया, यह वाक् मैंने पुरातन काल में भी, कई कालों में प्रगट करता रहता हूं। मेरे प्यारे! देखो, इसी प्रकार आगे जब मुनिवरो! देखो, निहारने लगे एक सहस्र मुनिवरों! आरुणि मण्डलों की माला बनी, उस माला को ध्रुव ने अपने में धारण कर लिया, बेटा! ध्रुव इतना विशाल मण्डल है जिसमें बेटा! एक सहस्र आरुणि मण्डल उसमें समाहित हो जाए, वह उसकी माला बन जाए। मुनिवरों! देखो, जब माला का प्रसंग आ गया, तो बेटा! यह माला तो बड़ी विचित्र मुझे प्रतीत होने लगी, इसी प्रकार आगे माला को धारण करने वाला, वेद का वाक् कहता है व्रणं ब्रह्मे अस्सुतं ध्रुवाणि गच्छत्प्रह्वे वाचन्नमं मूलां ब्रह्वे व्रतो दोवास्ति वेद का वाक् कहता है कि मुनिवरों! देखो, एक

सहस्र मानो देखो, ध्रुव मण्डलों की माला बनी है। ध्रुव मण्डल दृष्टिपात् आने लगे, उसकी माला, उसका सूत्र कौन है बेटा! मूल नक्षत्र, उसका मूल सूत्र कहलाता है?

मेरे प्यारे! मूल नक्षत्र इतना विशाल मण्डल है, जिसमें बेटा! एक सहस्र ध्रुव मण्डल समाहित हो जाए और वह अपने में उस माला को धारण करने वाला हो। मेरे प्यारे! देखो, आगे जब विचार विनिमय होने लगा, ऋषि अपने में विचार रहे थे, अपनी विज्ञानशाला में विचारते विचारते बेटा! एक सहस्र मूल नक्षत्र उन्हें दृष्टिपात् आने लगे, समाधि के द्वारा अणु और परमाणुओं की प्रतिभा में निहित होने लगे, मेरे पुत्रों! देखो, इस प्रकार का विज्ञान, मानव के समीप आने लगा, तो मानव अपने में और गम्भीरता से अध्ययन करने लगा। मेरे प्यारे! देखो, एक सहस्र मूल नक्षत्रों की माला बनाई और उस माला को मुनिवरों! देखो, स्वाति नक्षत्र अपने में धारण करने लगा, बेटा! स्वाति नक्षत्रों में वह समाहित हो गये। विचार करते करते आगे ऋषियों ने अनुसन्धानवेताओं ने बेटा! अनुसन्धान किया, निर्णय करने लगे। बेटा! एक सहस्र स्वाति नक्षत्रों की माला बनी हुई और उस माला को कौन धारण कर रहा है? बेटा! देखो पुष्य नक्षत्र अपने में धारण कर रहा है। एक सहस्र पुष्य नक्षत्र बेटा! ऋषि–मुनियों को समाधि के द्वारा, विज्ञान की अणु और परमाणुओं में दृष्टिपात आने लगे तो मेरे प्यारे! देखो, इस प्रकार विचार विनिमय करते हुए एक सहस्र पुष्प नक्षत्रों को जानने का प्रयास किया। मेरे प्यारे! देखो, एक सहस्र पुष्य नक्षत्र मुनिवरों! देखो, अचंग मण्डल में ओत प्रोत हो गये। एक सहस्र अचंग मण्डलों को बेटा! देखो, माला बनने लगी, माला दृष्टिपात् आने लगी। पुत्रों! कैसा यह मेरे प्यारे प्रभु का ब्रह्माण्ड है, कैसा अनन्तमयी जगत है। बेटा! जब मानो देखो, अचंग मण्डल दृष्टिपात आने लगे तो ऋषि उनके सूत्र के लिए चिन्तित हो गया ऋषि, चिन्तन करने लगा। वेद मन्त्र आने लगे, वेद मन्त्र कहता है प्रासं ब्रह्वे सम्भव प्रह्ना ग्रुरुत्म ब्रीहि व्रतम् मेरे प्यारे! देखो, वेद का मन्त्र कहता है कि एक सहस्र अचंग मण्डलों की माला को बेटा! देखो, व्रेतकेतु मण्डल ने अपने में धारण कर लिया, व्रेतकेतु मण्डल को जब चिन्तन में लाने लगे, ऋषिवर तो एक सहस्र व्रेतकेतु मण्डल दृष्टिपात् आने लगे, एक सहस्र व्रेतकेतु मण्डलों की माला बनी और उस माला को भी मेरे पुत्रों! देखो, रहेणकेतु मण्डल ने रहेणकेतु मण्डल ने बेटा! अपने में धारण कर लिया रहेणकेतु मण्डल में, जब रहेणकेतु मण्डलों के ऊपर विचार विनिमय होने लगा तो बेटा! विचारते, विचारते अन्वेषण करते करते बेटा! एक सहस्र रहेणकेतु मण्डलों की माला बनी तो उसको मेरे प्यारे! देखो, मृचिका मण्डल अपने में धारण कर गया, मृचिका मण्डल बेटा! देखो! विचारने लगे, जब समाधिष्ठ हो करके, ब्रह्माण्ड को दृष्टिपात करने लगे एक सहस्र बेटा! मृचिका मण्डलों की माला बनी उसको गन्धर्व अपने में धारण कर गया। मेरे प्यारे! देखो, एक सहस्र गन्धर्व मण्डलं ब्रह्मा बेटा! देखो, गन्धर्व मण्डल अपने में मानो देखो, अन्तिम इस माला का मनका कहलाता है। इस सूत्र का मनका कहलाता है।

एक सौर मण्डल

मेरे प्यारे! देखो, आगे विचारने लगे ऋषिवर, कि आगे ब्रह्माण्ड क्या कह रहा है। आगे ब्रह्माण्ड कहा तक जाता है? तो विचारते–विचारते यह प्रतीत हुआ मेरे पुत्रों! कि मुनिवरों! देखो, यह इतने लोकों का, इस इतनी मालाओं का एक सौर मण्डल बन गया। एक सौर मण्डल बना तो विचारा गया, अनुसन्धानवेत्ताओं ने विचारा मुनिवरों! देखो, इसमें लगभग पिच्चानवे लाख पिच्चासी हजार पांच सौ इक्सठ मुनिवरो! देखो, सौर मण्डलों की एक आकाशगंगा बनी। मेरे प्यारे! देखो, एक आकाशगंगा बनी, जो आकाशगंगा मुझे दृष्टिपात आती है। मानो देखो, ऋषि मुनि विचारने लगे अरे, ये आकाशगंगा भी किसी में समाहित होती है या नहीं?

तो बेटा! देखो, विचारने लगे ऋषिवर, तो मुनिवरो! देखो, विचारने से प्रतीत हुआ कि एक करोड़ पिच्चानवे लाख पिच्चासी हजार देखो, पांच सौ इक्सठ के लगभग बेटा! इस प्रकार की आकाशगंगा बेटा! देखो, एक निहारिका में समाहित हो गई। बेटा! देखो, इसको हम निहारिका कहते हैं। मानो देखो, निहारिका अप्रतं ब्रह्म लोकाम् बेटा! आगे वेद के ऋषि विचारने लगे, तो मुनिवरों! यह प्रतीत हुआ कि एक मानो देखो, एक अरब नवास्सी करोड़ उन्नचस लाख और मुनिवरों! देखो, इक्यानवे हजार पांच सौ के लगभग, इस प्रकार की निहारिका बेटा! देखो, अवन्तिका में समाहित हो जाती है।

तो मेरे प्यारे! देखो, यह तीन आभा में यह ब्रह्माण्ड मानो विभक्त हो रहा है मुनिवरो देखो आकाशगंगा, निहारिका अवन्तिकाओं में निहित हो रहा है। तो मेरे प्यारे! देखो, ऋषि मुनि आगे चिन्तन करने से बेटा! अन्त में मौन हो गये और यह विचारने लगे कि परमात्मा का ब्रह्माण्ड तो बड़ा अनन्तमयी माना गया है। यह ब्रह्माण्ड अपने में मानो अद्वितीय माना गया है। आज हम मानो देखो, इसके ऊपर कहां तक विचार–विनिमय करते चले जाए।

निरभिमानी वैज्ञानिक

तो बेटा! विचारने से प्रतीत हुआ कि मुनिवरों! देखो, ब्रह्मचारी कवन्धि ने राजा अश्वपति से कहा–हे राजा अश्वपति! तेरे राष्ट्र में इस प्रकार का विज्ञान होना चाहिए, जिससे मानो वैज्ञानिक अपने में अभिमानी न हो जाए क्योंकि जिस काल में, राजा के राष्ट्र में अभिमानी वैज्ञानिक हो जाते हैं, उस काल में विज्ञान का दुरुपयोग होना प्रारम्भ हो जाता है और विज्ञान का दुरुप्रयोग प्रारम्भ हो करके रक्तभरी क्रान्ति का सन्देह बन जाता है। तो हे राजन! तेरे राष्ट्र में विज्ञान अपने में अद्वितीय रहना चाहिए। परन्तु यदि तेरे राष्ट्र में महानता को तुझे लाना है तो मानो देखो, प्रारम्भ से ले करके और वृद्ध–समय तक मानव का जीवन एक अद्वितीय होना चाहिए। एक मानव दर्शनों से गुँथा हुआ होना चाहिए। तो हे राजन! मानो देखो, मेरा तो यही वक्तव्य है, मैं तो इसी आधार पर यह अपना वक्तव्य देने के लिए आया हूं कि तुम अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाओ।

मेरे प्यारे! देखो, राजा ने ऋषि के वाक्यों का पान करके वेद मन्त्रों की ध्वनियों को स्वीकार करके बेटा! देखो! उन्होंने अपने में यह स्वीकार किया कि यह ऋषि तो बड़ा अद्भुत है। मानो बड़े विज्ञान की वार्ता कह गया है। तो विचार विनिमय क्या, मेरे प्यारे! देखो, राजा के राष्ट्र में नाना वैज्ञानिक इस प्रकार की आभा वाले होने चाहिए। विचार विनिमय होना चाहिए, जब तक मानव दर्शन नहीं होगा तब तक मानव में शान्ति की स्थापना नहीं होगी। आज का हमारा वेद मन्त्र बेटा! उस परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए हम उस परमपिता परमात्मा की महती में रत हो रहे थे, विचार रहे थे कि हे प्रभु! तेरा यह अनुपम जगत हैं! तू अनुपम है मानो देखो, यह संसार रूपी यह जो याग है यह मानो देखो, क्रिया में रत हो रहा है।

हे मेरे प्यारे ऋषिवर! आओ, देखो आज हम पृथ्वी से ले करके और गन्धर्व मण्डलों तक अपनी माला की गणना करते चले जाएं और आकाशगंगाओं में चले जाएं और देखो, कहीं अवन्तिका, निहारिकाओं में प्रवेश हो करके, हम अपने जीवन को, मानवीय क्षेत्रों में ले जाएं जिससे हमारी मानवीयता पवित्र बन जाएं और विज्ञान अपने में अनूठा कहलाता है बेटा! आज मैंने तुम्हें यह विज्ञान मानो देखो, भौतिक विज्ञान की आभा में ले गया हूं, कल समय मिलेगा तो मुनिवरों! देखो, मैं महाराजा अश्वपति के यहां नाना ऋषि मुनियों का समूह मानो आध्यात्मिकवाद और आध्यात्मिक विज्ञान क्या कहता है, यह राजा के राष्ट्र के वांगमय में से प्रगट कर सकेंगे। आज का वाक् अब हमारा ये कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा को मानो सर्वत्रता में दृष्टिपात् करे, मानो देखो, उस ब्रह्माण्ड के मूल में चाहे वह जड़वत् में है, चाहे वह चैतन्यवत में है, हम परमपिता परमात्मा को निहारते रहे और दृष्टिपात करते रहे और अपनी मानवीयता को ऊँचा बना करके धर्म और मानवता को ऊँचा बना करके इस संसार सागर से पार हो जाना चाहिए। यह आज का हमारा वाक् अब समाप्त होने वाला है, कल मुझे समय मिलेगा तो कल बेटा! तुम्हें मैं ऋषि–मुनियों की चर्चायें कल और प्रगट करूंगा कि महाराजा अश्वपति के राष्ट्र में आध्यात्मिक विज्ञान का प्रसार आध्यात्मिक विज्ञान कैसे उदभुद होना चाहिए यह वाक् बेटा! मैं तुम्हें कल प्रगट करूंगा, आज का वाक् समाप्त, अब वेदों का पठन पाठन होगा। **ओ३म् मा रथं आभ्यां दधिब्रह्मा वाचन्नमः रथाः आभ्यां गताः ओ३म् रथं आभ्यां मनु वाचन्नमः ओ३म् सम्वृतारथं आभ्यां देवाः यं सर्वा यं रथाः मां धेनुः** **22–3–86 ताजपुर, बुलन्दशहर**

होलिका पर्व का स्वरूप– दिनांक–25–02–86

ओ३म् ध्राणं गत्वा माणं रथो वाचाहं माम दधि ब्रह्माः वायुगताः अपाः हाम्
ओ३म् यंजूषि यथा यंभविता आभ्यां देवं मना ग्रह्मणाम त्वा यं रथाः
ओ३म् यौशं रथाः आभ्यां देवं मनु आप्यां लोकाः यो सर्वमाहं आप्याहं

आत्मा का भोजन

ओ३म् स्वंजना रथं आपा ऋषि वरुणं ब्रह्माणा गन्धनाः अपा रेवं गायाह्म
ओ३म् समिधा अग्नं ब्रहिपाः आपो अग्नं रेवा यौ शन्ना ब्रहिता यंमयाहां
ओ३म् अग्नि मन्था यज्ञनाम ब्रीहीगाता यश्चाहम आभाम
ओ३म् माम यज्ञो हन्ती यज्ञणाना यंचना प्राभीता रेवम सर्वजम सर्वज्ञ छणा ना आपाम्
ओ३म् रथमचन क्रीताम् आभ्याम् मनुगाता यममवीतारा ओ रथा यम भक्ति रेवम आपा ऋषि ग्राहाणाम त्वा यम सर्वाम
ओ३म् दधिनाम प्रीषा रेवम गतप्रव्हीहाम जनम ब्रीवीम यहतेहाय आपाः देवम गन्तवीही पहवु सर्वत्र माम देवामः
ओ३म् यज्ञा महे स्प्रा यम भविता अग्नम् माम ब्रेबा आपा
ओ३म् मग्नम ब्रह्म महा रथे श्रुतुम जना माम गतो आभ्याम देवा मम सर्वाणी यन्धमा गता आभ्याम देवा यो सर्वाम मनच्छमाम पृथ्वी यज्ञनम ब्र३ जना गच्छम ब्रहे स्वंजना मान्म ऋषचम आभ्याम देवा

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुण गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहां, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेद–वाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेद–वाणी में, उस मेरे देव, परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है। क्योंकि वे परमपिता परमात्मा यज्ञोमयी स्वरूप है। वे परमपिता परमात्मा, विज्ञानमयी स्वरूप माने गये हैं, क्योंकि याग उसका आयतन है, उसका गृह है, उसका सदन है। इसी प्रकार विज्ञान, चाहे वह आध्यात्मिक रूप में हो, चाहे वह भौतिक विज्ञान में हो, परन्तु वह उसका आयतन है, उसका वह सदन है और उसका गृह माना गया है। इसलिए वे सर्वज्ञ और उसी में सब समाहित हो रहा है। इसलिए आज हम उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाने के लिए, सदैव तत्पर रहते हैं और सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके, वर्तमान के काल तक नाना विज्ञानवेत्ता हुए हैं, और नाना आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता भी हुए हैं और नाना यज्ञोमयी स्वरूपवादी प्राणी भी रहे हैं। परन्तु उस परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान के ऊपर, सृष्टि के प्रारम्भ से अध्ययन हो रहा है। सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके कुछ क्रियात्मकवेत्ता हुए हैं, क्रियाओं में लाने का प्रयास भी उन्होंने किया है। परन्तु देखो, उसका इतना गहन, इतना अगाध, इतना एक महान, समुद्र के तुल्य, यह भव्य जगत माना गया है कि मानव अन्वेषण करता, करता भी विचार विनिमय करता हुआ भी, मेरे प्यारे! देखो, उसकी आभा में, जब प्रवेश हो जाता है और अनुसन्धान करता, करता बहुत दूरी चला जाता है तो अन्त में वह मौन हो जाता है। क्योंकि वह इस प्रकृतिवाद का विषय नहीं रहता और जहां इन्द्रियों का, क्योंकि इन्द्रियां प्रकृतियों में हैं और इन्द्री और प्रकृति, इन्द्रियों में है इसलिए जितना भौतिक विज्ञान है वह भी मानो देखो, इन्द्रियों में समाहित रहता है। इसलिए हमारे आचार्यों ने, हम भी बेटा! ऋषि मुनियों की चर्चा करते रहते हैं। वेद के वांगमय में एक मन्त्र लिया, उसके ऊपर विचार विनिमय प्रारम्भ किया। परन्तु देखो, वह इतना गम्भीर रहस्तम् बना रहता है सदैव, क्या मानव, अन्त में मौन हो जाता है, वाणी, रस में रसा, वाणी में वाणी उदगीत गाने में असमर्थ हो जाती है।

आध्यात्मिक याग

तो बेटा! मैं एक गम्भीर क्षेत्रों में तो तुम्हें ले जाना नहीं चाह रहा हूं। परन्तु रहा, कि यह कितना विचित्रवाक् है, एक मानव अपनी स्थली पर विद्यमान है मानो देखो, वह नेत्रों से रूप को ले रहा है। मेरे प्यारे! देखो, श्रोत्रों से शब्द को ले रहा है और घ्राण से मुनिवरो! देखो, मन्द सुगन्ध को ले रहा है और रसना से नाना प्रकार के षड् रसों को ले रहा है और त्वचा से भिन्न–भिन्न प्रकार की स्पर्श सत्ता को ले रहा है। मेरे प्यारे! देखो, इनका समन्वय कहां हैं? नेत्रों का समन्वय अग्नि से रहता है। और मुनिवरो! देखो, श्रोत्रों का समन्वय, अंतरिक्ष से रहता है। नेत्रों का समन्वय अग्नि से और श्रोत्रों का समन्वय अन्तरिक्ष से और मुनिवरो! देखो, दिशाओं से, एक–एक आभा में दो–दो प्रकार की प्रतिभाएं दृष्टिपात् आती हैं परन्तु देखो, जब घ्राण में जाते हैं, तो घ्राण का समन्वय पृथ्वी से हैं। पृथ्वी की मन्द सुगन्ध को विचारता रहता है परन्तु देखो, ये जो स्पर्श क्रिया है इसका समन्वय वायु से है और मुनिवरो! देखो, यह जो वृत्तियाँ वाणी है, रसना है इसका समन्वय भी बेटा! देखो, पृथ्वी के रसों से रहता है। परन्तु देखो, वह रसाः स्वादनानि ब्रह्मां वह बेटा! देखो, रस जलों से समन्वय रहता है। उसका समन्वय जल से रहता है, आपो से रहता है। परन्तु एक बड़ा विचित्र वाक् है बेटा! जो आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ताओं ने कहा है क्या इन पांचों स्वरूपों को ले करके रूप, रस, गन्ध, शब्द, और स्पर्श। मेरे पुत्रो! देखो, पांचों की जो प्रतिक्रियाएं हैं वह बाह्य जगत में है और बाह्य जगत से मानव के हृदय में समाहित हो जाती है। मेरे प्यारे! देखो, आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता जब इसके ऊपर विचार करते हैं, तो मानो देखो, रूप का वह साकल्य बनाता है; रसों का साकल्य बना रहा है और इन सब का साकल्य बना करके वह जो अन्तर्हृदय में मुनिवरो! देखो, चहुंमुखी जो हृदय है, उस हृदय में जो ज्ञानरूपी अग्नि है, जो स्वाभाविक अग्नि जागरूक हो रही है उसमें बेटा! वह सिमट जाता है और सिमट करके वह आध्यात्मिक याग करता है।

याग के दो प्रकार

मेरे प्यारे! देखो, इसका प्रत्येक मानव अपने में बहुत गम्भीरता से अध्ययन जब करता है, एकान्त स्थलियों पर विद्यमान है बेटा! वह परमात्मा की सृष्टि को निहार रहा है, इस पंचीकरण को निहार रहा है और निहारते–निहारते वह कितनी दूरी मानो अपने हृदय में, रूप को दृष्टिपात् करता है, वह हृदय में समाहित है। शब्द को ग्रहण करता है, वह हृदय में समाहित है। गन्ध को लाता है, वह हृदय में समाहित है। मेरे प्यारे! देखो, स्पर्श क्रिया को लाता वह हृदय में समाहित है। नाना प्रकार के रसों का ज्ञान भी हृदय से समन्वय रहता है। इसलिए हृदय हमारा मानो एक अगम्मयी ज्योति है इस हृदय का मिलान जब परमपिता परमात्मा के हृदय से, हृदय अगम्य बन जाता है, समन्वय हो जाता है। उसी समय बेटा! देखो, मानव एक अपनी मोक्ष की पगडण्डी को ग्रहण करने लगता है।

तो बेटा! आज मैं दूरी नहीं जा रहा हूं, केवल विचार विनिमय यह कि मैंने आध्यात्मिक, एक आख्यिका तुम्हें प्रगट की है परमपिता परमात्मा का यह सब आयतन माना गया है। परन्तु द्वितीय वाक् मुझे मेरे प्यारे! महानन्द जी से यह प्रेरणा प्राप्त होती रहती है, आज भी हो रही है कि याग के संबंध में कुछ उच्चारण किया जाए। परन्तु देखो, यागां ब्रह्मे लोकाम् यह मैंने बेटा! एक आख्यिका, आध्यात्मिक विज्ञान के सम्बन्ध में तुम्हें प्रगट की है। आध्यात्मिकवाद यहां मानो देखो, आभा में नियुक्त होता है, उड़ान उड़ने वाले, उड़ते रहते हैं। कोई अन्तरिक्ष की उड़ान उड़ रहा है, कोई वायु में गति कर रहा है। ऐसे योगी हुए हैं इन क्रियाओं को जान करके, जो सूर्य की किरणों के साथ बेटा! सूर्य मण्डल में भी पहुंच चुके हैं।

आज मैं इस सम्बन्ध में भी विशेष तुम्हें विचार देना नहीं चाहता हूं। ये तो हमारा विचार एक मानो देखो, मानवीय दर्शनों से गुँथा हुआ है, हमारा किसी मानव का, यह विचार नहीं, ये जो वेद की आख्यिकायें आती रहती है इनमें इस प्रकार की विवेचनाओं का वर्णन आता रहता है। परन्तु रहा याग के सम्बन्ध में हमारे यहां दो प्रकार के याग परम्परागतों से होते रहे हैं। एक याग, हमारे यहां आध्यात्मिक याग है जिसको योगीजन करते हैं। एक याग, भौतिक याग कहलाता है, जिसमें यजमान विद्यमान हो करके, यजमान होताजन मानो देखो, एक याग प्रारम्भ करते हैं और वह जो याग है, वह अपने में अद्वितीय माना गया है। वह वायुमण्डल को पवित्र बनाता है। जब वायुमण्डल में पवित्रता आ जाती है तो मुनिवरो! देखो, मानव अपने सद्गुणों को अपनाना प्रारम्भ कर देता है। जब तक हमारा वायुमण्डल ही पवित्र नहीं है हमारे अंग संग रहने वाला जो वायुमण्डल है, वातावरण है वह इतना पवित्र होना चाहिए कि वह राष्ट्रीयता हो, चाहे वह मानवीयता हो, चाहे वह देवत्व क्यों न हो। हमारे यहां ऋषि मुनि जब मानो देखो, साधना में प्रवेश करते हैं, कोई भी अनुष्ठान करते, उस अनुष्ठान से पूर्व वह मानो अपने अंग संग रहने वाला जो वायु मण्डल है, उसे प्रायः वह पवित्र बनाते रहे हैं। वे महान बनाते रहे हैं। पर क्योंकि देखो! उन्हें योगाभ्यास में या गृह में प्रवेश करना है, गृह में प्रवेश करना भी मानो देखो, एक आख्यिका बड़ी विचित्र मानी गई है।

जब मानो देखो, पति और पत्नी के हृदय में, यह आकांक्षा उत्पन्न होती है कि पुत्रो भवितां यागां रुद्र भागप्रह्वे वेद का आचार्य कहता है जब इनके हृदयों में यह आकांक्षा उत्पन्न होती है कि हम पुत्र याग करेंगे तो उस समय यागां ब्रह्मे व्रतप्तेप्रहा मानो वह याग क्रिया करते हैं, याग करते हैं, अग्नि होत्र

में, अग्नि में अपना साकल्य और वायुमण्डल को पवित्र बनाते हैं। उसके पश्चात् वह यागाः पुत्र ब्रह्वे व्रताम् आचार्यों ने ये कहा इसके पश्चात् वह पुत्रेष्टि मानो पुत्र याग करते हैं। पति पत्नी की ये कामना होती है। माता जब पुत्र याग कर लेती है, जब शिशु गर्भ में प्रवेश हो जाता है तो उसके पश्चात् उसका अध्ययन, उसका तप, उसकी मानवीयता का एक मौलिक गुण प्रारम्भ हो जाता है। मानो देखो, उसको अपने गर्भ स्थल में, शिशु को सुयोग्य बना देती है, अपना संस्कार दे देती है, अपने धुये हुए विचारों को उसमें परिणत कर देती है। उसी प्रकार का आहार, उसी प्रकार का व्यवहार मानो देखो, अपने में जैसे महर्षि आशकाचार्य ने वर्णन किया। जैसा मानो वेद के मन्त्र भी इस प्रकार के अन्य आते रहते हैं।

याग से वृष्टि

आज मैं याग के सम्बन्ध में केवल यह कि मुनिवरो! देखो, हमारे यहां प्रारम्भ के कालों में प्रायः ऐसा आचार्यों ने वर्णन किया है हमारे ऋषि मुनियों ने, मेरे पुत्रों! देखो, जब यागां ब्रह्मे महाराजा अश्वपति के यहां प्रायः याग होते रहते थे। हमारे यहां भगवान राम का जीवन जब स्मरण आता है तो मानो देखो, उस कालों में भी याग की प्रतिक्रियाएं रही हैं। परन्तु देखो, जिस भी काल में कोई अकाल पड़ा है, चाहे वह पण–अकाल हुआ है, चाहे उष्ण अकाल हुआ है। चाहे वह देखो, नरा वृत्तियों में मानो देखो, वह अस्सुतम् अकाल हुआ है। किसी प्रकार का अकाल हुआ तो राजाओं ने, प्रजाओं ने मिल करके मुनिवरो! देखो, पुरातन कालों में बेटा! याग की परम्परा को लाये और याग किया, वायुमण्डल का शोधन किया। अपने विचारों को पवित्र बना करके, मानव याग करने से बेटा! देखो, वृष्टि प्रारम्भ हो गई है। अति वृष्टि हो गई है तो वह समाप्त हो गई है। मानो देखो, आज मैं यह दिवस अप्रतं ब्रह्मे लोकाम् मानो देखो, जहां हमारे यहां भी एक परम्परा मानी जाती है। अब मैं विशेष चर्चा न देता हुआ अब मेरे प्यारे महानन्द जी दो शब्द उच्चारण करेंगे।

पूज्य महानन्द जी

ओ३म् यशाः ग्रणं ब्रह्मां लोकं सर्वाः।

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! मेरे भद्र ऋषि मण्डल! अभी–अभी मेरे पूज्यपाद गुरुदेव गागर में सागर की कल्पना कर रहे थे। क्योंकि जितने इन्होंने अभी तक वाक् उच्चारण किए हैं, एक एक वाक् में, गागर में सागर की कल्पना होती रहती है। मानो इन विचारों की व्याख्या मानव करने लगता है तो व्याख्याकार, व्याख्या करता करता बहुत दूरी चला जाता है। परन्तु इन्होंने संक्षेप में अपना एक व्यक्तव्य, अपना एक विचार दिया, आज मैं कोई व्याख्याता नहीं हूं क्योंकि पूज्यपाद गुरुदेव के समक्ष आ करके मैं अपनी विचार धाराएं मानो उदगीत रूप में गाने लगूं, तो यह मुझे कोई सुशोभनीय नहीं है। क्योंकि इनके विचार, इतने गम्भीर और मानवीयता से गुंथे हुए हैं। जिन विचारों को हम परम्परागतों से अपनाते रहे हैं और राष्ट्र भी अपनाता रहा है। आज जहां हमारी यह आकाशवाणी जा रही है, वहां एक भव्य याग सम्पन्न हुआ है। उस याग को पूर्णता के आंगन पर ले गये हैं। आज मेरा अन्तरात्मा बड़ा प्रसन्न हो रहा है। और मेरा तो हृदय सदैव यजमान के साथ रहता है। मानो मैं यह कहा करता हूं हे यजमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे। जिस गृह में याग, जैसे महान क्रियाओं में, द्रव्य का सदुपयोग होता है, वह गृह बड़ा सौभाग्यशाली होता है। मानो देखो, जब मैं ये विचार, पूज्यपाद गुरुदेव को, जब मैं यह परिचय देता रहता हूं तो मेरे पूज्यपाद गुरुदेव मुझे नाना प्रकार की कुछ प्रेरणामयी वाक्यों को प्रकट करते रहते हैं। परन्तु आज मैं इन वाक्यों को इसलिए हे यजमान! मानो तेरे द्रव्य का सदैव सदुपयोग होता रहे। जिस गृह में द्रव्य का सदुपयोग होता है वह गृह स्वर्ग कहलाता है। और जिस गृह में द्रव्य का दुरुपयोग होता है वह गृह नारकिक होता है वह गृह पवित्र नहीं हुआ करता है।

होलिका का अभिप्रायः

परन्तु रहा यह कि आज मेरे पूज्यपाद गुरुदेव, मैं आज पूज्यपाद गुरुदेव को एक और नवीन परिचय दे रहा हूं और वह परिचय क्या है कि आज वह दिवस आ रहा है, जिस दिवस में मानो देखो, कृषक, देखो, राजा और प्रजा मिलन करके और वह यागों का आयोजन किया जाता है। यह वह दिवस है जिसको हमारे यहां होलिका कहते हैं। इस दिवस का नामोकरण होलिका कहलाता है। होलिका का अभिप्राय यह है कि जो प्रकृति कि मानो देखो, पूजा की जाती है। जिस दिवस में देखो, यहां याग किए जाते हैं, पंचीकरण यागों में मानव सदैव परिणत रहता है, कृषक और प्रजा एकत्रित हो करके, आज के दिवस प्रभु से प्रार्थना करते हैं और प्रभु से कहते हैं। इसलिए होलिका का यह दिवस है, यहां नवीन अन्न आता है, और मानो देखो, वृदं ब्रह्मे इस नवीन अन्न के, माता पृथ्वी के गर्भ में, वसुन्धरा के गर्भ में, जो अन्न विद्यमान है वह कृषक के मानो गृह में प्रवेश होने वाला है, इसलिए देवताओं से याचना की जाती है और याग और सुगन्धित की जाती है जिससे वायुमण्डल मानो देखो, उससे भरण हो जाए और भरण हो करके, वायुमण्डल पवित्र हो करके, महान अन्न की उत्पत्ति करे, और वह मानो देखो, उससे वृष्टि न हो, अति वृष्टि न हो क्योंकि देखो, अन्नाद में किसी प्रकार की हानि न हो पाये। ऐसा मानो देखो, मैं परम्परागतो से ही दृष्टिपात् करता रहा हूं।

भगवान राम का काल

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव और हम मानो देखो, राम के काल में नाना गृहों में नाना नगरों में भ्रमण करके और देखो, याग को दृष्टिपात करते रहते थे। भगवान राम का काल तो एक ऐसा विचित्र काल रहा है, भगवान मनु का काल भी ऐसा ही रहा है, जहां प्रत्येक गृह में वेद ध्वनि, याग की सुगन्धि आना और वायुमण्डल मानो उससे भरण होना। आज मैं उसके विपरीत दृष्टिपात कर रहा हूं भगवन्! आज देखो, आज का जो दिवस है यह याग का है, यह प्रीति का है मानो देखो, पति और पत्नी और भोजाई और विधाता सब एक दूसरे के समीप जैसे यह माता वसुन्धरा मानव को खनिज देती है, मानव को खाद्य प्रदान करती है और वह खाद्य मानो देखो, उससे राष्ट्र का निर्माण, मानव का निर्माण, समाज की प्रतीति मानो उसी से प्रतीत होती है और देखो, इस दिवस प्रत्येक मानव शुद्ध आहार करके, पवित्र आहार करके देखो, याग जैसे क्रियाकलापों को करता रहा है। परन्तु देखो, महाभारत काल के पश्चात् जो उसका स्वरूप अशुद्ध हुआ है वह कैसा हुआ है? क्या उसमें देखो, नाना समिधाओं को क्या, नाना कृतियों को ले करके और मानो देखो अशुद्ध कुड़ कृतियों में, एकत्रित करके उसमें अग्नि प्रदीप्त कर देते हैं। उसमें नाना प्राणी भक्षण हो जाते हैं नाना प्राणियों का भक्षण हो जाता है वह माना याग न रह करके, एक अशुद्ध प्रतिक्रिया बनती चली जा रही है। ये प्रतिक्रियाएं समाप्त होनी चाहिए।

पुरातन काल में होलिका

मानो देखो, मेरी पुत्रियां प्रातःकालीन, क्या सांयकाल को मानो देखो, याग के लिए तीन–तीन समिधा ले करके, याग में प्रदीति मानो देखो, याग की प्रथा को ऊर्ध्वा बनाने वाली, मेरी पुत्रियां मानो देखो, स्वच्छ वस्त्रों को धारण करके मानो उसमें प्रभु के गान गाते हुए, जहां याग होता है, वहां समिधाओं को ले करके जाते हैं। समिधाओं का स्वरूप महाभारत के काल में समाप्त हुआ। तो मानो देखो, गौ का जो गोबर होता है उसकी मानो देखो, उपलियां वृत्त बना करके उसको सुकंग करती हुई मानो देखो, उसमें होलिका का एक स्वरूप बना। परन्तु वह भी सूक्ष्म होता चला गया। आज तो यह प्रतीत होता है अरे, ये समाज, ऋषियों का समाज कहां चला गया? ये ऋषियों की प्रतीत कहां चली गई उनकी अनुभूति कहां चली गई है, मानो देखो, ये मुझे ऐसा प्रतीत होता है ये जब वाम मार्ग प्रथा बन गई है। ये समाज वाममार्गी बनता चला जा रहा है। मुझे स्मरण आता रहता है हमारे यहां महात्मा दुर्वासा हुए हैं। वे दुर्वासा मुनि मानो देखो, दक्षिणा ब्रह्मे अपने यागों में परिणत रहते थे। आज उनकी मानो संतान का वर्गीकरण है, वह इस प्रकार अशुद्ध बन गया कि वाममार्ग की प्रथा में परिणत हो गया है। आज जब मैं इन विचारों को लाता हूं। हे मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! आज वह होलिका है। देखो। वह मन विचारों में एक मानो देखो, एक ऐसी प्रथा बनाई, कि महाराजा प्रहलाद से देखो, इस होलिका के पर्व को मानो उससे कटिबद्ध करते हैं। प्रायः देखो, उससे भी कटिबद्ध हो सकता है। मैं इसका विरोधी नहीं, परन्तु उसमें एक प्रथा लाते हैं कि हिरणाकुश अपनी बहन होलिका से कहते हैं कि हे मेरे पुत्र प्रहलाद को नष्ट करो, क्योंकि यह मेरे राष्ट्र को अपनाना चाहता है, यह मेरे राष्ट्र की परम्परा को अपने में धारण करना चाहता है। तो उस समय जब होलिका उसे ले करके विद्यमान हुई तो होलिका समाप्त हो गई और प्रहलाद का जीवन सुरक्षित हो गया। ऐसी मानो एक युक्तियां प्रकट की जाती हैं परन्तु देखो, इसका मैं विरोधी नहीं हूं क्योंकि प्रहलाद अग्नि में से जब मानो दूरी हो गया, प्राणों की रक्षा हो गई, होलिका समाप्त हो गयी। चलो, यह भी हम स्वीकार करते हैं परन्तु देखो, वह वास्तव में

सदैव सत्य प्रतीत नहीं होती है, वास्तव में एक अलंकार सा प्रतीत होता है। जब मैं यह विचारता हूं। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! तो मुझे वर्णन किया करते हैं कि जिसकी प्रभु रक्षा करते हैं, तो वह अन्य प्रकारों से हो जाती है। परन्तु रहा यह कि वह होलिका समाप्त हो गई, प्रहलाद की रक्षा हो गई। तो विचार यह कि जितनी दुरिता की भावना है वह प्रथा के रूप में नष्ट हो जाए और प्रहलाद जो मनोभावना है, पवित्रता है, उनकी रक्षा होनी चाहिये। मानो देखो, ऐसा मेरा अनुभव रहा है। मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को निर्णय कराता रहता हूं। आधुनिक काल में जहां पवित्र आहार को पान करते हैं और वहां देखो, ब्राह्मण जन क्या? देखो, प्रजा क्या, राजा सब याग करते हैं माता वसुन्धरा की याचना करते हैं, वहां आधुनिक काल में, वर्तमान के काल में देखो, सुरापान कर करके देखो, अपने आहारों को अपवित्र बना करके और उनमें एक वाममार्ग प्रथा आ गई है। मेरी पुत्रियों के श्रृंगारों पर भी देखो, आक्रमण किया जाता है यह मैं केवल एक प्रथा है, जिस प्रथा के लिए मानो देखो, मानव को अपनी आभा में निहित रहना चाहिए।

वाममार्गीय प्रथा

मुझे स्मरण आता रहता है आज मानो देखो, मानव जब अपने आहार और व्यवहारों को अपने पर्व के दिवस नष्ट कर देता है तो वह पर्व ही क्या रह गया? वह कोई पर्व नहीं रह पाता। यह तो ऋषि मुनियों की एक प्रथा है। ऋषि–मुनि कहते हैं, कि इस दिवस याग होना चाहिए। यह पूर्णिमा का दिवस है, इसका चन्द्रमा से समन्वय है क्योंकि चन्द्रमा अपनी सम्पन्न कलाओं से युक्त होता है। आज के दिवस मानो देखो, चन्द्रमा अपनी सम्पन्न कलाओं से, षोड्श कलाओं को धारण करता है। षोड्श कलाओं में मानो देखो, इस संसार का सर्वत्र नृत हो रहा है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव! जब मैं इन वाक्यों को लाता हूं, यह प्रथा कहां से प्रारम्भ हुई है, सुरापान करना, सुन्दरी का पान करना यह सब वाममार्ग की प्रथा कही जाती हैं। महाभारत के काल के पश्चात् जब वाममार्ग समाज में, यागों में मांस की आहुति देना प्रारम्भ किया, मानो सबसे प्रथम मानव समाज ने देखो, यज्ञ में मांस की आहुति देना प्रारम्भ किया। उसके पश्चात् उसको प्रसाद के रूप में पान किया। अरे मानव! समाज, याग का तिरस्कार होने से जहां यह देखो, अहिंसा परमोधर्मा का एक सबसे ऊँचा एक प्रतीत माना गया है। मानो देखो, महाभारत काल के पश्चात् वाममार्ग ने देखो, इसी वाममार्ग में मोहम्मद के मानने वाले हैं, इसी वाममार्ग में ईसा के मानने वाले हैं, मानो देखो, कहां तक, मानव ने जिस उदर में अमृत को पान करना है, अन्नाद जो प्रभु ने दिया, उसे पान करना है वहां इस मानव के उदर को देखो, मानव समाज ने देखो, अपने में एक हिंसा का एक क्षेत्र बना लिया है या मैं यह कह सकता हूं क्या देखो, यह कब्रिस्तान बना लिया है अपने उदर को, अपने शरीरों को, इसमें नाना प्राणियों के मांसों का भक्षण करने वाला प्राणी है। आज मैं मानो देखो, धृष्टता कर रहा हूं ऐसे वाक्यों का प्रतिपादन कर रहा हूं, परन्तु क्या करें, यह सत्यता का उच्चारण करना मेरे लिए सुशोभनीय होता है।

धर्म इन्द्रियों में

आज मैं मानो देखो, जब सत्ता के ऊपर, जब मानव, मानव का भक्षण कर रहा है, प्राणी, प्राणी का भक्षण कर रहा है। अरे मानव! तू यह नहीं विचारता कि परमपिता परमात्मा ने ये जो अन्य प्राणियों को जन्म दिया है ये प्राणी एक दूसरे में मेरे पूज्यपाद गुरुदेव कहा करते हैं। ये एक–दूसरे के परोपकार में पिरोये हुए हैं, और यह माला के सदृश्य कहलाये जाते हैं। जब मैं यह विचारता हूं अरे मानव! तू दूसरे के गर्भों को पान कर रहा है। मानो तुझे लज्जा आनी चाहिए। जब तू अपने से लज्जित होता है, अपनी अन्तरात्मा से पुकार, अपनी अन्तरात्मा से यह प्रश्न कर और यदि तेरा अन्तरात्मा प्रसन्न है उस आहार को करके, तो तू योगी बन जायेगा और यदि तेरा आत्मा ही प्रसन्न नहीं, उस आहार को करके तो वह आहार तेरी बुद्धि को नष्ट करके तेरा मानो कुबुद्धि में ले जा करके मानो देखो, उस क्षेत्र में ले जाता है जहां तुझे प्रकाश का एक अंकुर भी प्राप्त नहीं होगा। मानो देखो, ऐसे क्षेत्र में तू चला जाता है।

परन्तु आज का विचार क्या, देखो, यह वाममार्ग प्रथा, यागों में मांस की आहुति, परन्तु देखो मध्यकालीन आचार्यों का यह मन्तव्य रहा है आचार्यों ने ये कहा है कि नहीं, इसमें हिंसा नहीं होनी चाहिए। समय समय पर आचार्यजन आते रहे हैं, और अपने विचारधारा का उत्थान करके, क्रियाकलापों का उत्थान करके चले जाते हैं। जब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से याग के सम्बन्ध में कोई प्रश्न करता हूं तो मानो मेरा अन्तर्हृदय एक ऐसी धारा में रमण कर जाता है, जहां मैं उन्हें उत्तर नहीं दे पाता। परन्तु देखो, विचार क्या, मानव को याग करना है, अहिंसा परमोधर्मा में परिणत होना है, इससे वायुमण्डल पवित्र होता है। आधुनिक काल का जो विज्ञानवेत्ता है वह कुछ ही समय में मानो देखो, याग जैसे क्रियाकलापों को अपनाने वाला है और वह इसलिए अपनाने के लिए, क्योंकि इससे वायुमण्डल पवित्र होता है। इससे वायुमण्डल में एक महानता की धाराओं का जन्म होता है। दूषित वायुमण्डल समाप्त हो जाता है। मेरे पूज्यपाद गुरुदेव अभी–अभी अपने विचारों की एक भूमिका बना रहे थे, कि ऋषि–मुनि जब साधना में परिणत होते हैं, परन्तु देखो, साधना के क्षेत्रों से पूर्व भी याग करते हैं। माता–पिता सन्तान से पूर्व अपने विचारों को विशुद्ध बनाने के लिए याग करते हैं, परन्तु देखो, यागां ब्रह्म लोकाम् इसलिए याग हमारे यहां, नाना प्रकार की आभा में नियुक्त हैं। मैं राजा से ये कहता हूं हे प्रजाओं! राजा से कहो, कि क्या संसार में भिन्न–भिन्न प्रकार की रूढ़ि नहीं रहनी चाहिए। ये जो धर्म के नामों पर यह नाना प्रकार की रूढ़ियां हैं, मैं इसका संकेत देता रहता हूं जैसे मोहम्मद के मानने वालों की रूढ़ि, ईसा के मानने वालों की रूढ़ि, और भी नाना प्रकार की रूढ़ियां कहलाती हैं। उन रूढ़ियों में धर्म के नामों पर रूढ़ि नहीं होनी चाहिए। क्योंकि धर्म एक है, धर्म अनेक नहीं होते। अनन्य धर्म नहीं हुआ करते हैं। धर्म केवल एक होता है नेत्रों से सुदृष्टिपान करो, तो पूजन होता है, कुदृष्टि पान करोगे तो तुम्हारा अन्तरात्मा तुम्हें धिक्कारने लगेगा। मानो इसी का नाम धर्म है। धर्म मानव की प्रत्येक इन्द्रियों में समाहित रहता हैं।

राष्ट्रीयता की मौलिकता

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे कई काल में ये वर्णन कराया है उसी वर्णन शैली में, आज पुनः से मैं कुछ विचारों की मानो पुनरूक्तियाँ भी करता रहता हूं। विचार क्या मानो देखो, कोई भी हो धर्म केवल एक है और ईश्वरीय नियम भी सर्वत्र प्राणियों के लिए एकोकी माने जाते हैं। परन्तु विचार विनिमय क्या, इसका निराकरण राजा को करना चाहिए। बुद्धिमान् राजा हो और राजा अपने नाना प्रकार के सम्प्रदायों को एकत्रित करने वाला हो और एकत्रित करके मानो देखो, उनका बारी बारी शास्त्रार्थ हो, जो विचार, जो धर्म, जो मानवीय दर्शन, ज्ञान और विज्ञान पर और मानवीय दर्शन से जो सुगठित हो जाए, वही उसी परम्परा को अपनाना ही यह राष्ट्रीयता की मौलिकता मानी जाती है। और यदि इन वाक्यों को नहीं अपनाता है राजा, और वह, सुरा और सुन्दरी में लगा रहता है या नाना प्राणियों के मांसों को भक्षण करके, अपनी बुद्धि को नष्ट कर रहा है अपनी जीविका को समाप्त कर रहा है मानो देखो ऐसा राजा, इस संसार को सुखद के मार्ग पर नहीं ले जा सकता।

सुखद का मार्ग वह होता है जब राजा स्वयं अपना कृषि उद्गम करता है उसके बदले अन्न को पान करता है और वह राष्ट्र के क्रियाकलापों में लगा रहता है और अपनी सद्भावना प्रजा से ले करके...। हे प्रजाओं! जाओ, तुम यथार्थ, हे ब्राह्मण समाज! तू मानो देखो, पाण्डित्व को आभा में लाने वाले, तू राजा से कह, कि वैदिकता को अपनाने का प्रयास कर, जो वेद में मौलिक गुण हैं उनको राष्ट्र में अपनाने का प्रयत्न कर, याग जैसे कर्म को, जहां चहुंमुखी सुगन्धि–सुगन्धि उत्पन्न होती हो, ऐसे क्रियाकलापों को अपना करके और रूढ़िवाद समाप्त हो जाए तो राजा उस काल में देखो, सार्थक बना करता है और यहां महाभारत काल के पश्चात् बहुत समय हो गये हैं पूज्यपाद गुरुदेव को तो इतना प्रतीत नहीं है। मैं इस संसार को दृष्टिपात करता चला आया हूं, धर्म के नामों पर रक्त बहाया जा रहा है, धर्म के नामों पर राष्ट्रीयता नष्ट हो रही है, मेरी पुत्रियों के श्रृंगार को हनन किया जाता है, मानो देखो, धर्म के नामों पर। धर्म एक रूढ़ि बन करके रहती है; यह धर्म नहीं कहा जाता। धर्म के नामों पर तो रक्षा होती है, धर्म के नाम पर रक्षा होनी चाहिए, न कि श्रृंगार को हनन किया जाए, देखो, जब भी श्रृंगार हनन होता है, रूढ़िवाद में होता है, अज्ञान में होता है, संकीर्णता में होता है, द्रव्य की लोलुपता में हुआ करता है। परन्तु देखो, यह नहीं होना चाहिए। यहाँ कोई भी हो, परन्तु राजा को चाहिए कि अपने विचारों को मानो देखो, प्रजा में एकोकी मानवीयता को अपना करके, अपने राष्ट्र को ऊँचा बनाये और नाना सम्प्रदायों ये समाप्त होने चाहिए, नाना सम्प्रदाय मानो कोई सम्प्रदाय नहीं होता। क्योंकि धर्म और मानवीयता का एक ही सूत्र कहलाता है। वे एक ही सूत्र के मानो सब मनके कहलाते हैं।

होलिका पर्व क्यों?

विचारधारा यह, आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को यह परिचय दे रहा हूं। क्या हे भगवन्! आज का यह जो दिवस है यह होलिका का, एक पर्व माना गया है। यह पर्व क्यों रचाए गये हैं? यह मैंने अभी–अभी चर्चाएं की हैं देखो, वसुन्धरा के गर्भ से अन्न आने वाला है, उसके लिए प्रभु से और देवता, देव यज्ञ करके उपासना की जाती है। कि आओ, हमारा अन्न शुद्ध रूप से हमारे गृह में प्रवेश हो जाए। इस प्रकार एक की भावना से वायुमण्डल को मानो पवित्र किया जाता है। अनावृष्टि, अतिवृष्टि न हो जाए। विचार विनिमय क्या, आज मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव को, इन शब्दों की विवेचना देने आया हूं। परन्तु रहा यह कि संसार में नाना प्रकार की रूढ़ियां हैं, नाना प्रकार का गुरुड़म्बवाद इस मानव समाज में मानो परिणत हो रहा है क्योंकि धर्म को न जान करके, अज्ञानता के मार्ग पर चला जा रहा है। अज्ञान नहीं होना चाहिए, ज्ञान होना चाहिए, आत्मीय ज्ञान होना चाहिए। ये नाना प्रकार की जो मैं दृष्टिपात कर रहा हूं आज देखो, जहां ऋषि–मुनियों का पवित्र मानो देखो, प्रवाह गति करता रहता था, ध्वनियों पर ध्वनियां होती रहती थीं, वहां केवल कानावती वाली वार्ताएं आ रही हैं भगवन्! कानावती किसे कहते हैं? कानावती कुरर तू शिष्य और मैं गुरु दोनों मानो देखो, एक नौका में विद्यमान हैं। जाने कहां जा करके यह नौका समाप्त होगी। मैं इस वाक् को स्वीकार नहीं।

समाज की पवित्रता

मेरे पूज्यपाद गुरुदेव ने मुझे वर्णन कराया है, परम्परागतों से सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके मानो देखो, मन और प्राण दोनों का समन्वय होना चाहिए। जब मन और प्राण दोनों समन्वय होता है, वेद–ध्वनि आती है। उस ध्वनि का परिणाम यह होता है कि समाज पवित्र बन जाता है। पवित्रता की आवश्यकता है और दर्शन और ज्ञान की आवश्यकता है। ज्ञान नहीं है, तो ध्यान नहीं हो सकता। ज्ञान नहीं है तो विवेक नहीं होगा और जब विवेक नहीं होगा तो त्याग नहीं होगा और जब त्याग नहीं होगा, तो यह संसार मानो देखो, निष्क्रिया में दृष्टिपात् आता रहेगा।

इसलिए त्याग और विवेक मानो देखो, यह बहुत अनिवार्य हैं। जब प्रभु के नामोकरण में परिणत होते हैं, जब हमारे संस्कार ऊर्ध्वा में निर्माणित हो करके प्रभु के द्वार पर पहुंचे, यह आज का वाक् मैं विशेष चर्चा देने नहीं आया हूं, मैं अपने परम्परा के जो क्रियाकलाप है, परम्परा की जो आभाएं हैं उनके वाक्यों में कुछ प्रगट कर रहा हूं। क्या मानव को मांस देखो, इत्यादि सुरा, सुन्दरी में संलग्न नहीं रहना चाहिए। ज्ञान और विज्ञान में रत रहना चाहिए। आध्यात्मिक विज्ञान का चिन्तन होना चाहिए, और संसार के क्रियाकलापों में भी रत रहना चाहिए। परन्तु देखो, द्रव्य का सदुपयोग होना चाहिए। अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊँगा, इससे पूर्व हे यजमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे, तेरे गृह में सदैव देखो, द्रव्य का सदुपयोग होता रहे, अग्न्याधान, जो ऋषि–मुनियों की परम्पराएं मानो देखो, क्रियाकलाप हैं, वैदिक पवित्रता इसको अपनाना तेरा कर्त्तव्य है और आज वाक् अब यह समाप्त होने जा रहा है। आज के विचार उच्चारण करने का अभिप्राय यह क्या देखो हे यजमान! तेरे जीवन का सौभाग्य अखण्ड बना रहे और क्रियाकलापों में सदैव सरत रहे देखो, द्रव्य का सदुपयोग होना, यही तेरी मानवीयता है। आज का विचार, अब मैं अपने पूज्यपाद गुरुदेव से आज्ञा पाऊँगा।

पूज्यपाद गुरुदेव

मेरे प्यारे ऋषिवर! मेरे प्यारे महानन्द जी के हृदय में, एक बड़ी विडम्बना रहती है। परन्तु वह विडम्बना है रूढ़िवाद की, वह विडम्बना है राष्ट्रीयवाद की, क्योंकि राजा का हृदय पवित्र होना चाहिए जैसा इससे पूर्व कालों में, हमने महाराजा अश्वपति की चर्चाएं की, भगवान राम का जीवन भी स्मरण आता रहा है। तो इसीलिए मानव को चाहिए, कि अपने आहार, अपने व्यवहार को विशुद्ध बनाए क्योंकि मानवीयता अपनी स्थलियों में सदैव पवित्र बन करके रही है। आज का विचार विनिमय क्या, कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए और अपनी ज्ञानेन्द्रिय, कर्मेन्द्रियों को पवित्र बनाते हुए, एक सूत्र में प्रवेश करके परमपिता परमात्मा का स्मरण और हृदय रूपी यज्ञशाला में हम आध्यात्मिक यागों में परिणत होते रहें, आज का विचार समाप्त, अब वेदों का पठन–पाठन होगा। **ओ३म् देवाः यं स्थाः मानं वाचन्नमः,हृदश्मा मनु आ पा ऋषि वाचन्नमः। अच्छा भगवन्** **25–02–86** **सुवाहेड़ी**

मृत्यु स्वरूप की चर्चाएँ–दिनांक–11–07–87

जीते रहो!

देखो मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से जिन वेद मन्त्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहां परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेद–वाणी का प्रसारण होता रहता है, जिस पवित्र वेद–वाणी में उस मेरे देव, परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाया जाता है, क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गये हैं और जितना भी ये जड़ जगत है अथवा चैतन्य जगत है, उस सर्वत्र ब्रह्मांड के मूल में, प्रायः वह मेरा देव दृष्टिपात् आता रहता है। परम्परागतों से ही हमारे यहां, उस परमपिता परमात्मा की महिमा का प्रायः वर्णन आता रहता है। क्योंकि प्रत्येक वेद–मन्त्र उस परमपिता परमात्मा के गुणों का गुणवादन करता रहता है अथवा उसकी महिमा का यशोगान गाता रहता है। जिसके ऊपर मानव परम्परागतों से ही, अन्वेषण करता रहा है और एक–एक शब्द के ऊपर, अपनी मानवीयता को मानो समर्पित कर देता है, और विचारता रहता है कि परमपिता परमात्मा का जो यह ज्ञान है अथवा जितना उसका विज्ञान है, उस ज्ञान और विज्ञान दोनों का हमें समावेश करना है। प्रत्येक मानव इस आभा में लगा हुआ है।

ज्ञान–विज्ञान की नवीनता

बेटा! जब सृष्टि का प्रारम्भ हुआ तो मानव ने सबसे प्रथम, उस परमपिता परमात्मा की महिमा के ऊपर विचार–विनिमय प्रारम्भ किया और मानव ये विचारता रहा है कि हम अपने को प्रकाश में लाना चाहते हैं। परमपिता परमात्मा के सम्बन्ध में विचार विनिमय करने का अभिप्रायः यह है कि हमारा जीवन प्रकाश में आ जाए और हम अन्धकार से दूरी हो जाएं। क्योंकि प्रत्येक मानव अन्धकार को नहीं चाहता, प्रकाश को चाहता रहता है। हमारे यहां ऋषि–मुनि, भिन्न–भिन्न प्रकार के अनुष्ठानों में लगे रहे हैं और भी बेटा! देखो, इनमें गम्भीरता की प्रतिभा में सदैव रत रहे हैं और यह मानो परम्परागतों का ही वाक् नहीं है, यह सदैव ऐसा ही मानवीय मस्तिष्कों में, भिन्न–भिन्न प्रकार के विचारवेत्ताओं में, ये विचार आता रहता है कि मृत्युं ब्रह्मा वरुणं ब्रहे कृतं लोकाः वेद का आचार्य यह विचारता रहता है, साधक अपने में विचारता रहता है कि मेरी मृत्यु नहीं आनी चाहिए। मानो मृत्यु के सम्बन्ध में, वे नाना प्रकार के अनुष्ठानों में लगा रहता है नाना प्रकार के मानवीय दर्शनों में, मानवीय आभाओं में, वेद के एक–एक मन्त्र के ऊपर विचार–विनिमय प्रारम्भ करता रहा है। ये बेटा! आज मैं कोई नवीन वाक् तुम्हें प्रगट कराने के लिए नहीं आया हूं, क्योंकि ज्ञान और विज्ञान सदैव नवीन रहता है। उसमें वृद्धपन कदापि नहीं आता है। जितना भी ज्ञान विज्ञान है चाहे वह मनोनीत के द्वारा हो, चाहे वह आध्यात्मिकवाद में हो, परन्तु जिस भी काल में मानव उसके ऊपर विचार–विनिमय करता है वह सदैव नवीन का नवीन रहता है, उसमें वृद्धपन नहीं आया करता है।एक मानव योगाभ्यास में रत हो रहा है, मानो आज वर्तमान में भी रत हो रहा है, और वह मानो प्राचीन, अतीत के काल में भी उसमें रत रहा है। जिस भी काल में योग के ऊपर मानव अपना स्वाभिमान, स्वः अपने में धारयामि बनता रहता है उसी काल में बेटा! वह नवीनता में परिणत होता रहता है। एक रसता है, वह आभा है, एक निवृत्तियां हैं। मेरे पुत्रो! देखो, एक रेणकेतु वृत्तिका परमाणु होता है, उस परमाणु का भारद्वाज मुनि की विज्ञानशाला में जब उसका विभाजन किया गया, तो उसमें बेटा! ब्रह्माण्ड दृष्टिपात् आता था, योगियों को, बेटा! आज भी उस ब्रह्माण्ड को, वर्तमान के काल में भी उस परमाणु का विभाजन करने लगोगे तो वही ब्रह्माण्ड, वही लोक लोकान्तरों का जगत आज भी तुम्हें उसमें दृष्टिपात् आने लगेगा।

तो विचार–विनिमय यह है कि यह जो हमारा मानो ज्ञान और विज्ञान है यह सदैव नवीन का नवीन बना रहता है। इसमें मानो देखो, परिवर्तिता नहीं आया करती है, तो आओ बेटा! आज का हमारा वाक् क्या कह रहा है। आज मैं तुम्हें उसी वाक् पर ले जाना चाहता हूं कि वह जो परमपिता परमात्मा है, जो अनन्तमयी मानो दृष्टिपात् आने वाला है, प्रत्येक मानव बेटा! परम्परागतों से ही इसके ऊपर अन्वेषण अथवा अनुसन्धान करता रहा है। अनुसन्धानमयी

अपने जीवन को बनाना है और अपनी मानो देखो, उस प्रतिभा को जानना है, जिसके लिए मानव का इस संसार में जन्म हुआ है और वह विचारता रहा है कि मुझे सदैव नवीनता को प्राप्त करना है। मुझे परमपिता परमात्मा की महिमा अथवा उसकी प्रतिभा में रत होना है। जो यह ब्रह्माण्ड एक अनूठा–सा हमें दृष्टिपात् आता है, इसको मानो अपने अनुभव में लाना है। मेरे पुत्रो! देखो, मनस्तव प्राणत्व प्रह्ना व्रतं लोकाम् मानो इसको एक सूत्र में लाना है और उसमें सूत्रित हो करके हम इस ब्रह्माण्ड को मानो देखो, जैसे माला के एक सूत्र में नाना मनके पिरोये हुए होते हैं इसी प्रकार हम इस संसार को मानो देखो, मनके और धागे और जिसे हम धागं ब्रह्मा सूत्रो व्रतम् जिसे हम सूत्र कहते हैं उस सूत्र में प्रत्येक मनका पिरोया हुआ है। तो वह माला है, उसी माला को मुनिवरो! देखो, मानव दृष्टिपात् करना चाहता है। मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन करते हुए कहा था आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूं। केवल अपना सूक्ष्म सा परिचय दिया करता हूं और वह परिचय क्या है? किसी भी विषय पर जब अपना परिचय देना प्रारम्भ करता है मानव, तो अगाध समुद्र में चला जाता है। मानो ऐसी माला के मनको को वह गणना में लाने लगता है। जिसके ऊपर मानव आश्चर्य में हो जाता है। आत्मा प्रसन्न हो जाता है, प्रसन्नता में मानव भी अपने को मानो एकोकीकरण करने का प्रयास करता है।

ऋषियों की पवित्र देन

हमारे यहां ऋषि–मुनियों ने परम्परागतों से बेटा! दो प्रकार की विचार धाराएं नियुक्त की हैं, मानो देखो, एक भौतिक विज्ञान है और एक आध्यात्मिक विज्ञान कहलाता है। मानो दोनों विज्ञानों का एकोकीकरण करने का उन्होंने प्रयास किया है। ऋषि–मुनियों ने कहा है कि संसार को हमें ऊर्ध्वा में ले जाना है, मानो हमें महानता और मानवीयता को ऊर्ध्वा में ले जाना है तो प्रत्येक मानव का कर्त्तव्य है कि वह भौतिक विज्ञान और आध्यात्मिक विज्ञान दोनों का समन्वय और दोनों का मानो एकोकीकरण करने का प्रयास करना चाहिए। हमारे ऋषि–मुनियों की एक बड़ी पवित्र देन रही है, उन्होंने कहा है–कि इस ब्रह्माण्ड और पिण्ड दोनों का एकोकीकरण होना चाहिए। जैसे ये संसार रूपी यज्ञशाला है, इसी प्रकार यह मानव का शरीर भी एक प्रकार की यज्ञशाला है। मानो देखो, दोनों यज्ञशालाओं का एकोकीकरण हो जाए, तो मेरे पुत्रों! देखो, हम ब्रह्माण्ड को पिण्ड में और पिण्ड को ब्रह्माण्ड में जब दृष्टिपात् करने लगते हैं तो बेटा! हमारी जो मानसिक साधना है अथवा हमारी जो मानवीयता है बेटा! उसका एकोकीकरण हो जाता है और हम अपने में धन्य स्वीकार करते हैं।

मानव का प्रयास

मेरे पुत्रों! मैंने बहुत पुरातन काल में कई वाक् प्रगट किए, आज भी मैं उन्हीं वाक्यों को उच्चारण करना चाहता हूं जिन वाक्यों की मैं पुनरुक्ति करता रहता हूं, उन वाक्यों में एक रहस्य होता है मानो देखो, यह अन्तरात्मा उत्सुकता में परिणत हो जाता है कि उन वाक्यों की पुनरुक्ति की जाए। मेरे प्यारे! मैंने तुम्हें वाक् प्रगट करते हुए कहा था सम्भवं ब्रह्मा मृत्युं ब्रह्मे व्रतं लोकाम् प्रत्येक मानव की इच्छा है कि मेरी मृत्यु नहीं होनी चाहिए। प्रत्येक मेरी प्यारी माता व्याकुल रहती है कि मेरा पुत्र मृत्यु को चला गया अथवा मेरा पितर चला गया है। संसार व्याकुल होता रहता है। जब दार्शनिक सूत्रों से यह प्रश्न किया जाता है हे माता! तू रुदन क्यों कर रही है? मानो तू अपने में इतनी व्याकुल क्यों है? वह कहती है मेरा पुत्र मृत्यु को चला गया, तो एक दार्शनिक कहता है हे माता! आत्मा तेरा पुत्र है या शरीर तेरा पुत्र है। मानो यदि तू शरीर को पुत्र कहती है तो शरीर तो ज्यों का त्यों निहित रहता है परन्तु यदि आत्मा को पुत्र कहती है, तो तू आत्मा को जानती नहीं है। मेरे पुत्रों! माता निरुत्तर हो जाती है। तो विचार आता रहता है इसलिए उस मृत्यु को जानने के लिए और मृत्यु में न जाने के लिए बेटा! मानव परम्परागतों से प्रयास करता रहा है।

आओ मेरे पुत्रों! आज मैं तुम्हें एक ऋषि के द्वार पर ले जाना चाहता हूं। जिन ऋषि–मुनियों के यहां भिन्न–भिन्न प्रकार की गोष्ठियाँ होती रहती थीं, भिन्न–भिन्न प्रकार का विचार–विनिमय होता रहता था। मैंने तुम्हें कई काल में बेटा! प्रगट करते हुए कहा–कि गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज के यहां, एक–एक वेद मन्त्र के ऊपर बेटा! अन्वेषण होता रहा है अथवा उनमें भी एक–एक शब्द के ऊपर भिन्न–भिन्न प्रकार की धारणाएं, भिन्न–भिन्न प्रकार का विचार विनिमय होता रहा है। आओ बेटा! आज मैं तुम्हें उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूं। मेरे पुत्रों! बेटा, एक समय महर्षि वैशम्पायन मुनि महाराज अपने आसन पर विद्यमान थे। आसन पर जब विद्यमान थे, भयंकर वनों में, मेरे पुत्रों! उनके आश्रम में कहीं से महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज का पदार्पण हुआ और इतने में बेटा! देखो, नाना ऋषि मुनियों का एक समाज, जिसमें महर्षि प्रवाहण, महर्षि शिलभ, महर्षि दालभ्य, महर्षि रेणकेतु, महर्षि सोमवृत्तिका मेरे पुत्रों! देखो जिनमें ब्रह्मचारी कवन्धि, सुकेता और यज्ञदता मुनिवरों! देखो, इसमें श्वेतकेतु आदि ऋषि–मुनियों का समाज भ्रमण करते हुए बेटा! महर्षि वैशम्पायन मुनि महाराजा के द्वार पर आ पहुंचे। तो महर्षि वैशम्पायन बेटा! महाराज अश्वपति के यहां एक मानो देखो, वृष्टि याग करा करके और देखो, उसी रात्रि में वह पधारे थे। मानो वह मध्यरात्रि में जब निद्रा से जागरूक हुए तो एक वेद मन्त्र उनके स्मरण आ गया था और वेद मन्त्र यह कह रहा था चित्रं रथाः ब्रह्मा वाचन्नमं द्यौ लोकं ब्रह्मा वाचन्नमं ब्रह्मे व्रतं अग्नाः मेरे पुत्रों! यह वेद मन्त्र उन्हें स्मरण आ रहा था। और वेद मन्त्र यह कह रहा था कि मानव का जो चित्र है वह अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके अन्तरिक्ष में क्या, वह द्यौ लोक में प्रवेश हो जाता है।

द्यौ–लोक की पवित्रता

मेरे पुत्रों! देखो, शब्द के ऊपर वह विचार विनिमय कर रहे थे मानो देखो, वेद–मन्त्र ये भी कह रहा था मृत्युंजं भवितां ब्रह्म लोकाम् मानो देखो, मानव को मृत्यु से उपराम होना है और मृत्यु के संबंध में विचार विनिमय करना है। मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि यह चिन्तन ही कर रहे थे, कि प्रातःकाल हो गया, प्रातःकाल का सूर्य जैसे ही उदय हुआ तो बेटा! ऋषि मुनियों का समाज मानो एकत्रित हुआ, ऋषि–मुनियों ने बेटा! ऋषि के चरणों की वन्दना की और महर्षि प्रवाहण जी ने कहा–कहो भगवन्! क्या चिन्तन कर रहे थे? तो मेरे पुत्रों! महर्षि वैशम्पायन बोले कि प्रभु! मैं एक वेद मन्त्र के ऊपर अध्ययन कर रहा था और वेद मन्त्र यह कहता है कि ये जो शब्द हैं यह अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके मानो अन्तरिक्ष में गति करता है और अन्तरिक्ष में भी क्या, वह द्यौ लोक में चला जाता है, और द्यौ लोक भी जितने भी शुद्ध पवित्र शब्द जाते हैं उसी से द्यौ लोक पवित्र बन करके मानो देखो, यह वायुमण्डल पवित्र हो जाता है और इस वायुमण्डल के पवित्र होने पर जितनी भी दूषितता है उसे वह निगल जाता है और पवित्रता का वह मुनिवरों! देखो, वह प्रसार करने लगता है।

तो मुनिवरों! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार वर्णन किया तो मेरे पुत्रों! देखो, प्रत्येक वेद की प्रतिभा में मानो एक एक वेद के गर्भ में, एक एक वेद की प्रतिभा में बेटा! एक–एक शब्द में मानो देखो, ब्रह्माण्ड दृष्टिपात आने लगता है। मेरे पुत्रों! ब्रह्माण्ड की चर्चाएं आने लगती है तो विचार आता रहता है महर्षि वैशम्पायन ने इस शब्द के ऊपर बड़ी ऊँची और विचारणीय टिप्पणियां की हैं। मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि मुनि अपने में ये विचार ही रहे थे कि हमारा जो शब्द है यह द्यौ लोक में जाता है, परन्तु यह कैसे जाता है? इसके ऊपर टिप्पणियां जब होने लगीं, विचार होने लगा कि अब्रतं ब्रह्मा मेरे पुत्रों! देखो, मृत्युंजय बनने के लिए, क्या मानव मृत्युंजय उसी काल में बन सकता है जब कि अपने शब्दार्थ, अपनी प्रतिभा को आन्तरिक जगत को, ब्राह्य जगत से मिलान करता हुआ मानो देखो, उसके ऊपर आरूढ़ हो जाता है, तो मानव मृत्यु से पार हो जाता है।

मेरे पुत्रों! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार अपने विचार व्यक्त किए तो ऋषि–मुनि इसके ऊपर विचार विनिमय करने लगे। इन्होंने कहा कि यह हम से निपटारा नहीं हो सका है प्रभु! चलो, गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज के आश्रम में, हम गमन करते हैं। मेरे पुत्रों! देखो, वह ऋषिवर वैशम्पायन मुनि महाराज की अध्यक्षता वाला समाज, भ्रमण करते हुए, मेरे पुत्रों! देखो, वनों में महर्षि गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज अपना वास करते थे। उन्हें एक सौ पांच वर्ष हो गये थे, गाड़ी के नीचे तपस्या करते हुए, वह महान तपस्वी देखो, दार्शनिक और वेद के मर्म को जानने वाले, महर्षि गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज अपने में हर्षध्वनि करने लगे, कि अब मेरा कैसा अहोभाग्य है जो मानो ऋषि–मुनियों का समाज मेरे द्वार पर है। मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि ने अपने आसन को त्याग दिया और ऋषियों से कहा– आइए भगवन्! आज तो महर्षि प्रवाहण जैसे महापुरुष जिन्होंने माता की लोरियों में ही ब्रह्मविद्या को प्राप्त कर लिया था, जिनकी

माता ने अपनी लोरियों का पान कराते कराते ब्रह्मविद्या, ब्रह्मविज्ञान और ब्रह्मवेत्ता बना करके मानो देखो, तपश्चर के लिए त्याग दिया था। यह मेरा कैसा सौभाग्य है।

मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि–मुनि अपने अपने स्थान पर विद्यमान हो गये। विद्यमान हो करके गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने नत मस्तिष्क हो करके कहा–कहो, ऋषिवर! आज तुम्हारा आगमन कैसे हुआ? मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि प्रवाहण, महर्षि शिलभ और दालम्य और वैशम्पायन चारों ऋषियों ने उपस्थित हो करके एक ही स्वर में ये कहा–कि प्रभु! हम जानना चाहते हैं ये मृत्यु क्या है? हम मृत्यु के सम्बन्ध में विचार करते रहते हैं। आज भी देखो, विचार विनिमय करके आप के समीप आये हैं, कोई तो कहता है कि शब्द के चिन्तन करने से मानव मृत्यु से पार हो जाता है, कोई कहता है कि अग्नि को जानने से मृत्यु से पार से पार हो जाता है, कोई कहता है मनस्तव के जानने से मृत्यु से पार हो जाता है, हे प्रभु! यह नाना प्रकार का प्रसंग हमारे समीप आता रहता है। हम यह जानना चाहते हैं कि मृत्यु से मानव कैसे उपराम हो सकता है? और ये मृत्यु क्या है? क्योंकि राजा जनक की सभा में भी इस प्रकार के नाना प्रकार के प्रसंग हमने श्रवण किए हैं, परन्तु देखो, हम अब तक अपने में निपटारा नहीं कर सके हैं। मेरे पुत्रों! देखो, गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने उनके शब्दों को पान करते हुए कहा–कि भगवन्! तुम्हारे हृदयों में इस प्रकार की पिपासा क्यों जागरूक हुई? क्योंकि आप तो ब्रह्मवेत्ता है, ब्रह्म की चर्चा करने वाले हैं, ब्रह्मनिष्ठ कहलाते हैं। मानो देखो, विष्णु के मूल कारणों को भी आप जानते हैं। परन्तु आप के हृदय में यह पिपासा क्यों जागी है?

मेरे पुत्रों! देखो महर्षि वैशम्पायन बोले–कि प्रभु! वेद मन्त्र मृत्यु की पुकार कर रहा है और वेद मन्त्र कहता है–कि मृत्यु नहीं होनी चाहिए। तो जो न होने वाली वस्तु है, वह है क्या, उसे हम जानना चाहते हैं? मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि ने एक ही शब्द में कहा–कि अन्धकार। मानो देखो, अन्धकार को त्याग दो, मृत्यु चली गई। मेरे पुत्रों! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार उनके प्रश्नों का उत्तर दिया, तो महर्षि प्रवाहण के कहा–कि प्रभु! इतने से तो मृत्यु नहीं जाने वाली है, मानो मृत्यु को इतना ज्ञान, इतना उच्चारण करने से हम उसको जान नहीं पाये हैं। हमें आप उसका विश्लेषण कीजिए, उसका निर्णय, आप चर्चा कराइए, क्या या कैसे नहीं? तो भगवन्! उसको प्रत्यक्षवाद में लाने का प्रयास कीजिए। मेरे पुत्रों! गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने कहा कि मैं वैज्ञानिक नहीं हूं, परन्तु मैं तो अपने शब्दों से जहां तक मेरे शब्दों की मानो देखो, उड़ान है, वहां तक उड़ान उड़ सकता हूं अन्यथा आगे इसकी उड़ान नहीं उड़ी जाती है। उन्होंने कहा तो प्रभु! उसी उड़ान को हम जानना चाहते हैं आपकी उड़ान कहां तक है।

मृत्यु का अभिप्रायः

तो मुनिवरो! देखो, गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने अपना प्रसंग प्रारम्भ किया, उन्होंने कहा–मेरे विचार में तो मृत्यु अंधकार है। मानो देखो, मृत्यु नास्त्प्रह्ले वह मृत्यु ऐसी है जैसे अन्धकार कहलाता है। क्योंकि मानव का जो जीवन है वह अन्धकार को नहीं चाहता है, वह प्रकाश को चाहता है। इसलिए प्रकाश का नाम जीवन है और अन्धकार का नाम मृत्यु है। मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि ने वर्णन कराते हुए कहा कि जब हम अपने बाल्यकाल में, विद्यार्थी काल में, जब विद्यालय में आचार्य के द्वारा विराजमान हो जाते तो आचार्य के चरणों में विद्यमान हो करके, आचार्य हमें निर्णय करा रहे हैं, मृत्यु का निर्णय करा करके आचार्यों ने कहा है कि यह मृत्यु अंधकार है, जब तुम्हें ज्ञान हो जाता है। मानो देखो, उसी समय मृत्यु से तुम्हारा उपराम हो जाता है। जैसे ब्रह्मचारी अपने में ब्रह्म को जान करके देखो, मृत्यु का भान नहीं रहता, मृत्यु न होने के तुल्य बन जाती है। तो इसलिए मृत्यु का अभाव है।

मेरे पुत्रों! देखो, गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने जब यह निर्णय कराया तो इतने में बेटा! महर्षि वैशम्पायन बोले कि प्रभु! कहीं–कहीं यह शब्द जो है, यह अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके, यह द्यौ लोक में जाता है। मानो देखो, वह जो द्यौ लोक हैं उसमें जाने वाला प्राणी भी मृत्यु से पार हो जाता है। मेरे पुत्रों! देखो, गाड़ीवान रेवक ने कहा–कि नहीं, ऐसा नहीं है। मानो देखो, शब्द की प्रतिक्रियाएं तो ध्वनि तक रहती है मानो वह ध्वनि होती रहती है, उसी ध्वनि में ध्वनित होने वाला प्राणी मानो देखो, अपने में ध्वनि का श्रवण करता रहता है, अपने में ग्रहण करता रहता है। जैसे आचार्य के कुल में ब्रह्मचारी देखो, आचार्य की ध्वनि को श्रवण करता रहता है और वह ध्वनि को श्रवण करता–करता मानो देखो, अपने हृदय को अगम्य मानो हृदय में उसको समाहित कर लेता है। उसी हृदय की प्रतिभा को वह बाह्य जगत के हृदय से समावेश कर लेता है और बाह्य जगत के समावेश होने पर मानो देखो, वह परमात्मा के हृदय से उसके हृदय का जब समन्वय होता है तो मानो देखो, वह मानव मृत्यु से पास हो जाता है।

मेरे पुत्रों! देखो, परमात्मा के हृदय और मानव के हृदय दोनों के समावेश के लिए उन्होंने अपनी टिप्पणियां की हैं, अपना विचार दिया है। मेरे पुत्रों! देखो, इससे उन्होंने कहा–प्रभु! यह वाक् हमारे हृदयों में समाहित नहीं हुआ है, हम यह जानना चाहते हैं कि सबसे प्रथम हम शब्द को साकार रूप में दृष्टिपात् करना चाहते हैं, उसके पश्चात् मानो हमें कुछ आत्म शांति की स्थापना हो सकेगी। आत्म शान्ति तो कुछ और ही वस्तु है परन्तु हम शब्द के आकार को दृष्टिपात् करना चाहते हैं? मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि विभाण्डक इत्यादियों ने कहा कि यह तो विषय वाणी का नहीं है। परन्तु गाड़ीवान रेवक ने कहा कि नहीं, यह विषय तो वाणी तक का विषय है परन्तु यदि तुम इसको अनुभव करना चाहते हो तो यहां से महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज का आश्रम निकटतम है, उनके आश्रम में गमन करते हैं।

महर्षि भारद्वाज का आश्रम

मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि–मुनियों ने वहां से उन्होंने अप्रतं ब्रह्मा वेद का उद्घोष करते हुए, अपने में प्रसन्नचित हो करके बेटा! देखो, महर्षि गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज जिनका जीवन एक सौ पांच वर्ष तक गाड़ी के नीचे व्यतीत हुआ और उन्होंने कुछ समय वायु का सेवन किया, और कुछ उस अन्न को पान करते थे, जिस अन्न पर किसी का अधिकार नहीं रहता था। जो किसी के अन्न को अधिकार पूर्वक ग्रहण करना चाहता है, बेटा! वह योगी, वह साधना में सकलता को प्राप्त नहीं हो पाता। मेरे पुत्रों! देखो, गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज का जीवन मुझे स्मरण आता रहता है। वह सदैव मानो देखो, किसी समय वायु का सेवन करते थे, प्राण की खेचरी और देखो, शीतली मुद्रा में परिणत हो जाते। परन्तु देखो, उसी वाक्यों को ले करके व्रतं ब्रह्मा उस अन्न को ग्रहण करते थे, जिस अन्न पर किसी का अधिकार नहीं रहता। मेरे पुत्रों! देखो, वह महर्षि गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज नाना ऋषियों की अप्रतियों में भ्रमण करने लगे, वह भ्रमण करते हुए मुनिवरो! कजली वनों में, महर्षि भारद्वाज मुनि के आश्रम में पहुंचे, जहां ब्रह्मचारी कवन्धि, ब्रह्मचारी सुकेता, महर्षि पनपेतु मुनि महाराज, ब्रह्मचारिणी शबरी, ब्रह्मचारी वृत्तिमोहन मेरे पुत्रों! देखो, सब ब्रह्मचारी अध्ययन करने वाले थे। मुझे स्मरण आता रहता है कि महर्षि भारद्वाज मुनि के विद्यालय में, नाना प्रकार का अन्वेषण और नाना प्रकार की प्रतिभाओं में वह सदैव रत रहते थे।

मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि ने, जब ऋषियों का आगमन दृष्टिपात् किया। तो ऋषि बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने ब्रह्मचारी सुकेता से कहा–हे ब्रह्मचारी! आज तो ऋषि मुनियों का आगमन हो रहा है। यह हमारा कैसा सौभाग्य है? मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने भिन्न–भिन्न प्रकार के आसन प्रदान कर दिए मुनिवरों! देखो, ऋषियों का जब आगमन हुआ, उन्होंने बेटा! नमस्कार करते हुए मेरे पुत्रों! देखो, भिन्न–भिन्न आसन देकर के, उन आसनों पर उनका पदार्पण हुआ और पदार्पण होने के पश्चात् महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने उनका अतिथि सत्कार किया। नाना प्रकार के कन्दमूल इत्यादि फलों के द्वारा उनका स्वागत किया। उन्होंने अपने में भोज्य किया और भोज्य करके वह शान्त मुद्रा में मुद्रित हो गये। महर्षि भारद्वाज मुनि बोले कि हे भगवन्! मुझे आज्ञा दीजिए। आज मानो मेरे आसन् को कैसे पवित्र किया है? यह मेरा कैसा सौभाग्य है, उन्होंने कहा–हे प्रभु! हमने श्रवण किया है कि तुम विज्ञानवेत्ता हो, हमने श्रवण किया है कि तुम्हारी उड़ान विज्ञान में, भौतिकवाद में बड़ी विचित्र है। तो प्रभु! हम आपकी विज्ञानशाला को और विद्यालय का दर्शन करने के लिए आए हैं।

मेरे पुत्रों! महर्षि भारद्वाज मुनि बोले कि प्रभु! यह तो मेरा बड़ा सौभाग्य है, कि आप मेरे इस आसन पर और अपने ही विद्यालय को दृष्टिपात् करने आए हो, परन्तु मैं यह अमृतं ब्रह्मे प्रभु! यह जो आपका प्रश्न है इसको उच्चारण कीजिए और पुत्रों! महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज से गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ने कहा–हे प्रभु! हम यह जानना चाहते हैं कि आपकी विज्ञानशाला में शब्द के ऊपर आपका कितना आधिपत्य हुआ है? मेरे पुत्रों! महर्षि भारद्वाज मुनि बोले कि प्रभु! आप मेरे से यह क्यों जानना चाहते हैं? हे प्रभु! मैंने तो पूर्व भी आपको यह वर्णन करते हुए कहा था कि उद्दालक गोत्र में चले जाओ, उद्दालक गोत्र में शिकामकेतु ऋषि महाराज है इनका मानो शब्द के ऊपर बड़ा आधिपत्य रहा है और जितना मेरा आधिपथ्य, मैं भी उसे उच्चारण अवश्य कर

पाऊँगा, जितना मैंने जाना है। मानो उसके ऊपर आपको अवश्य प्रकाश और जितना भी मानो देखो, क्रियात्मक है उसको जानने के लिए आप भी तत्पर हो जाओ। मेरे पुत्रों! गाड़ीवान रेवक मुनि बोले कि प्रभु! हम तत्पर हैं। मुनिवरों ऋषि ने कहा–कि मेरे आश्रम का यह नियम है कि मेरे यहां यह जो यज्ञशाला तुम्हें दृष्टिपात् आ रही है, इस यज्ञशाला में सबसे प्रथम याग करो, परन्तु याग के पश्चात् मानो उसके ऊपर मैं तुम्हारे वाक्यों पर टिप्पणी कर सकूंगा अथवा अपना विचार दे सकूंगा।

द्यौ–गामी चित्र दर्शन

तो मेरे पुत्रों! देखो, वे नाना ऋषि, महर्षि भारद्वाज मुनि के यहां नाना प्रकार के कोणों की यज्ञशाला थी। मेरे प्यारे! चौबीस कोणों से ले करके और द्वितीय कोण तक, उनके यहां यज्ञशाला थी। महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ऋषि मुनियों को अपनी विज्ञानशाला में ले गए और विज्ञानशाला में उन्होंने कहा–प्रभु! आप याग का प्रारम्भ कीजिए। मेरे पुत्रों! देखो, उनमें से कोई ब्रह्मा बना, कोई अध्वर्यु बना, कोई यजमान बना, कोई उद्‌गाता बन करके बेटा! वेदों का उद्‌घोष होने लगा। वेद मंत्रों की ध्वनियां होने लगी। मेरे पुत्रों! उन्होंने अग्न्याधन किया और अग्नि में वह नाना प्रकार के साकल्य की आहुतियां देने लगे। वह नाना प्रकार का साकल्य जब हूत करने लगे, तो मुनिवरों! महर्षि भारद्वाज मुनि ने ब्रह्मचारी कबन्धी से कहा–हे कबन्धी! यंत्र को मानो देखो, स्थित किया जाए। तो भारद्वाज मुनि महाराज का विज्ञान बड़ा विचित्र था, उनके यहां ऐसे–ऐसे वैज्ञानिक यंत्र थे, मुनिवरो! उन्होंने जैसे यज्ञशाला में यंत्र को मानो स्थित कर दिया और जैसे वह स्वाहा उच्चारण करते थे तो मेरे पुत्रों! जितने आकार की यज्ञशाला थी मानो उतने आकार में शब्द के साथ में, शब्द की ध्वनि के साथ में मेरे पुत्रों! देखो, यंत्रों में उनका चित्र, उन्हें दृष्टिपात् आने लगा। मेरे पुत्रों! उन्होंने कहा–हे ऋषिवर! यह जो चित्रावली मैंने आपके समक्ष नियुक्त की है इसको भी दृष्टिपात् कर लेना। मेरे पुत्रों! जैसे स्वाहा उच्चारण करते, वेद मंत्रों के साथ में गुँथा हुआ जो शब्द है मानो उसकी जो आहुति दी जाती है, अग्नि मानो देवताओं का मुख कहा जाता है। देवता ब्रह्मे व्रतं देवाः मुनिवरो! देखो, अग्नि की धाराओं पर विद्यमान हो करके वेद मंत्रों से गुँथा हुआ वह शब्द मुनिवरों! देखो, अंतरिक्ष में जाता हुआ, द्यौ लोक में जाता हुआ बेटा! उन्हें दृष्टिपात् आने लगा। मेरे पुत्रों! महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने कहा–प्रभु! आपका चित्र जा रहा है, दृष्टिपात करने लगिए। मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने याग किया, याग के पश्चात् उनके हर्ष की कोई सीमा न रही।

श्वास के साथ चित्र

उन्होंने कहा–हे महर्षि वैशम्पायन! जिस वेद मंत्र का तुम अध्ययन करते हो और वेद मंत्रों में, शब्द की उड़ान उड़ते रहते हो मानो देखो, उसको विज्ञान के माध्यम से हम साक्षात्कार दृष्टिपात् कर रहे हैं। मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि बड़े प्रसन्न हुए और उनके हर्ष की कोई सीमा न रही। मेरे पुत्रों! देखो, याग करने के पश्चात् उन्हीं अपने अपने आसनों पर विद्यमान हो गये। उनका हृदय बड़ा प्रसन्न हुआ, और प्रसन्न हो जाने के पश्चात् उन्होंने कहा–प्रभु! हम आपकी यज्ञशाला को दृष्टिपात करना चाहते हैं। मेरे पुत्रों! महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ऋषि मुनियों को ले करके अपनी विज्ञानशाला को दृष्टिपात कराने लगे, सबसे प्रथम बेटा! उस विज्ञानशाला में पहुंचे, जिस विज्ञानशाला में ऐसे–ऐसे यन्त्र विद्यमान थे जिन यन्त्रों में मुनिवरों! देखो, मानव का चित्र होता रहता था। जैसे एक मानव एक स्थली पर विद्यमान है, उस स्थली पर से उसका जैसे प्रस्थान हो जाता है तो प्रस्थान के पश्चात् मुनिवरों! देखो, व्रतं ब्रह्माः यन्त्रं प्रहि इस वेद वाक् के द्वारा उन्होंने यन्त्रों का निर्माण किया और यन्त्र में यह विशेषता कि एक मानव, एक स्थली पर रहता है, वास करता है है तो उसके गमन करने के ढाई घड़ी के पश्चात् बेटा! वह यन्त्र उस मानव का चित्र ले लेता है अथवा उसका आकार आ जाता है। वह जो आकार आ गया है। चित्रण हो गया है, मेरे पुत्रों! देखो, वही तो उसकी प्रतिभा है। तो ऋषि को यह सिद्ध हो गया कि जिस आसन पर मानव रहता है, गमन करता है, विश्राम करता है वहां मुनिवरों! वह अपनी प्रतिभा को त्याग देता है। वह अपने चित्रों को त्याग देता है। वेद का ऋषि तो यह कहता है श्वासं ब्रह्मे कृतं चित्रं रथं ब्रह्माः वेद वाक् ये कहता है कि एक श्वास के साथ में, मानव का चित्र गति करता रहता है।

मेरे पुत्रों! आज मैं तुम्हें विज्ञान की चर्चा, विशेष नहीं ले जा रहा हूं। महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने कहा प्रभु! यह यन्त्रशाला आपको दृष्टिपात आ रही है, इस यन्त्रशाला में यह विशेषता रही है कि मानो एक–एक रक्त के बिन्दु के द्वारा, मानव का चित्रण होता रहा है एक समय मानो देखो, दद्दडीय गोत्र के ऋषि सोमकेतु मुनि महाराज मेरे आश्रम में आए। वह बोले कि महाराज! मैं अपने पूर्वजों के तुम्हारी यन्त्रशालाओं में दर्शन करना चाहता हूं। मेरे पुत्रों! देखो, भारद्वाज मुनि ने कहा–कि उनका तुम्हें कहीं से एक रक्त का बिन्दु, तुम्हारे संग्रहालय में प्राप्त हो जाए तो मैं दर्शन करा सकता हूं। तो सोमकेतु मुनि महाराज अपने गृह, अपने आश्रम में पहुंचे, तो उनके यहां, उनके पूर्वजों के वस्त्रों का संग्रहालय था, उन संग्रहालयों में उनके छठे महापिता का वस्त्र पर, एक रक्त का बिंदु उन्हें कहीं प्राप्त हो गया। बेटा! उस रक्त के बिंदु को ले करके सोमकेतु मुनि महाराज दद्दड़ वह भ्रमण करते हुए मेरे द्वार पर आए। उन्होंने कहा प्रभु! इस वस्त्र पर यह रक्त का बिन्दु है। मुनिवरों! देखो, ऋषि ने यन्त्र में जैसे ही उस बिन्दु को प्रवेश किया तो बेटा! उनमें उनके छठे महापिता का दर्शन होने लगा। मेरे पुत्रों! देखो, चित्रों के सहित उनके क्रियाकलाप मुनिवरों! देखो, जिनका एक सौ अस्सी वर्ष पूर्व निधन को हो गये था मानो उसका चित्र मुनिवरों! चित्रावली में दृष्टिपात् आ रहा है। मेरे पुत्रों! ऋषि कहता है हे ऋषिवर! यह दृष्टिपात् करो मानो देखो, चित्रो ब्रहा चित्रं ब्रह्मे कृतं रक्तं ब्रह्मे व्रताः मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने आगे दर्शन कराते हुए कहा कि यह जो चित्रावली है इसमें यह विशेषता है, एक रक्त बिन्दु का प्रवेश करो तो उसका दिग्दर्शन हो जाता है।

कलह से अशुद्धता

मेरे पुत्रों! एक–एक रक्त के बिन्दु में मानो देखो, चित्र विद्यमान है उस मानव की प्रतिभा विद्यमान रहती है। तो मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि कहता है भारद्वाज, कि महाराज! यह शब्द की प्रतिभा है मानो एक–एक रक्त के बिन्दु में शब्द ध्वनिप्रह्रा वह सर्वत्र होता रहता है। मानो देखो, अग्नि की धाराओं पर, यह शब्द विद्यमान हो करके द्यौ लोक में प्रवेश कर जाता है। गृह को पवित्र बना देता है जैसे एक गृह में दर्शनों का अध्ययन होता हो, एक गृह में मानो देखो, कलह रहता हो, उसमें वृत्तियाँ रहती हो तो मानो देखो, जहां दर्शनों का अध्ययन उसका परमाणुवाद पवित्र है और जहां कलह का वातावरण है मानो देखो, माता–पिता सर्वत्र कलह में अपने जीवन को व्यतीत कर रहे हों तो वह गृह अपवित्र हो जाता है। उस गृह में मुनिवरों! देखो, अशुद्ध और मृत्यु के परमाणु विद्यमान हो जाते हैं। तो मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि कहता है मृत्युंजयं ब्रह्मा लोकविचार यह चल रहा था कि यह मृत्यु क्या है? मेरे पुत्रों! देखो, मृत्यु के सम्बन्ध में विचार केवल इतना ही है। आज विशेष चर्चा में तो मैं जाना नहीं चाहूंगा, न मैं व्याख्याता हूं, केवल तुम्हें संक्षिप्त परिचय देने के लिए चला आया हूं, और वह परिचय यह है कि विज्ञान और मानवीयता दोनों का एकोकीकरण हो जाना चाहिए। मृत्यु और प्रकाश दोनों को जान लेना चाहिए।

प्रकाश में मानव

मुनिवरों! देखो, ऋषि वैशम्पायन ने कहा–हे प्रभु! आपकी विज्ञानशाला को हम दृष्टिपात् कर रहे हैं परन्तु हमारा यह प्रसंग है, हम यह विचारने के लिए आए हैं आपके समक्ष, क्योंकि जहां आप भौतिक विज्ञानवेत्ता है, वहां आध्यात्मिक विज्ञानवेता भी है। हम आध्यात्मिक दृष्टि से यह जानना चाहते हैं कि संसार में यह मृत्यु क्या है? जिसके ऊपर मानव व्याकुल हो रहा है, रुदन कर रहा है। प्रत्येक प्राणी देखो, इसके ऊपर मानव वृत्तियों में और आभा में नियुक्त होता हुआ मानो देखो, अपने को न होने के तुल्य स्वीकार कर रहा है। मेरे पुत्रों! महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने कहा कि मेरे विचार में तो यह आता है कि यह जो मृत्यु है यह मृत्यु अपने में कोई मृत्यु नहीं कहलाती, क्योंकि ज्ञान होने के पश्चात्, ज्ञान और विवेक होने के पश्चात्, मृत्यु का अभाव हो जाता है। मृत्यु की मानो देखो, अन्धकारिकता समाप्त हो जाती है, जिसे हम मृत्यु कहते है। तो इसलिए हमारे यहां यह माना गया है कि अन्धकार का नाम मृत्यु है और ज्ञान का नाम प्रकाश है। इसलिए प्रत्येक मानव प्रकाश के मार्ग पर जाना चाहता है देखो, प्रकाश को जानना चाहता है, अन्धकार को त्यागना चाहता है। इसलिए प्रत्येक मानव, नाना प्रकार के अनुष्ठान करता है नाना प्रकार की साधना करता है नाना प्रकार के अव्ययों में रत होना चाहता है।

परमाणुओं के तीन प्रकार

तो मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि भारद्वाज मुनि महाराज ने अपना वक्तव्य देते हुए कहा कि मेरे विचार में तो मानो देखो, मृत्यु अंधकार है, यह परमाणुओं का संघात है। जगत् मानो देखो, परमाणुओं के संघात से आत्मा उन परमाणुओं को अपने में धारयामि बनाता रहता है। मानो देखो, वह चेतना है, चेतना जड़वत को अपने में वृत्तियों में धारण कराता रहता है मानो देखो, उसी से यह मानव का शरीर दृष्टिपात् आता है। अपने अपने परमाणु में क्योंकि तीन परमाणु हैं। एक गति कराता है, एक अवकाश जिसमें वह वास करता है मानो तीन ही परमाणु तो संसार में हैं। उन परमाणुओं में मानो जिसमें गुरुत्व, तरलत्व और तेजोमयी, यह तीन प्रकार के परमाणु कहलाते हैं। इन तीन प्रकार के परमाणुओं का समूह एकत्रित होता है, एक चेतना के माध्यम से मानो देखो, वही चेतना जिसको आत्म तत्व कहते हैं। मेरे पुत्रों! देखो, उसी से जब आत्मा निकल जाता है तो मुनिवरों! देखो, वह परमाणु अपने—अपने स्वरूप में मानो परिणत हो जाते हैं। अपने अपने स्वरूप में मानो रत हो जाते हैं। तो बेटा! अपने अपने स्वरूप का अभिप्राय वेद का मन्त्र कहता है प्रमाणां ब्रह्मे मृत्युं ब्रह्मा वाचनम्मं वृहि वृतम् वेद का वाक् कहता है कि संसार में किसी वस्तु की मृत्यु नहीं हुआ करती है यह तो रूपांतर है, जगत् केवल रूपांतर मात्र माना है। या कोई वस्तु मानो अपने स्वरूप में जाने के लिए ही मानो सदैव लालायित रहती है। तो बेटा! देखो, इसलिए आत्मा को जानने के लिए, मानव परम्परागतों से बेटा! देखो, प्रयास करता रहा है और यह विचारता रहा है कि मैं जो चेतना रूप हूं, मैं क्या हूं, मानो किससे मेरा समन्वय है? तो यह विचारता रहता है बेटा! मेरे पुत्रों! इसी विचार को ले करके, ऊर्ध्व उड़ाने उड़ता रहता है, अपने में रत होता रहता है। मेरे पुत्रों! देखो, वेद का ऋषि कहता है कि मृत्यु अपने में कोई मृत्यु नहीं होती। यह तो अन्धकार है मानो अन्धकार को त्यागना ही जीवन है, प्रकाश है। और जब मानव देखो, परमात्मा के राष्ट्र में अपने को स्वीकार कर लेता है कि मैं प्रभु के राष्ट्र में रत हो गया हूं। तो उस समय बेटा! देखो, प्रभु के राष्ट्र में सदैव प्रकाश रहता है, जहां सदैव प्रकाश रहता है वहां रात्रि नहीं होती, और जहां रात्रि नहीं होती, वहां आलस्य और प्रमाद नहीं होता और जहां आलस्य और प्रमाद नहीं होता जहां रात्रि भी नहीं होती बेटा! वहां मृत्यु भी नहीं हुआ करती है। वहां सदैव प्रकाश रहता है।

आओ मेरे पुत्रों! मैं विशेष चर्चा न देता हुआ, आज का वेद मन्त्र कहता है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए, मेरे पुत्रों! उस परमपिता परमात्मा की महिमा का गुणगान गाते रहे, उसके गुणों का वर्णन करते रहे, क्योंकि प्रत्येक आभा में उस परमपिता परमात्मा की चेतना में हमें दृष्टिपात आती रहती है। प्रत्येक आभा में मानो उस प्रभु का दर्शन होता रहता है। हम जब प्रभु का दर्शन करने लगते हैं तो प्रकाश में रत हो जाते हैं। आओ मेरे पुत्रों! मैं विशेष चर्चा न करता हुआ गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज ऋषि ने बेटा! अपना यह निर्णय दिया है। ऋषि ने कहा है—कि मेरा तो यह मन्तव्य रहा है। क्योंकि ज्ञान और विज्ञान में मैं सदैव चर्चाएं करता रहता हूं। हमारे यहां भौतिक विज्ञान और आध्यात्मिक विज्ञान दोनों का समन्वय होता रहता है। हम समन्वय की चर्चा तो कल ही प्रगट करेंगे कि भौतिक विज्ञान, आध्यात्मिक विज्ञान तो महर्षि भारद्वाज आदि ऋषिवर किस माध्यम से इसको विचारते रहते थे। परन्तु आज का हमारा वाक् यह कहता है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुण गान गाते हुए, हम नाना प्रकार के भौतिक विज्ञान और आध्यात्मिक विज्ञान दोनों का समन्वय करने का प्रयास करें और दोनों को एक सूत्र में लाने का जब हम प्रयास करेंगे तो मानो देखो, मानव समाज का जन—कल्याण हो जाता है और जन—कल्याण मेरे पुत्रों! देखो, जब्ब्रहे अस्सुतं ब्रह्मा जैसे महर्षि उद्दालक गोत्र में महर्षि शिकामकेतु मुनि महाराज के यहां बेटा! नाना प्रकार की विज्ञानशालाओं में और यज्ञशालाओं में सबसे प्रथम यज्ञशाला उसके पश्चात् विज्ञानशाला और उस विज्ञानशाला में मेरे पुत्रों! देखो, उन्हें अपने पूर्वजों का दर्शन करते रहते थे क्योंकि अग्नि की धाराओं पर शब्द मुनिवरों! देखो, अन्तरिक्ष में ओत—प्रोत हो जाता है, द्यौ में प्रवेश कर जाता है। और वह शब्द मुनिवरों! देखो, नित्यां ब्रहे वह नित्य रहने वाला है। जिस भी वैज्ञानिक ने शब्द के ऊपर बेटा! अनुसन्धान किया है, शब्द के ऊपर जानने का प्रयास किया है।

मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि शिकामकेतु उद्दालक ने इन वाक्यों पर बड़ा अनुसन्धान किया वह अपने पचासवें महापिता का बेटा! यन्त्रों में दर्शन करते रहे हैं। सौवें महापिता का भी दर्शन करते रहे हैं और उनका क्रियाकलाप और चित्रों के साथ में उनका चित्रण होता रहा है।

ब्रह्म की प्रतिभा

तो आओ मेरे पुत्रों! आज का विचार क्या कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए इस संसार सागर से पार हो जाए। प्रत्येक मानव की यही पिपासा रहती है कि हम परमपिता परमात्मा के राष्ट्र में आये हैं, उसको जानना है और जान करके मानो देखो, इस अन्धकार से पार होना है, प्रकाश में जाना है। ये है बेटा! आज का वाक्, आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय क्या कि मुनिवरों! देखो, महर्षि गाड़ीवान रेवक मुनि महाराज आदि—आदि ऋषियों ने मध्य में विद्यमान हो करके, वह प्रकाश और शब्द अपने में मानो देखो, चर्चा का विषय बनाते रहते थे, उसमें अनुसन्धान करते रहते। उसमें आरूढ़ होना, आरूढ़ होने के पश्चात् भी जो मानो निवारण के लिए ऋषि—मुनियों के द्वारा वैज्ञानिक वांगमय में प्रवेश हो करके मानो उसका और भी निर्णयात्मक अपने में स्थिर करना, स्थिर होना ही बेटा! देखो, उसकी महानता है, वह उसकी साधना है। उसको जान करके बेटा! मौन हो जाने का नाम ब्रह्म की प्रतिभा में रत होना है। यह है बेटा! आज का वाक्, विद्यमान हो करके प्रकाश और शब्द अपने में मानो देखो, एक चर्चा का विषय बनाते रहते थे उसमें अनुसन्धान करते रहते, उसमें आरूढ़ होना, आरूढ़ होने के पश्चात् भी जो संशय मानो निवारण के लिए ऋषि मुनियों के द्वारा वैज्ञानिक वांगमय में प्रवेश हो करके मानो उसका और भी निर्णयात्मक अपने में स्थिर करना, स्थिर होना ही बेटा! देखो, इसकी ....शेष अनुपलब्ध

दिनांक—11—07—87 **ग्राम : तौली, बुलन्दशहर**

तप और शतपथ ब्राह्मण— दिनांक—15—07—87

जीते रहो!

देखो मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे, यह भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन—पाठन किया, हमारे यहां परम्परागतों से ही उस मनोहर वेद—वाणी का प्रसारण होता रहता है जिस पवित्र वेद—वाणी में, उस महामना, मेरे देव की महिमा का गुणगान गाया जाता है क्योंकि वे परमपिता परमात्मा अनन्तमयी माने गये हैं और वह विज्ञानमयी स्वरूप है। मानो विज्ञान उसका आयतन है, उसका गृह है, उसका सदन है। तो वे परमपिता परमात्मा विज्ञानमयीवेत्ता है। मानो सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके वर्तमान के काल तक, नाना वैज्ञानिक हुए हैं। परन्तु कोई विज्ञानवेत्ता ऐसा नहीं हुआ जो परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञान को सीमाबद्ध कर सके क्योंकि वे परमपिता परमात्मा सीमा से रहित है, वे सीमा में आने वाले नहीं हैं। तो इसलिए कोई भी मानव, कोई भी वैज्ञानिक, उस परमपिता परमात्मा को सीमा में नहीं ला सकता। इसलिए हम प्रत्येक वेद मन्त्र के ऊपर जब विचार विनिमय प्रारम्भ करते हैं तो प्रायः उस परमपिता परमात्मा का ज्ञान और विज्ञान हमारे समीप आना प्रारम्भ हो जाता है।

वसुन्धरा

आज का हमारा वेद मन्त्र, उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा था। जिस प्रकार माता का पुत्र, माता की गाथा गाता रहता है। जिस प्रकार यह पृथ्वी ब्रह्माण्ड की गाथा गाती ही रहती है। तो इसलिए उस परमपिता परमात्मा का नामोकरण बेटा! वसुन्धरा के नामों से वर्णन किया है। हे वसुन्धरा! तू अपने में बसाने वाली है, वह अपने में ही धारण करती हुई बसाती रहती है इसलिए उसका नाम वसुन्धरा कहा जाता है। वसुन्धरा नाम माता का भी है, क्योंकि माता के गर्भस्थल में, हम सब वशीभूत रहते हैं, पृथ्वी का नाम भी वसुन्धरा है, जब माता के गर्भ से हम पृथक् होते हैं तो इस पृथ्वी माता की लोरियों का पान करने लगते हैं। अथवा इसके गर्भ में जो नाना प्रकार का खाद्य और खनिज पदार्थ तप रहा है, उस तपों में हम रत हो जाते हैं और अपने को धन्य स्वीकार करते हैं। परन्तु जब ज्ञानमयी आभा में विवेक में परिणत होता है तो बेटा! इस पृथ्वी से उपरामता को प्राप्त होता हुआ, वह जो मेरी प्यारी माता

वसुन्धरा है, जो चेतन्यमयी है जो संसार की नियता, निर्माण करने वाली है। उस चेतना का नाम बेटा! वसुन्धरा के नामों से वर्णन किया है। हे माता वसुन्धरा! तू अपने में, हम सबको बसाने वाली है। वैदिक साहित्य में भिन्न प्रकार के पर्यायवाची शब्द और पर्यायवाची विवेचना होती ही रहती है। तो विचार–विनिमय क्या मेरे प्यारे! इसलिए प्रत्येक वेद मन्त्र, उस परमपिता परमात्मा की गाथा गा रहा है, प्रत्येक वेद मन्त्रों में बेटा! उसकी प्रतिभा निहित रहती है।

विद्यालयों में गौमेध याग

तो आओ मेरे पुत्रों! मैं तुम्हें विशेष विवेचना देने नहीं आया हूं, विचार केवल यह कि आज का हमारा वेद मन्त्र क्या कह रहा है। जहाँ माता वसुन्धरा की याचना कर रहा है। आज के शब्दों में बेटा! धेनु शब्द का भी वर्णन आ रहा था। हमारे यहां धेनु किसे कहते हैं? वैदिक साहित्यवेत्ताओं ने धेनु नाम बेटा! इस पृथ्वी को कहा है। धेनु नाम मानो देखो, उसे अवृतं ब्रह्मे जब विद्यालय में ब्रह्मचारी प्रवेश करता है। तो बेटा! वह धेनु मानो देखो, उस विद्यालय में, जहां आचार्य उसको अपने में धारण करता है मानो उस विद्या का नाम धेनु कहा जाता है। जिस विद्या को ब्रह्मचारी अपने में ग्रहण करने लगता है। मेरे प्यारे! देखो, यहाँ गौमेध यागों का भी वर्णन आता रहता है। हमारे वैदिक साहित्य में भिन्न–भिन्न प्रकार के यागों का वर्णन होता रहा है। जैसे अग्निष्टोम याग, वाजपेयी याग, देवी याग, विष्णु याग, ब्रह्मयाग, रुद्रयाग, मानो देखो, इसी प्रकार गौमेद्य याग का भी वर्णन है। हमारे यहां गौ का पालन करने का नाम भी याग माना गया है। परन्तु जब योगीजन अपनी इन्द्रियों को गौ रूपी इन्द्रियों को संयम में लाने का प्रयास करते हैं वह गौ मेध याग करते हैं। परन्तु गौ नाम पृथ्वी को भी कहा गया है। जब कृषक मुनिवरों! देखो, विशुद्ध रूपों से, इस पृथ्वी के गर्भ से नाना प्रकार के खाद्यान्न को प्राप्त करता है और वैज्ञानिक बन करके इसके गर्भ से, नाना प्रकार के खाद्य–खनिजों को अपने में ग्रहण करता है। खाद्य और खनिज पदार्थों को धारण करने का नाम बेटा! हमारे यहां उसे गौमेध याग कहा जाता है जब विद्यालय में ब्रह्मचारी प्रवेश करता है तो आचार्य कहता है आ, ब्रह्मचारी गौमेध याग करेंगे। तो बेटा! देखो, गौ नाम इन्द्रियों का है और मेध नाम बेटा! देखो, उस विद्या का है जो इन्द्रियों को सजातीय बना देती हैं। सबसे प्रथम विद्यालय में ब्रह्मचारियों के मध्य में बेटा! जब आचार्य उपस्थित होता है तो प्रत्येक इन्द्रियों के दोषों को सबसे प्रथम वह हनन करता है। मेरे प्यारे! जब वह गौमेध याग करना प्रारम्भ कर देता है तो वही गौमेध, मेरे पुत्रों! देखो, विद्यालयों को सजातीय बना देते हैं।

तपस्विता

तो विचार विनिमय क्या, आओ मेरे पुत्रों! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, यहां एक–एक शब्द के नाना पर्यायवाची शब्दों की विवेचना होती रहती है आज मैं उन विवेचनाओं में न जाता हुआ, आज तुम्हें मैं परिचय देने के लिए आया हूं। कुछ सूक्ष्म परिचय यह है कि आज के हमारे वेद के पठन–पाठन में, जहां माता वसुन्धरा का वर्णन आ रहा था, जहां गौमेध और भी नाना प्रकार के यागों का वर्णन, वहां आज के वेद पाठ में बेटा! तपं ब्रह्मः तपं वायुः रथं ब्रह्माः वाचं तपाः मेरे प्यारे! देखो, तप की बड़ी महिमा आ रही थी। प्रत्येक मानव संसार में तपस्वी बनना चाहता है। मेरी प्यारी माता यह चाहती है कि मेरा पुत्र तपस्वी बन जाए, परन्तु आचार्य चाहता है कि ब्रह्मचारी तप में परिणत हो जाए। मेरे पुत्रों! देखो, यहां कोई भी ऐसी वस्तु नहीं है जो तपना न चाहती हो और तपने के पश्चात् नाना प्रकार के व्यंजनों को जन्म देना प्रारम्भ कर देती है। जैसे पृथ्वी माता, ग्रीष्म ऋतु में तपा करती है। जब वर्षा काल आता है, वृष्टि प्रारम्भ होती है तो यह नाना प्रकार के व्यंजनों को जन्म दे देती है। मेरे पुत्रों! देखो, उस माता वसुन्धरं ब्रहे जो पृथ्वी कही जाती है, वह नाना प्रकार के व्यंजनों से मानो देखो, जब विद्यालय में ब्रह्मचारी तपा करता है; तपने के पश्चात् मेरे पुत्रों! वह आचार्यमयी बन जाता है। मुनिवरो! देखो, जब अपने गृह में मेरी पुत्री ब्रह्मचारिणी तपा करती है तो अपने ब्रह्मचर्य को सजातीय पदार्थों के द्वारा वीरांगना के रूपों में, तो मेरे पुत्रों! देखो, वह ममतामयी को प्राप्त होती है। यदि तप नहीं होगा तो ममत्व को प्राप्त नहीं हो सकती। इसी प्रकार मुनिवरों! सूर्य प्रातःकाल से उदय होता है और सायंकाल तक तपता रहता है। वे तपायमान रहता है। मेरे पुत्रों! जब वह तपता ही रहता है तो मुनिवरों! देखो, स्वतः तपता है, संसार को तपाता है, ऊर्ज्वा देता है। वैज्ञानिक, मुनिवरों! देखो, उसके प्रकाश में उसकी ऊर्ज्वामयी सत्ता को प्राप्त करते हुए नाना प्रकार के यन्त्रों का निर्माण करने लगते हैं।

महर्षि याज्ञवल्क्य का आश्रम

तो आओ मेरे पुत्रों! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, आओ आज मैं तुम्हें बेटा! महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज के विद्यालय में ले जाना चाहता हूं। जहां महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज अपने में तपों की महिमा का गुणगान गाते रहते थे, यशों में गान गाते हुए एक समय बेटा प्रातःकालीन वह याग के रूप में मानो देखो, यज्ञशाला के दक्षिण विभाग में विद्यमान होकर बेटा! सामगान गाने लगे, तो वेद मन्त्र आया तपं ब्रह्मा तपं रुद्रो भगः ब्रह्मे वाचन् तपं ब्रह्मे व्रतं देवाः वेद का आचार्य कहता है, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज उनके अंग संग विद्यमान ब्रह्मचारियों से कहते हैं–हे ब्रह्मचारियों! तुम्हें यह प्रतीत है कि वेद का मन्त्र क्या कह रहा है? वेद का मन्त्र कहता हैं कि प्रत्येक मानव को तपना चाहिए, क्योंकि ये संसार तपायमान है यहां पृथ्वी तप रही है, सूर्य तपायमान है, चन्द्रमा तपता है, तो रात्रि को अपने गर्भ में धारण कर लेता है। ब्रह्मचारी तप रहा है, ब्रह्मचारिणी तप रही है यहां मानो देखो, मेध मण्डलों में जब जलों की प्रतिभाषितता होने लगती है तो वह भी तपायमान ही कहा जाता है। यह संसार तपोमय कहलाता है। इसलिए हमारी इच्छा यह है कि हमें भी तप करना चाहिए। मेरे प्यारे! देखो, वेद मन्त्र की विवेचना देते हुए, ऋषि याज्ञवल्क्य ने ब्रह्मचारियों से कहा, हे ब्रह्मचारियों! आज तो मेरे मैं भी एक उद्‌गार उत्पन्न हो रहा है, ब्रह्मचारियों ने कहा– प्रभु! वह क्या? याज्ञवल्क्य मुनि ने कहा–कि मेरी इच्छा है कि मैं भी तपोमय मानो अपने जीवन को बनाना चाहता है और भयंकर वन में जा करके, मैं तपना चाहता हूं।

विद्यालय की पवित्रता

मेरे प्यारे! देखो, महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने जब ऐसा कहा तो ब्रह्मचारियों ने हर्ष ध्वनि करते हुए कहा–हे प्रभु! धन्य हैं मानो देखो, जिस विद्यालय में ब्रह्मचारियों के मध्य में आचार्य तपा हुआ होता है तो वह आचार्य और ब्रह्मचारियों दोनों को धन्य है। वह विद्यालय पवित्र बना करता है। जिस राजा के राष्ट्र में राजा तपा हुआ होता है, मानो देखो, वह राजा अपने राष्ट्र को तपोमयी बना देता है। यदि तप नहीं होगा, तो राष्ट्र भी ऊँचा नहीं बनेगा। तप नहीं होगा तो विद्यालय भी ऊँचा नहीं बनेगा। तो विद्यालय में मानो देखो, तपोमयी आचार्य रहना चाहिए। मेरे पुत्रों! देखो, जब ऋषि ने यह वर्णन किया, ब्रह्मचारियों ने भी उसकी सराहना की। तो याज्ञवल्क्य मुनि कहते हैं–हे ब्रह्मचारियों! तुम अपने विद्यालय को सुचारु रूप से मानो इसको गतिवान बनाना है और मैं तपों के लिए, भयंकर वन में जा रहा हूं। कुछ समय के पश्चात् तपने के पश्चात् मानो देखो, विद्यालय में पुनः आकर अपने तप की महिमा का मैं अपने में बखान कर सकूंगा।

मेरे पुत्रों! देखो, जब ऋषि ने यह वाक् कहा तो ब्रह्मचारियों ने कहा–प्रभु! तप करने के लिए जाइए, मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने विद्यालय को त्याग दिया और विद्यालय को त्याग करके भ्रमण करते हुए बेटा! वह भयंकर वन में पहुंचे। भयंकर वन में जैसे ही पहुंचे, उन्हें एक वेद मन्त्र स्मरण आया और वह वेद मन्त्र का बारम्बार उद्‌घोष करने लगे मनश्चं ब्रह्मे व्रतं ब्रह्मे वाचन्नमं ब्रह्मे कृतं लोकाम् मानो यह वेद का मन्त्र था। वेद का मन्त्र यह कह रहा था कि एक मानव तप करने जा रहा है, परन्तु जो उसके मन से सम्बन्धित प्राणी है, चाहे वह सहपाठी है परन्तु देखो, उनके मन की तरंगें, उस तपोमयी मन को स्पर्श करेंगी, और तप मुनिवरों! देखो, वही मानो देखो, निवृत्त हो जाता है। तो विचार क्या मुनिवरों! देखो, जहां मन को प्रसन्न, मन को देखो, निर्द्वन्द्व बना करके तपो में हमें जाना है।

महर्षि का पत्नियों से सम्वाद

मेरे पुत्रों! याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने विचारा वेद मन्त्र जो कह रहा था कि ब्रह्मे व्रतं पत्नं ब्रहे मेरे गृह में दो पत्नियाँ हैं मुझे उन्हें संतुष्ट करना है। मेरे प्यारे! देखो, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने जब अपने गृह में प्रवेश किया तो गृह में जाते हुए अप्रतम मेरे पुत्रों! सबसे प्रथम वह कात्यायनी के गृह में प्रवेश किया। जब कात्यायनी ने दृष्टिपात् किया कि आज बिना सूचना के ऋषि का आगमन हो रहा है। उन्होंने कहा भगवन्! अप्रतं ब्रह्मे आगमनं ब्रह्मे मेरे पुत्रों!

ऋषि ने कहा—देवी! आज मैं प्रातःकालीन वेदों का अध्ययन कर रहा था। उसमें तप की बड़ी महिमा का वर्णन आ रहा था। तो देवी! मैं तप करने के लिए जा रहा हूं, तुम्हारी क्या इच्छा है? मेरे पुत्रों! याज्ञवल्क्य मुनि महाराज की धर्म देवी कात्यायनी ने आसन दे करके देखो, उन्हें जल इत्यादि का पान करा करके कहा—प्रभु! यह तो हमारा बड़ा सौभाग्य है। क्योंकि जिस गृह में पति तपा हुआ होता है, उस पत्नी का सौभाग्य है। कोई इस संसार में पत्नी यह नहीं चाहती कि मेरे पति के शरीर वर्णस्तपः प्रभाः उसमें किसी प्रकार का अवगुण हो, प्रत्येक देवी यह चाहती है कि मेरा पति पवित्र, तपस्वी हो। ब्रह्मवर्चोसि हो मानो देखो, वह संसार में महान प्रतिभाशाली होना चाहिए। मानो मेरी इच्छा तो यही रही है भगवन्! आप तप करने के लिए जाइए, यह तो हमारा सौभाग्य है।

मेरे पुत्रों! देखो, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने वहां से गमन किया, वह बड़े हर्षित हो करके मानो देखो, दूसरी पत्नी मैत्रयी के समीप पहुंचे। जब उनके द्वार पर पहुंचे तो मुनिवरों! देखो, उसी प्रकार मैत्रयी ने भी उनका स्वागत किया और मैत्रयी ने आसन दिया, वह विराजमान हो गये। उन्होंने कहा—प्रभु! बिना सूचना के हमारे इस गृह में आपका जो प्रवेश होना है यह बड़ा आश्चर्य से युक्त है भगवन्! हम यह जानना चाहते हैं कि बिना सूचना के गृह में आपका आगमन क्यों हुआ? मेरे पुत्रों! महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा—हे देवी! मैं तप करने जा रहा हूं मानो देखो, मेरी इच्छा यह है कि तुम मुझे आज्ञा दोगी, कि मैं तप करने चला जाऊँ?

मेरे प्यारे! देखो, मैत्रयी ने कहा—प्रभु! हमारा क्या बनेगा? जब आप तप करने चले जायेंगे तो हमारा क्या बनेगा? क्योंकि पत्नी जो होती है वह पति के आश्रित मानो देखो, उसके गुणों का गुणगान गाती रहती है, यशोमय देखो, उस बुद्धिता को प्राप्त होती रहती है। हे प्रभु! हमारा क्या बनेगा? क्योंकि साधना भी मानो देखो, हम आपके सूत्र से सूत्रित हो सकते हैं जब मुनिवरों! देखो, मैत्रयी ने ये कहा तो उन्होंने कहा—देवी! तुम्हें यह अज्ञान मानो कहां से आया है। जब मेरा तुम्हारा आत्म विज्ञान के ऊपर शास्त्रार्थ हुआ था, आत्मा के ऊपर विवेचना हई थी तो मानो देखो, तुमने ह्रासता को प्राप्त हो करके ये कहा कि प्रभु! मैं साधना में परिणत हो जाऊँगी? आपके आश्रित हो करके मैं साधना में रत होना चाहती हूं। तो देवी! यह अज्ञान तुम्हें कहां से आया है? अब मैं तप करने जा रहा हूं और तुम यह कहती हो। उन्होंने कहा—भगवन! ब्रहे मेरा तो ऐसा ही आश्रय बना है। परन्तु याज्ञवल्क्य कहते हैं—हे देवी! इस मधुविद्या को तुम पान करने वाली बनो, क्योंकि जो भी संसार में प्राणी क्रियाकलाप करता है अथवा कर्म करता है वह अपने लिए किया करता है। जैसे पत्नी है यह पति के लिए पत्नी ही कहलाती है। परन्तु अपने लिए पत्नी नहीं कहलाती। जब यह अपने में स्वतः पत्नी बन जाती है, तो उसका कल्याण हो जाता है। ये पति के लिए ही पत्नी कहलाती है। परन्तु जब अपनी अन्तरात्मा से प्रत्येक इन्द्रियों को सजातीय बना करके, आत्मा में प्रवेश करके, परमात्मा की मानो देखो, पत्नित्व को प्राप्त हो जाती है तो उसका कल्याण हो जाता है। हे देवी! तुम्हें प्रतीत है पति जो होता है वह पत्नी के लिए होता है, यदि अपने लिए स्वतः वह पति बन जाए तो मुनिवरों! इसका कल्याण हो जाए। पति का अभिप्राय अपनी प्रत्येक इन्द्रियों पर आधिपत्य करने का नाम पति कहलाता है। और जब इन्द्रियों के ऊपर संयम हो जाता है; मन और बुद्धि एक सूत्र में सूत्रित हो जाते हैं चित्त, अहंकार अपनी साम्यता को प्राप्त कर लेता है। तो बेटा! ये परमात्मा को प्राप्त हो जाता है।

तो मेरे पुत्रों! देखो, जब उन्होंने यह कहा तो मैत्रयी मौन होने लगी, उन्होंने कहा—देवी! पुत्र जो होता है वह माता के लिए पुत्र है परन्तु यदि वह अपने लिए पुत्र बन जाए तो उसका कल्याण हो जाए। क्योंकि अपने लिए पुत्र कौन होता है? जब अपने को यह स्वीकार कर लेता है कि मैं पुत्र हूं। मैं मानो देखो, परमपिता परमात्मा का पुत्र हूं। मेरे पुत्रों! यह तो ऋणबंदी संसार है तो मानो देखो, उस पुत्र का कल्याण हो जाता है। पुत्री जो होती है वह पिता के लिए सीमित रहती है परंतु जब वह परमपिता परमात्मा को अपना पिता स्वीकार कर लेती है और अपनी इन्द्रियों में संयमी बन करके मानो देखो, अपने को नम्रता से समर्पित पुत्री, पुत्री का अर्थ है जो अपने को समर्पित कर देता है। जब परमपिता परमात्मा में समर्पित हो जाता है। तो मेरे पुत्रों! देखो, सदैव सर्वत्र स्थलियों पर परमपिता परमात्मा का दर्शन होने लगता है वह मनों में प्रसन्न हो करके मेरे पुत्रों! देखो, अपने लिए वह पुत्री बन जाती है तो कल्याण हो जाता है।

परमात्मा की निधि

तो मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि कहता है—हे देवी! यह जो वित्त है यह भी आत्मा को तृप्त करने के लिए मानो एकत्रित करता है। परन्तु यदि द्रव्य को परमपिता परमात्मा की निधि जब स्वीकार कर लेता है, तो मानो इस द्रव्य के आश्रित हो करके पापाचार नहीं करता। वह मानो देखो, आत्मा के लिए ही एकत्रित करता है उससे याग इत्यादि क्रियाकलापों में परिणत हो जाता है। वह कल्याण में प्राप्त हो जाता है। तो हे देवी! संसार में जितने भी क्रियाकलाप हैं चाहे वह मानो देखो, वित्त हैं, राष्ट्र हैं, कोई भी क्रियाकलाप हों। वह सर्वत्र ही अपने लिए क्रियाकलापों में परिणत रहता है। मेरे पुत्रों! देखो, इस मधुविद्या का जब उन्होंने अध्ययन कराया और निर्णय कराया तो बेटा! मैत्रयी नत मस्तिष्क हो गई, और मैत्रयी ने कहा—धन्य है प्रभु! आपने मेरे अज्ञान को दूरी कर दिया है, आप तो बड़े महान हैं प्रभु! आप ने मानो देखो, मेरे अन्धकार को मेरे से दूरी करते हुए मानो देखो, मुझे प्रकाश में पहुँचाया है।

तो मुनिवरों! देखो, जब ऋषि ने यह वर्णन कराया और भी नाना प्रकार की विद्याओं का अध्ययन कराया तो मेरे पुत्रों! देखो, देवी ने नतमस्तक हो करके कहा प्रभु! यह मेरा सौभाग्य है। आप तप करने के लिए जाइये, प्रभु! मेरे प्यारे! देखो, महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज अपनी दोनों पत्नियों को एकान्त स्थली पर विद्यमान हो करके बोले कि देवियों! मैं तुम्हारे द्रव्य का बंटवारा किए देता हूं। मेरे पुत्रों! मैत्रयी ने कहा प्रभु! हम स्वतः अपना बंटवारा कर सकेंगे। आप तप करने जाइये।

तप का स्वरूप

मेरे पुत्रों! महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने गृह को त्याग दिया। दोनों पत्नियों को ज्ञान से संतुष्ट करते हुए विवेक से मानों भरण करते हुए वह मुनिवरों! देखो, भयंकर वन में जा पहुंचे, भयंकर वनों में जब वेदों का अध्ययन करने लगे तो विचारा कि तपं ब्रह्मे तपां वृहि व्रतम् वेद का वाक् यह कहता है कि तप किसे कहते हैं? मेरे प्यारे! ऋषि—मुनि इसी के ऊपर अध्ययन करते रहे, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने इसके ऊपर अध्ययन किया। कि तप क्या है? तो मेरे प्यारे! ऋषि ने अपनी आख्यिका में वर्णन करते हुए कहा है कि तप उसे कहते हैं मानो देखो, तपं इन्द्राणि गच्छत्प्रह्ना इन्द्रियों को संयम में लाने का नाम तप है। मन को पवित्र बनाने का नाम तप है। मेरे प्यारे! देखो, यह मन कैसे पवित्र होगा? मन की उत्पत्ति के मूल को ऋषि ने जानने की इच्छा की। तो मुनिवरों! जब मन के मूल को जानने लगे तो उन्होंने कहा अन्नादं भूतं प्रह्ना व्रत्तं ब्रहे वाचन्नमः बेटा! वेद की आख्यिका कह रही थी कि मन को पवित्र बनाने का नाम मानो देखो, तप कहा जाता है। यदि मन पवित्र होगा तो इन्द्रियाँ संयमी हो सकती है। इन्द्रियों में संयम होगा तो ब्रह्माण्ड का ज्ञान और विज्ञान हमारे समीप होगा, तो व्यष्टि से समष्टि में प्रवेश हो करके और परमपिता परमात्मा के उस आनन्दमयी स्रोत को हम जान सकते हैं। मेरे पुत्रों! देखो, जब ऋषि ने इस प्रकार का अध्ययन किया और अध्ययन करते हुए क्योंकि आध्यात्मिक विज्ञान एक अपने में अनूठा कहा जाता है। तो याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने बेटा! उस अन्न को एकत्रित करना प्रारम्भ किया, जिस अन्न को मानो देखो, भूमि में से कृषक उस अन्न को अपने गृह में ले जाता है, और उसके पश्चात् जो अन्न रह जाता है जिसको हमारे यहां शिलस्थ अन्न कहा जाता है, उस अन्न को उन्होंने एकत्रित किया और एकत्रित करके बेटा! उसे पान किया और पान करने के पश्चात् मन पवित्र बनने लगा। इन्द्रियां पवित्रता में ग्रहण, अव्रत होने लगी।

तप से शतपथ

मेरे पुत्रों! देखो, जब पवित्रता छाने लगी, तो हृदय स्वच्छ बन गया। मेरे प्यारे! इस प्रकार बारह वर्ष का कठोर तप करने के पश्चात् उन्होंने एक पोथी का निर्माण किया। जिस पोथी का नाम शतपथ ब्राह्मण कहा जाता है जो सत का पथिक होता है वही ब्राह्मण कहा जाता है। मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने तीन वाक् शतपथ ब्राह्मण को लेखनीबद्ध करते हुए, उन्होंने सबसे प्रथम यह प्रश्न किया कि ब्राह्मण कौन है? वेद के आचार्य ने उत्तर दिया कि जो ब्रह्मं जानाति ब्राह्मणा जो ब्रह्म को जानता है। मेरे प्यारे! देखो, उन्होंने कहा ब्रह्मचारी कौन है? उन्होंने कहा ब्रह्मचारी वह है जो ब्रह्म को अपने प्रत्येक श्वांसों में पिरोने

वाला है। वेद के आचार्य ने तीसरा प्रश्न किया कि ब्रह्म की चरी को कौन चरता है? मेरे पुत्रों! देखो, एक सूत्र के ये तीन मनके कहलाते हैं। ब्राह्मण वह है जो कण कण में ब्रह्म को स्वीकार करता है। मेरे पुत्रों! देखो, कोई कण ऐसा नहीं, जहां वह परब्रह्म न हो। मुनिवरों! देखो, द्वितीय ब्रह्मचारी कौन? जो प्रत्येक श्वांस के साथ में मानो देखो, ब्रह्म को अपने में पिरोने वाला है मानो प्राण सूत्र में उस ब्रह्म को जो पिरो लेता है, प्रत्येक श्वांस में जो पिरोता है बेटा! वह ब्रह्मचारी है। द्वितीय कहता है ब्रह्मवृत्ति वृद्धा मेरे प्यारे! ब्रह्म की चरी को कौन चरता है? जो मुनिवरों! देखो, ब्रह्म और चरी को जानने वाला है। ब्रह्म कहते हैं परमपिता परमात्मा को और चरी कहते हैं प्रकृति को। जो दोनों को अंगों और उपांगों से जानने वाला है। मेरे पुत्रों! वह ब्रह्म की चरी को चरता रहता है।

शतपथ का कथानक

तो आओ मेरे पुत्रों! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, मैं कोई व्याख्याता नहीं हूं, तुम्हें परिचय देने के लिए आया हूं। महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने बेटा! देखो, उसके पश्चात् एक गाथा उन्होंने वर्णन की, एक आलंकारिक वार्ता उन्होंने प्रगट करते हुए कहा, शतपथ ब्राह्मण में–कि एक समय देवासुर संग्राम हो रहा था। देवासुर संग्राम होते हुए बहुत समय हो गया। देवासुर संग्राम में कहीं देवता विजय हो जाते, कहीं दैत्य विजय हो जाते। एक समय बेटा! देवता विजयी हो गये। जब देवता विजय हो गये तो मानो वृन्दं ब्रह्मा उन्हें देखो, जब दैत्य अपने में ह्रासता को प्राप्त हो गये, तो मेरे पुत्रों! देखो, देवताओं की सभा हुई, देवताओं की सभा में एक वृख का जन्म हुआ और वृख के मुखारबिंदु से एक ध्वनि का जन्म होने लगा। एक ध्वनि उत्पन्न होने लगी और वह ध्वनि को जो भी श्रवण करता था वहीं देवता बनने लगा। जब बेटा! यह संसार देववत् बनने लगा, देवताओं का बनने लगा तो मेरे पुत्रों! देखो, दैत्यों ने एक सभा की। शुम्भ, निशुम्भ, रक्तबीज इत्यादियों ने अपने सभापति महाराजा विरोचन को निमन्त्रित किया और दैत्यों ने कहा–प्रभु! देवताओं की सभा में एक वृख का जन्म हुआ है उस वृख के मुखारबिन्दु से एक ध्वनि उत्पन्न होती है और जो उस ध्वनि को श्रवण करता है वही देवता बन जाता है। हे प्रभु! हम यह चाहते हैं कि वह ध्वनि नहीं होनी चाहिए।

उन्होंने कहा–शुम्भ, निशुम्भ, रक्तबीज इत्यादि दैत्यों को, कि जाओ, तुम वृख को छलों। मेरे प्यारे! देखो, शुम्भ, निशुम्भ, रक्तबीज तीनों दैत्यों ने अपना क्रियाकलाप बनाया, मध्यरात्रि में बेटा! देखो, उस पर आक्रमण किया और जब दैत्यों ने देखो, वृख पर आक्रमण किया। जब वह वृख छला गया, छलने से पूर्व उसने उस ध्वनि को बेटा! देखो, रेणुका में प्रवेश कर दी। वह ध्वनि तो देवताओं की धरोहर थी; वह तो रेणुका में चली गई और जब दैत्यों ने उसे छल लिया और महाराजा विरोचन के द्वारा उसे लाया गया, और उसका जब मन्थन किया तो बेटा! उसमें वह ध्वनि नहीं थी। वह ध्वनि मानो देखो, ध्वनित नहीं हो रही थी। विरोचन से कहा कि–भगवन्! इसमें तो वह ध्वनि ही नहीं है। उन्होंने कहा–ध्वनि कहां गई? वह ध्वनि तो रेणुका में प्रवेश कर गई है। मेरे पुत्रों! अगले दिवस उन्होंने यह क्रम बनाया कि आज हम रेणुका को छलेंगे और बेटा! जब रेणुका को छलने के लिए उन्होंने अपनी प्रतिक्रियाएं बनाईं, तो रेणुका को यह ज्ञान हो गया था कि तू दैत्यों के द्वारा छली जायेगी। उन्होंने बेटा! उस देवताओं की धरोहर को मानो देखो, यज्ञ के दस पात्रों में समाहित कर दिया। मेरे पुत्रों। वह ध्वनि तो यज्ञ के दस पात्रों में प्रवेश हो गई। अब अगले दिवस मध्यरात्रि में जब रेणुका को छला गया, तो उसका जब मन्थन किया तो महाराजा विरोचन बोले–इसमें तो वह ध्वनि नहीं है। उन्होंने कहा–वह ध्वनि कहां गई? वह ध्वनि तो यज्ञ के दस पात्रों में प्रवेश कर गई है। उन्होंने कहा–कि अब तुम यज्ञ के पात्रों से निकास नहीं सकोगे।

देवासुर संग्राम

तो मेरे प्यारे! देखो, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने अपने वाक्यों का एक रूपक बनाया मानो देखो, यह वृत्तियां बनाईं, तो उसकी विवेचना करते हुए याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने कहा है कि व्रतं ब्रह्मे सम्भवः देवाः बेटा! यह देवासुर संग्राम क्या है? हमारे मानवीय दर्शन में ऐसा आता है कि यह जो हमारे इस मानव शरीर में नाना प्रवृत्तियों का जन्म होता है उसमें असुर–प्रवृत्तियों और देव–प्रवृत्तियों का जन्म होता रहता है मानो दोनों का संघर्ष होता रहता है। कहीं देव–प्रवृत्ति है, तो कहीं असुर–प्रवृत्ति है। उनमें मानो जब भयंकर संग्राम हो जाता है तो देवताओं ने दैत्यों को परास्त कर दिया। बेटा! दैत्य कौन है? काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह इत्यादि तृष्णा को बेटा! हमारे यहां दैत्य कहा जाता है। मेरे पुत्रों! देखो, जब देवता अपने में जो देव–प्रवृत्ति है जिनमें मानव देखो, सुदृष्टिपात् करता है, सु–शब्दों को ग्रहण करता है तो जो मानव देखो, सुगन्धि देता है सु–रसों को पान करता है, मानो सु–प्रीति करने वाला है जो ऐसी प्रवृत्ति है उसका नाम देववत् कहा जाता है। तो मानो देखो, इनके जब देवता अपने में ध्वनित होते हैं तो मुनिवरों! देखो, वह एक वृख का जन्म होता है। उस वृख का नाम बेटा! मन है। और मन को हमारे यहां वैदिक साहित्य में बेटा! वृख कहा है। प्रायः वास्तव में तो वृख नाम बेटा! गऊ के बछड़े को भी कहा जाता है। वृख नाम मुनिवरों! परमपिता परमात्मा को भी कहा जाता है। प्रातःकाल के सूर्य का नाम भी वृख है मानो देखो, यह नाना पर्यायवाची शब्द आते रहते हैं।

धर्म–ध्वनि

आज मैं इनकी विवेचना न करता हुआ, केवल तुम्हें यह वर्णन करने जा रहा हूं मेरे पुत्रों! देखो, जब देवासुर संग्राम होता रहता है तो इनके मध्य में एक वृख मानो मन का जन्म होता है। जब यह मन पवित्र होता है तो एक ध्वनि का जन्म होता है। वह धर्म ध्वनि कहलाती है मानो देवताओं के मन्थन से जब धर्म–ध्वनि उत्पन्न होती है तो जो भी धर्म मानो श्रवण करता है वह भी देवता बन जाता है। जो भी मानो धर्म ब्रह्मा धर्म में परिणत हो जाता है। मेरे पुत्रों! देखो, जब मन को यह असुर ठग लेते हैं तपायमान अपने में मानो ग्रहण कर लेते हैं। तो मेरे पुत्रों! यह धर्म ध्वनि रेणुका में प्रवेश हो जाती है।

बेटा! रेणुका नाम वैदिक साहित्य में बुद्धि का है, रेणुका पृथ्वी को कहते हैं, चन्द्रमा की कान्ति को भी रेणुका कहते हैं, रात्रि को भी रेणुका कहा जाता है। आज बेटा! मैं पर्यायवाची विवेचना में जाना नहीं चाहता हूं। विचार क्या मुनिवरों! देखो, यहां रेणुका नाम बुद्धि को कहा गया है, वह बुद्धि रेणुका कही जाती है जिसमें बेटा! ये धर्म समाहित हो जाता है। जब दैत्यों के द्वारा यह छली गई तो बेटा! देखो, यही धर्म मानो यज्ञ के दस पात्रों में प्रवेश कर गया। मेरे पुत्रों! देखो, मन्थन करने से प्रतीत हुआ कि ये यज्ञ के दस पात्र क्या हैं? मुनिवरों! परमपिता परमात्मा ने सृष्टि के पिता ने जब इस जगत का सृजन किया तो मानो बेटा! शरीर की रचना की। यह जो संसार है, यह भी एक प्रकार की यज्ञशाला है। बेटा! इस पर प्रत्येक मानव क्रियाकलापों में तत्पर रहता है और यह मानव का शरीर भी एक प्रकार की यज्ञशाला है। बेटा! इसमें पांच ज्ञानेन्द्रियां, पांच कर्मेन्द्रियां मानो देखो, इस यज्ञशाला के दस पात्र कहलाते हैं। मेरे पुत्रों! देखो, इन्हीं पात्रों से वह नाना प्रकार के क्रियाकलापों के रूप में याग करता रहता है। प्रत्येक जितना भी मानवीय दर्शनों से गुँथा हुआ विचार है, क्रियाकलाप है उस सर्वत्र का नाम बेटा! याग माना गया है।

सीमा से युक्त कार्य याग

माता–पिता की एक कामना होती है, एक संकल्प जन्म लेता है कि सन्तानां ब्रह्मा पुत्रों हरणस्ता वेद का वाक् कहता है कि माता–पिता का संकल्प जागरूक होता है। कि हम पुत्र याग करना चाहते हैं। तो मानो सन्तान उत्पत्ति का नाम भी याग है। बेटा! देखो, वह जब सीमा में रहता है, तो याग कहलाता है। मेरे पुत्रों! संसार का जितना भी क्रियाकलाप है वह मानो किसी भी प्रकार का हो, वह सीमा में जब तक रहता है वह याग कहलाता है। तो मेरे पुत्रों! यह जो शरीर रूपी यज्ञशाला है मानो इसके जो दस पात्र हैं, ये दस पात्र बेटा! पांच ज्ञानेन्द्रियां, पांच कर्मेन्द्रियां जब इन्द्रियों का साकल्य बना करके हृदय रूपी यज्ञशाला में जो मुनिवरों! देखो, ज्ञान रूपी अग्नि प्रदीप्त हो रही है जब उसमें ये स्वाहा कहता है, उस ज्ञान रूपी अग्नि में बेटा! स्वाहा कहता है अग्नि मानो ज्ञान रूपी अग्नि मानो इन्द्रियों को सजातीय बना देती है तो बेटा! ये यज्ञ के दस पात्र सजातीय हो जाते हैं।

योगेश्वर

आओ मेरे प्यारे! आज मैं तुम्हें विशेष चर्चा प्रगट करने नहीं आया हूं विचार केवल यह है कि यह तो मैं संक्षिप्त परिचय, ये तो विचारों का वन है बेटा! इस वन में, मैं जाने के लिए नहीं केवल विचार याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने अपनी पोथी का निर्माण करते हुए उन्होंने एक आख्यिका प्रगट की, एक आलंकारिका रूपों में मानो देखो, प्रत्येक ज्ञान को ऋषि ने सजातीय माना है तो विचार विनिमय क्या, मुनिवरों! देखो, योगेश्वर कौन होता है? जो अपनी

प्रत्येक इन्द्रियों के विषयों को साकल्य बना करके एक–दूसरे में ओत–प्रोत करके और वह हृदय रूपी यज्ञशाला में जो अग्नि प्रदीप्त हो रही है वह जो चेतनामयी होता याग कर रहे हैं उनमें जब तक प्रवेश नहीं हो जाता, तब तक मेरे पुत्रों! वह ऋषि या मुनि की उपाधि को प्राप्त नहीं कर पाता।

तो आओ मेरे पुत्रों! मैं विशेष विवेचना न देता हुआ, मुनिवरों! देखो, याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने अपनी पोथी का निर्माण किया और निर्माण करके मुनिवरों! अपने में मौन हो गये। उन्होंने एक आख्यिका प्रगट करते हुए अपने जीवन को सजातीय बनाया। मेरे पुत्रों! देखो, बारह–बारह वर्ष के दो अनुष्ठान करके महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज ने मानो तपं ब्रह्मे तपं रास्तुति देवाः वह तपो में अपने जीवन को बना करके बेटा! भयंकर वनों से प्रस्थान करते हैं। और भ्रमण करते हुए मेरे पुत्रों! देखो, अपने विद्यालय में उन्होंने प्रवेश किया।

जब विद्यालय में प्रवेश किया तो ब्रह्मचारियों ने बेटा! बारी–बारी चरणों को स्पर्श करके, उन्हें आसन दिया। आसन पर विराजमान हो गये। मेरे पुत्रों! जब विराजमान हो गये, तो ब्रह्मचारी एक पंक्ति में विद्यमान हो गये। ब्रह्मचारियों ने कहा–भगवन्! आप तपं ब्रहे व्रतं देवाः आचार्य ने कहा तपो वासुं सम्भवात्मा हृदयम् मेरे पुत्रों! देखो, उन्होंने कहा–भगवन्! तुमने तप किया है। तो उन्होंने कहा–मैंने आत्मा को सजातीय बनाया है। मेरे पुत्रों! देखो, विचार क्या, कि याज्ञवल्क्य ने अन्त में ये कहा कि ब्रह्मचारियों तपो की कोई सीमा नहीं है। मानो देखो, जो सीमा व्रत करते हैं, वह अज्ञान में हैं, जब तक मानव अपने जीवन को क्रियात्मकता में, तपोमय नहीं बनाता मानव देखो, अंधकार में परिणत रहता है।

तो मुनिवरों! देखो, यह वाक् उच्चारण करके याज्ञवल्क्य मुनि महाराज मौन हो गये। ब्रह्मचारियों की शंका निवारण करने लगे। मानो देखो, उनको तपो का उपदेश देने लगे तो विचार विनिमय क्या मेरे पुत्रों! आज के हमारे वाक्यों का कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए तपों में अपने जीवन को बनाये, मन को पवित्र बनाना, इन्द्रियों को संयम में लाना, इन्द्रियों को ज्ञान से सजातीय बनाना और देव–प्रवत्ति को लाना, मेरे पुत्रों! यह तप कहलाया जाता है।

आज का हमारा यह वाक् क्या कह रहा है कि हम अपने को तपोमय बनाते हुए, सर्वत्र ब्रह्मांड यह तपोमय कहलाता है। और तपं ब्रह्मे तपं ब्रह्मा जब ब्रह्म तपता है तो वह उग्रता में उग्र रूप धारण करता है। बेटा! वह सृष्टि का सृजन करता है इसी प्रकार आज का हमारा वाक् बेटा! यह समाप्त होने जा रहा है। आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय यह कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए हम बेटा! इस संसार सागर से पार हो जाएं, यह है बेटा! आज का वाक्, आज के वाक् उच्चारण करना, क्या कि वह परमपिता परमात्मा जो सर्वज्ञ हैं, मानो देखो, जो यज्ञोमयी स्वरूप हैं वह मानो देखो, ब्रह्माण्ड, योग और आध्यात्मिक सब मानो देखो, उसकी प्रतिभा आवृत्त रहती है यह है बेटा! आज का वाक्, समय मिलेगा शेष चर्चाएं कल प्रगट करेंगे आज का वाक् समाप्त अब वेदों का पठन–पाठन। **दिनांक–15–07–87** **जटपुरा, बुलन्दशहर**

भगवान राम का उपदेश व याग–दिनांक–20–07–87

जीते रहो,

देखो, मुनिवरों! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति कुछ मनोहर वेद मन्त्रों का गुण गान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा, आज हमने पूर्व से, जिन वेद मन्त्रों का पठन–पाठन किया। हमारे यहां परम्परागतों से, ही उस मनोहर वेद वाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेद–वाणी में उस महामना जो यज्ञोमयी स्वरूप है मानो याग जिसका आयतन माना गया है, गृह और सदन, यज्ञोमयी आभा में रत रहने वाला वह चैतन्य देव है। जिसकी महिमा का, गुण गान गाते हुए, हमारे आचार्यो ने भिन्न–भिन्न प्रकार की उसके ऊपर टिप्पणियां की हैं, अथवा उसके ऊपर अन्वेषण भी किया है और विचारते हुए कहा कि यज्ञोमयी जो स्वरूप है वह परमपिता परमात्मा महान है। मानो याग उसका आयतन, गृह माना गया है। जिस गृह का मानो वह निर्माण करता रहता है अथवा वह निर्माणमयी स्वरूप कहा जाता है। तो इसलिए परमपिता परमात्मा को अपना पुरोहित स्वीकार करते हैं। बेटा! पुरोहित उसे कहते हैं जो पराविद्या को, धारण कराने वाला है। जो मानो परा के लिए विचारता रहता है और मानो पराविद्या को जानता हुआ, उस परमपिता परमात्मा पुरोहित को प्राप्त हो जाता है।

वेद मन्त्र के तीन भाव

आओ मेरे पुत्रों! मैं इस याग के सम्बन्ध में कोई विशेष चर्चा, विश्लेषण देने के लिए नहीं, केवल हमारा आज का वेद मन्त्र क्या कह रहा है। वेद मन्त्रों में बेटा! भिन्न–भिन्न प्रकार के शब्दार्थ और भिन्न–भिन्न प्रकार की मानो शिक्षा प्रत्येक वेद मन्त्रों में बेटा! प्रतिभाषित होती रहती है। हमारे यहाँ वेद मन्त्रों में तीन प्रकार के भाव होते हैं। सबसे प्रथम वेद मन्त्रों में मानो लौकिकवाद होता है। लोक का मानव को ज्ञान होना चाहिए, व्यवहार में परिणत हो जाना चाहिए। इससे द्वितीय जो कर्म है वह वेदमन्त्रों में विज्ञान है। मानो विज्ञान किस प्रकार का हो? विज्ञान में मानव को कौन–सी दशा को अपनाना है? वह विज्ञान जो एक दूसरे से समन्वय करने वाला है। मेरे पुत्रों! देखो, तृतीय जो भाव आता है उसका नाम हमारे यहाँ आध्यात्मिक विज्ञान कहा जाता है। एक हमारे यहां लौकिकता, एक विज्ञान और मुनिवरों! देखो, तीसरा आध्यात्मिकवाद कहलाता है।

आध्यात्मिकवाद किसे कहते हैं? मेरे पुत्रों! आध्यात्मिकवाद उसे कहा जाता है जो लोक, परलोक और जितना यह भौतिक विज्ञान है इसको जब वह अपने अन्तःकरण में दृष्टिपात कर लेता है अथवा उसमें समाहित हो जाता है तो मेरे पुत्रों! उसका हमारे यहां नामोकरण आध्यात्मिकवाद माना गया है। प्रत्येक मानव आध्यात्मिकवाद की भिन्न–भिन्न प्रकार की उड़ाने उड़ता रहता है परन्तु हमारे यहां ये विज्ञान की, आध्यात्मिक विज्ञान की विचित्र उड़ान मानी गयी है प्रत्येक मानव के हृदय में यह विचार रहता है कि मैं संसार का याज्ञिक बनूं। हमारे यहां वैदिक साहित्य में भिन्न–भिन्न प्रकार के यागों का चलन आया जैसे हमारे यहां अग्निष्टोम याग है, वाजपेयी याग है, अश्वमेघ याग है, नरमेघ याग है, देवी याग है और मुनिवरों! देखो, हमारे यहां जैसे अश्वकृतिका और देखो, जहां वसुन्धरं ब्रह्मा जिसको हम गौमेध कहते हैं। अजामेध याग है, पुत्रेष्ठि याग है और भी नाना प्रकार के यागों का चलन हमारे वैदिक साहित्य में आता रहता है। आज मैं उन वाक्यों को न ले करके, आज तुम्हें मैं ये उच्चारण करने के लिए आया हूं कि हमारे यहां वृष्टि याग का भी वर्णन होता रहता है।

आओ मेरे पुत्रों! आज के हमारे वेद के पठन पाठन में यागों का चलन अथवा उनके क्रियाकलाप की प्रतिभा का वर्णन हो रहा था। तो मेरे पुत्रों! देखो, ये तो याग का प्रकरण है, यह तो बड़ा विशाल है, मैं इस वन में तो जाना नहीं चाहूंगा। परन्तु विचार केवल यह "यजमानं ब्रह्मा" मेरे पुत्रों! आओ, आज मैं तुम्हें एक ऋषि के आसन पर ले जाना चाहता हूं। जिन वाक्यों को हमने पूर्व काल में भी प्रगट किया है, आज भी वे मन्त्र आ रहे हैं। क्योंकि हमारे यहां भिन्न–भिन्न प्रकार के मन्त्रों में, उस परमपिता परमात्मा की महती अथवा अनुपमता और वेद मन्त्रों में क्या है, उसका प्रतिपादित होता रहता है। बेटा! एक समय महर्षि वैशम्पायन ऋषि महाराज, महाराजा अश्वपति के यहाँ से उनके वृष्टियाग को सम्पन्न करा करके बेटा! वह अपने आसन पर आ पहुंचे। परन्तु जब आसन पर आ गये तो वह शान्त मुद्रा में, बेटा! कुछ वेद मन्त्रों का अध्ययन करते हुए, निद्रा की गोद में चले गये, जब मध्यरात्रि हुई तो मध्यरात्रि में बेटा! वे वेद मन्त्र स्मरण आने लगे "यजमानं ब्रह्मां व्रत्य द्यौलोकं वाचप्रवीहि चित्रा रथं ब्रह्म व्रताः" बेटा! यह वेद का मन्त्र स्मरण आ गया और ये वेद मन्त्र ये कह रहा है कि यजमान का रथ बन करके चित्रों में चित्रित होता हुआ द्यौलोक को प्राप्त हो जाता है। ये वेद का मन्त्र कह रहा था, परन्तु महर्षि वैशम्पायन यह विचारने लगे, कि यह वेद मन्त्र तो अशुद्ध हो नहीं सकता। वेद मन्त्रों में जो ज्ञान और विज्ञान है अथवा जो प्रतिभा है वह यथार्थ है। वह अशुद्ध तो हो नहीं सकता। परन्तु इसके ऊपर चिन्तन किया जाए।

याग से वायुमण्डल की शुद्धि

तो बेटा! ऋषि मध्यरात्रि से चिन्तन करने लगा, कि वेद के शब्द अन्तरिक्ष में जाते हैं, शब्द मानो वह अग्नि की धाराओं पर विद्यमान होते हैं और यजमान जब स्वाहा कहता है तो स्वाहा के साथ में उसका चित्र बन करके अन्तरिक्ष में क्या, द्यौ लोक में प्रवेश हो जाता है। और वह वायुमण्डल में क्या? मुनिवरों! देखो, अन्तरिक्ष में वह अशुद्ध परमाणुओं को निगलता रहता है। उसका शुद्धिकरण करता रहता है। तो ऐसा वेद का मन्त्र कह रहा था, परन्तु उसी

चिन्तन में बेटा! प्रातःकाल हो गया। जब प्रातःकाल सूर्य उदय हो गया, तो ऋषि ने, अपने आसन को नहीं त्यागा। तो बेटा! देखो, वहाँ कुछ ही दूरी पर महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज का आश्रम था। महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि के आसन पर आये। क्योंकि ऋषि आसन को नहीं त्याग रहे थे, तो वेद के आचार्य ने कहा–हे भगवन, हे वैश्म्पायन! आप अपने इस आसन को क्यों नहीं त्याग रहे हैं? उन्होंने कहा–''प्रभु! ये वेद का मन्त्र यह कहता है कि यजमान का रथ बन करके जाता है, मैं उस निर्णयात्मक अपने विचारों को बनाना चाहता हूं।'' मेरी मनोनीत एक ही इच्छा है कि मैं उस वाक् को जान जाउं+, उस चित्र को मैं अपने में चित्रण करता रहूं। तो ऐसा मानो देखो, मेरा भाव है, मुनिवरों! देखो, इसके ऊपर महर्षि विभाण्डक मुनि महाराज भी अन्वेषण करने लगे। मेरे पुत्रों! देखो, ''आसन शून्यं ब्रह्मे'' शून्य बिन्दु पर है।

बेटा! देखो, कहीं से भ्रमण करते हुए शौनक ऋषि महाराज, अपने कुछ ब्रह्मचारियों के सहित ये विचार व्यक्त करते हुए, कि ऋषि से मुझे समन्वय करना है, ऋषि से मिलान करना है। क्योंकि महाराजा अश्वपति के याग में से उनका पर्दापण हो गया होगा।

तो मेरे प्यारे! देखो, शौनक ऋषि, वैशम्पायन, ऋषि के आसन पर आये। ऋषि ने अपने आसन को नहीं त्यागा। तो उन्होंने कहा–''प्रभु! आप आसन को क्यों नहीं त्याग रहे हो?'' उन्होंने कहा–''एक वेद मन्त्र मुझे स्मरण आ रहा है और वेद मन्त्र ये कहता है कि ''यजमान का रथ बन करके द्यौ लोक को जाता है, मैं उस रथ को दृष्टिपात करना चाहता हूं।'' मेरे पुत्रों! देखो, जब शौनक जी ने यह वाक् श्रवण किया, तो उन्होंने भी दर्शनों से उस वाक् को सिद्ध किया, अग्नि की धाराओं का उन्होंने वर्णन किया। परन्तु कोई निबटारा नहीं हो सका। कहीं से भ्रमण करते हुए महात्मा भृगु और श्वेतकेतु मुनि महाराज दोनों का आगमन हुआ, वह भी उसी अनुसंधान में लग गये, कहीं से भ्रमण करते हुए महर्षि मृची ब्रह्मचारियों के सहित आश्रम में प्रवेश कर गये। मानो देखो, वे भी इसी आभा में परिणत हो गये। विचार विनिमय करते करते बेटा! देखो, मध्य दिवस हो गया। मध्य दिवस जब हो गया तो अपने में कोई निबटारा नहीं कर सके।

मेरे पुत्रो! चित्रों में दर्शन होना, द्यौ लोक में प्रवेश होना, यह तो वह जान गये थे। परन्तु देखो, उसको साक्षात्कार कैसे दृष्टिपात करे ये नहीं जान पाये। तो मेरे पुत्रों! देखो, ''ब्रह्मे वरस्तुम्भा'' वेद के आचार्य ने अपने में अनुसन्धान और मध्यदिवस में मुनिवरों! देखो, जब कोई निबटारा न हुआ तो कहीं से कागभुषुण्ड जी और महर्षि लोमश मुनि दोनों देखो, उनके द्वार पर आ पहुंचे। उन्होंने का–''कहो, ऋषिवर! आज आसन को नहीं त्याग रहे हो,'' हम तो इसलिए विराजे, कि आज ऋषि का आगमन, महाराजा अश्वपति के यहां से हो गया होगा। आप अपने कुछ और ही चिन्तन में लगे हुए हो, इसके मूल में क्या है? उन्होंने वर्णन किया–कि ''प्रभु! वेद मन्त्र ऐसा कहता है कि यजमान का रथ बन करके, द्यौ लोक को जाता है हम उस रथ को साक्षात्कार दृष्टिपात करना चाहते हैं।'' मेरे प्यारे! देखो, महर्षि कागभुषुण्ड और महर्षि लोमश मुनि ने ये कहा कि भई, यहां से अब गमन करते हैं और भगवान् राम के यहां नित्यप्रति याग होता है। उनकी उपदेश–मंजरी भी होती है उनके द्वारा एक याग का आयोजन होगा और उसके पश्चात् इसके ऊपर निर्णय हो सकेगा।'' ये वाक् बेटा! सब ऋषियों के ह्रदयों में समाहित हो गये।

महर्षि वैशम्पायन मुनि महाराज की अध्यक्षता में ऋषि–मुनियों का, समाज जिसमें कुछ ब्रह्मनिष्ठ थे, कुछ ब्रह्मवेत्ता थे, मानो कुछ ब्रह्मवर्चोसि कहलाते थे। भ्रमण करते हुए उन्होंने अयोध्या की ओर प्रस्थान किया। मेरे पुत्रो! देखो, मार्ग में जब रात्रि छा गई तो, महर्षि तत्वेत्वर मुनि महाराज का आश्रम उन्हें प्राप्त हुआ। तत्वेत्वर मुनि महाराज ने उनका स्वागत किया, नाना प्रकार के कन्द मूल इत्यादियों के द्वारा उनको आहार कराया। रात्रि समय उन्होंने वहीं विश्राम किया। प्रातःकालीन होते ही वहां से उन्होंने गमन किया और भ्रमण करते हुए बेटा! अयोध्या में उनका प्रवेश हो गया तो बेटा! प्रातःकाल का समय था मुनिवरों! देखो, भगवान् राम के यहां तो नित्यप्रति याग होता था और याग के पश्चात् उनकी उपदेश मंजरी प्रारम्भ होती। मानो उनकी उपदेश मंजरी प्रारम्भ होने वाली थी। इतने में ऋषि मुनियों का वह समाज वहाँ आ पहुंचा। उनके आसन लगे हुए थे, उनकी यज्ञशाला में बेटा! ब्रह्मवेत्ताओं के आसन भिन्न हैं, ब्रह्मचारियों के आसन भिन्न हैं, ब्रह्मवर्चोसि के आसन भिन्न हैं। मेरे पुत्रों! देखो, अपने अपने उचित आसनों पर ऋषि मुनि विद्यमान हो गये। विद्यमान हो जाने के पश्चात् भगवान् राम का उपदेश प्रारम्भ हो रहा था।

उद्बोधन

उन्होंने कहा–''हे श्रोता हे व्रत्यं देवा राष्ट्र वेत्ताओं! आज हमने जो याग किया है, उसमें जो वेद मन्त्र आये हैं वे क्या कहते हैं? उनके आश्रय पर तुम्हें ले जाना चाहता हूं। उन्होंने कहा कि मेरी इच्छा ये है कि यह जो हमने प्रातःकालीन याग किया है, अग्न्याधान किया है, अग्नि को प्रचण्ड किया है मानो अग्नि देवताओं का मुख कहलाता है। वह जो देवताओं का मुख है, हमें उस मुख के द्वार पर पहुंचना है। जो देवताओं का मुख कहलाया जाता है देवताओं की पवित्रता की जानकारी देखो, प्रायः संसार में होती रहती है। तो इसी प्रकार भगवान राम का उपदेश प्रारम्भ होता है, उन्होंने कहा ''कि वेद मन्त्र यह कहता है कि प्रत्येक राष्ट्र में देव पूजा होनी चाहिए, देवयाग होने चाहिए। जिससे राजा का राष्ट्र देवत्व को प्राप्त हो जाए। तो मुनिवरों! देखो, भगवान राम ने अपने राष्ट्रवेत्ताओं से कहा ''कि मेरी इच्छा ये है कि हमारे प्रत्येक गृह में ऋणों से अवृण होने वाला समाज होना चाहिए, परमपिता परमात्मा के राष्ट्र में तीन प्रकार के ऋणी कहलाते हैं।

ऋषियों का अयोध्या गमन

वेद के मन्त्रों में तीन प्रकार के ऋणों का वर्णन आता है। सबसे प्रथम ऋण हमारे यहाँ देखो, ब्रह्म–ऋण, ऋषि–ऋण, देव–ऋण कहलाता है। हम ऋणों से अवृण होने के लिए सदैव प्रयास करते रहें। तो मेरे पुत्रों! देखो, भगवान राम ने राष्ट्रवेत्ताओं से कहा कि मेरी इच्छा ये है कि हमारा जो अयोध्या राष्ट्र है, इसमें कोई भी मानव एक दूसरे का ऋणी नहीं रहना चाहिए। मानो देखो, द्वितीय ऋण पितृ ऋण होता है, एक राष्ट्रीय ऋण होता है भिन्न–भिन्न प्रकार के ऋणों में मानों अवृण होते हैं। माता–पिता का जो ऋण है वह यह है कि पुत्र पुत्रियां उनकी आज्ञा का पालन करें, प्रातःकालीन याग इत्यादियों में रत होते हुए मानो देखो, पितरों की सेवा, पितरों में परिणत हो जायें। हमारे यहां पितरों में, जहां माता पिता आते हैं वहीं पितरों में ऋषियों की विचारधारा भी आती है। ऋषि भी आते हैं, आचार्यजन भी आते हैं। मानो सूर्य, चन्द्रमा भी आते रहते हैं और भी नाना जितने पंच महाभूत हैं ये सब मानो देवताओं में परिणत माने गये हैं। इनमें कुछ देवता मानो देखो, जड़वत हैं, कुछ चैतन्यवत् कहलाते हैं। दोनों प्रकार के देवताओं के ऋणों से अवृण होना है। इन ऋणों से अवृण होना ये हमारे यहां प्रातःकालीन मानो देव पूजा होनी चाहिए। देवताओं के ऋणों से हमें अवृण होना है।

भगवान् राम की घोषणा

तो मुनिवरों! देखो, ये विचारधारा, भगवान राम प्रगट कर रहे हैं। यज्ञशालाओं में राष्ट्रवेत्ता, राष्ट्रकर्मचारी विद्यमान हैं। मेरे पुत्रों! भगवान राम ने ये घोषणा कराई, ''प्रत्येक गृह में देव याग होने चाहिए, प्रत्येक गृह में सुगन्धि होनी चाहिए, राजा को अपना राष्ट्र यदि उं+चा बनाना है तो प्रत्येक गृह से मानो सुगन्धि आनी चाहिए, जिस सुगन्धि के द्वारा मुनिवरों! देखो, गृह पवित्र होते हैं, राष्ट्र पवित्र होते हैं और वायु मण्डल पवित्र कहलाता है। तो मेरे पुत्रों! देखो, भगवान राम ने ये कहा कि मेरे राष्ट्र में कोई गृह ऐसा न हो, जिस गृह में देव पूजा न होती हो अथवा याग न होता हो। तो मेरे पुत्रों! देखो, भगवान राम का वाक् शिरोमणी है। उसके पश्चात् देव पूजा, देवत्व को धारण करना ही मानो याग इत्यादियों में देव पूजा कहलाती है।

उद्घोष

उसके पश्चात् मुनिवरों! देखो, हमारे यहां ब्रह्मयाग कहलाता है। ब्रह्मयाग का अभिप्रायः यह कि ब्रह्म का चिन्तन करना है, जिस परमपिता परमात्मा ने, इस मानव शरीर की रचना की है, इस शरीर में क्या–क्या विद्यमान है, उसको न माता जानती है, न पितर जानता है, न आचार्य जानता है, मानो न आध्यात्मिक विज्ञानवेत्ता, आचार्य स्वीकार करता है। तो मेरे पुत्रों! ऐसा गोपनीय विषय है, ऐसी गोपनीय रचना है, प्रभु की, जिससे बेटा! उस प्रभु का यशोगान गाना ही बहुत अनिवार्य है। क्योंकि जिस गृह में हमारा अन्तरात्मा वास करता है, हम वास करते हैं उस गृह को, अरे, मानव! उस गृह को ही नहीं जानते, कि उस गृह में क्या है? इस गृह में कितनी नस नाड़ियां हैं, कितना मानो देखो, उसमें क्रियाकलाप हो रहा है। मेरे पुत्रों! देखो, उससे ये सिद्ध हुआ है, कि

सृष्टि के प्रारम्भ में मेरे प्यारे प्रभु ने यह संसार रूपी यज्ञशाला का निर्माण किया है। ये यज्ञशाला निर्माणित होती हुई, इसमें परमपिता परमात्मा ब्रह्मा है और आत्मा मुनिवरों! देखो, इस संसार रूपी यज्ञशाला की यजमान है। पंच महाभूत मेरे प्यारे! देखो, इसमें आहुति दे रहे होता बन करके। कोई उद्‌गाता है, कोई अध्वर्यु बन करके, उद्‌घोष हो रहा है। प्राण जब अग्नि से मिलान करता है तो एक ध्वनि उत्पन्न होती है, उस ध्वनि का नाम मेरे प्यारे उद्‌घोष कहलाता है। वह उद्‌गाता है। उद्‌गाता जब अपने में उद्‌घोष गाने लगता है तो मेरे पुत्रों! देखो, उद्‌गाता की आयु में दीर्घता आ जाती है। मनस आ जाता है, पवित्रत्व आ जाता है, अभ्योदय होता रहता है।

प्रज्ञावी में प्रभु दर्शन

तो मेरे पुत्रों! देखो, भगवान राम ने यह उपदेश अपने राष्ट्र के लिए दिया, कि जिस राजा के राष्ट्र में बुद्धिजीवी प्राणी होते हैं, बुद्धिजीवी प्राणियों का अभिप्रायः क्या है? बुद्धिजीवी उसे कहते हैं जो बुद्धि को चेताते रहते हैं, जो बुद्धि को चेता करके मानो बुद्धि–मेधा से क्रियाकलाप करते रहते हैं। मुनिवरों! देखो, बुद्धि, मेधा और ऋतम्भरा से मौन हो करके प्रज्ञावी में प्रभु का दर्शन करते हैं। मेरे पुत्रों! देखो, ऐसे बुद्धिजीवी प्राणी राजा के राष्ट्र में होने चाहिए। जिससे राजा का राष्ट्र पवित्र हो जाए। देखो, बुद्धिजीवी प्राणी उसको नहीं कहते हैं जो अपने उदर की पूर्ति करता रहता है, अपने उदर में लगा रहता है। मानों देखो, बुद्धिजीवी प्राणी उसे कहते हैं जो अपने में ज्ञान, कर्म, उपासना में लगा हुआ है। मेरे पुत्रों! वेदों का उद्‌घोष गाता है, गान गाने लगता है। वेदों के कहीं जटा पाठ धन पाठ, माला पाठ, विसर्ग, उदात्त और अनुदात्त में बेटा! वेद मंत्रों को ध्वनित करता रहता है। वह मेरे पुत्रों! देखो, बुद्धिजीवी प्राणी कहलाता है।

बुद्धिजीवी योगी

विचार विनिमय क्या राम ने कहा है कि मेरे अयोध्या राष्ट्र में ऐसे बुद्धिजीवी प्राणी होने चाहिए जो पृथ्वी से ले करके, अन्य लोकों की उड़ान उड़ने वाले हों, विज्ञान में सार्थक हों मानों देखो, ऐसे बुद्धिजीवी प्राणी जो योग में परिणत होते चले जाएं। योगाभ्यास करके बेटा! देखो, मन और प्राण दोनों का समन्वय करके मन को प्राण के आश्रित बना लें और प्राण को मेरे पुत्रों! देखो, आत्मा के आश्रय दें, और आत्मा को जो प्रभु में आश्रय देने वाला है, वही बेटा! देखो, बुद्धिजीवी योगी कहलाता है।

बुद्धिजीवी प्राणियों से राष्ट्र

आओ मेरे पुत्रों! मैं विशेष विवेचना तो तुम्हें देने नहीं आया हूं, केवल परिचय देने के लिए आया हूं। भगवान राम का जो उपदेश चल रहा था। अंत में उन्होंने ये घोषण की कि मेरे राष्ट्र में, हमारे इस अयोध्या राष्ट्र में बुद्धिजीवी प्राणी होने चाहिए। क्योंकि जिस समय इस अयोध्या का निर्माण हुआ था, तो स्वायम्भु मनु महाराज ने इस अयोध्या का निर्माण किया था। अयोध्या का निर्माण इस प्रकार किया जैसे प्रभु ने इस मानव शरीर की रचना की है मानो शरीर रूपी अयोध्या का निर्माण किया है। मानो देखो, इसमें अष्टचक्र है, नौ द्वार कहलाते हैं। इसी प्रकार अयोध्यापुरी का निर्माण किया गया था। अयोध्या में नाना राजा हुए हैं। इसमें बेटा! देखो, रघुवंश भी रहा है। रघुवंश से पूर्व इसमें देखो, यहां राजा सागर का भी वंशलज रहे है, भगीरथ इत्यादि बेटा! देखो, इसी वंश में माने गये हैं। भगवान राम ने कहा कि इसमें प्रायः देखो, ऋषि–मुनियों की पतिका अपने में प्रतिभाषित होती रही है।

तो मुनिवरों! जब भगवान राम का उपदेश विरामता को प्राप्त होने वाला था तो उन्होंने कहा कि यहां माता–पिता का ऋणी कोई प्राणी नहीं रहना चाहिए, देवताओं का ऋणी कोई नहीं रहना चाहिए और मानो देखो, ब्रह्म ऋण को अवृण करने वाले हो, जिससे हमारे यहां कोई एक दूसरे का ऋणी न हो, ऋषियों का ऋण हमारे समीप रहता है। हम ऋषियों की आज्ञा का पालन करें। उन्होंने कहा ''ब्रह्मणे वाचप्रह्म लोकां वह्निस्तुम्'' मानो देखो, ऋषि–मुनियों का ये मन्तव्य रहा है कि जिस भूमि में, जिस स्थली पर हम रहते हैं वह पवित्र बने, वह महान बनती चली जाए। तो बेटा! भगवान राम ने ये वाक् कह करके, अपने वाक्यों को विराम दिया और ये उच्चारण करके कि राजा के राष्ट्र में बुद्धिजीवी प्राणी हो, एक–दूसरे का समाज में ऋणी न हो, ऋणों से अवृण होना हमारा कर्तव्य है।

ऋषियों का स्वागत

मेरे प्यारे! देखो, भगवान राम मौन हो गये और अपने राष्ट्र में ये घोषणा करा दी कि प्रत्येक गृह में याग होने चाहिए, ''पुरोहितां बुह्मे'' पुरोहितों के द्वारा, अपने क्रियाकलापों के द्वारा याग होना चाहिए। मेरे प्यारे! जैसे राम अपने में शांत हुए तो दृष्टिपात किया कि यहां तो नाना ऋषि मुनि, जो ब्रह्मवेत्ता है वे विद्यमान हैं। बेटा! राम ने उनके चरणों की वंदना की और चरणों को स्पर्श करके बोले कि प्रभु! ये मेरा कैसा दुर्भाग्य है जो तुम बिना सूचना के मेरे आसन पर आये हो, मुझे आज्ञा दे देते। मैं अपने वाहन में तुम्हें राष्ट्र में लाता। मानो आपका स्वागत न कर सका।

तो मेरे प्यारे! देखो, महर्षि वैशम्पायन बोले कि नहीं, ''प्रभु! हम तो यहां एक कार्य से आये हैं।'' मुनिवरों! देखो, जब उन्होंने ये वाक् उच्चारण किया तो राम ने कहा कि ''तुम किसलिए आये हो? मुझे आज्ञा दो।'' चारों विधाता नतमस्तक हो करके, एक सुर में ये कहते हैं ''प्रभु! आज्ञा दीजिए, हमारे सुयोग्य कोई कार्य हो तो,'' मुनिवरों! भगवान राम को उन्होंने आज्ञा दी कि ''तुम्हारे यहां एक याग होना चाहिए, हम याग के लिए प्रार्थी हैं और हम ये चाहते हैं कि याग होना चाहिए।'' भगवान् राम ने बेटा! बड़े प्रसन्नचित्त हो करके कहा ''प्रभु! ये तो हमारा सौभाग्य है कि ऋषि मुनियों की आज्ञा का हम पालन करें। देखो, अयोध्या में तो याग होते ही रहते हैं। हे प्रभु! आपकी आज्ञा हमें कहां प्राप्त होती है। तो यह हमारा सौभाग्य है।'' भगवान् राम ने बेटा! वाक् स्वीकार कर लिया। ऋषि–मुनियों का अपने अपने कक्षों में पदार्पण हुआ, वे अपने अपने कक्षों में विद्यमान हो गये। उनके उचित आसन, भगवान राम ने उन्हें प्रदान किए। उनका आहार, उनकी वृत्तियों में रत रहने वाला उन्हें प्रदान किया गया। और राम ने बेटा! देखो, शिल्पकारों को आज्ञा दी कि ''तुम एक यज्ञशाला का निर्माण करो।

मेरे पुत्रों! देखो, साकल्य एकत्रित होने लगा। तो मुनिवरों! मुझे कुछ ऐसा स्मरण जागरूक हो रहा है कि भगवान राम ने बेटा! नाना प्रकार के साकल्यों को एकत्रित किया और साकल्यों को एकत्रित करने के कुछ समय पश्चात् यज्ञशाला का निर्माण हो गया। यज्ञशाला के निर्माण होने के पश्चात् जब नाना साकल्य एकत्रित हो गया तो भगवान राम ऋषि–मुनियों के मध्य में पहुंचे और ऋषि–मुनियों के मध्य में जा करके उन्होंने कहा–हे प्रभु! यज्ञशाला का निर्माण हो गया है। यज्ञशाला में नाना प्रकार का साकल्य उपस्थित हो गया है। तो आइये, भगवन्! देखो, याग प्रारम्भ किया जाए। तो मेरे प्यारे! देखो, भगवान राम का ऋषि मुनियों के सहित यज्ञशाला में पदार्पण हुआ और नाना ऋषि–मुनि बेटा! देखो, उनमें से महर्षि वैशम्पायन उस याग के ब्रह्मा बने और मुनिवरों! देखो, महर्षि विभाण्डक उस याग के उद्‌गाता बने और महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज उस याग के पुरोहित बने और महर्षि शौनक इत्यादि, उस याग के अध्वर्यु, होता बने। जब सब एकत्रित हो गये तो जैसे ही याग प्रारम्भ हुआ तो बेटा! महर्षि वाल्मीकि इत्यादि का आगमन हुआ, क्योंकि याग को दृष्टिपात् करने के लिए उनको निमंत्रित किया गया था।

याग का प्रारम्भ

तो मुनिवरों! देखो, भगवान राम ने जैसे ही याग प्रारम्भ किया, तो प्रारम्भ के वेद मंत्रों में ही ''चित्रं रथं ब्रह्मा वरुणो सम्भवा यजमानस्सुतं ब्रह्मे द्यौ लोकां वाचन्नमं ब्रहे कृतं बह्मा सत्यं ब्रहे वाचन्नमं ब्रह्मे अग्नं ब्रवीहि वस्तुतं मृत्या कृतं वाचं द्यौ लोकाः'' बेटा! जब वेद मंत्रों का उद्‌घोष होने लगा, उद्‌गाता उच्चारण करने लगा तो उद्‌घोष में मेरे प्यारे! चुनौती प्रदान करने के पश्चात् भगवान राम ने जैसे अग्निहोत्र किया, इस अग्नि होत्र में जब ये मंत्र आया अग्नं रथं ब्रह्मा अग्नं ब्रीहि व्रतं ब्रह्मे वाचं द्यौ लोकाम् ऐसा जब मंत्रों का उद्‌घोष होने लगा, तो भगवान राम ने मुनिवरों! देखो, वह याग शांत कर दिया।

भगवान राम ने नतमस्तक हो करके कहा–''प्रभु! मैं इस यज्ञ का यजमान, आपने मुझे चुनौती प्रदान की है। मैं ये जानना चाहता हूं कि वेद का मंत्र जो ये कहता है कि ''यजमान का रथ बन करके द्यौ लोक में जाता है, मैं द्यौ लोक वाले रथ को दृष्टिपात करना चाहता हूं। मैं उसे साक्षात् दृष्टिपात् करना चाहता हूं?'' मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि वैशम्पायन इत्यादियों ने विभाण्डक मुनि ने बेटा! अपना वक्तव्य देना प्रारम्भ किया। उन्होंने कहा कि–''ये जो अग्नि

यज्ञशाला में प्रदीप्त हो रही है, इस अग्नि में जो सूक्ष्म तरंगें होती हैं। उन तरंगों में परमाणुवाद होता है वह देखो, उतने आकार का भ्रमण करके द्यौ लोक को प्राप्त होता रहता है।'' बेटा! वेद मंत्रों के वांगमय में ऋषि प्रवेश करके निर्णय करा रहा है, परंतु राम अपने में स्वीकार नहीं कर रहे हैं। नाना ऋषि मुनि बेटा! आश्चर्य से परिणत हो गये। मुनिवरों! देखो, जब ये वार्ता प्रारम्भ हो रही थी, तो इतने में कहीं से बेटा! महर्षि भारद्वाज, ब्रह्मचारी, सुकेता, ब्रह्मचारी कवन्धि, ब्रह्मचारिणी शबरी महर्षि पनपेतु अपने वाहन में विद्यमान हो करके उनका यज्ञशाला में पदार्पण हुआ। जब यज्ञशाला में आ गये तो मुनिवरों! देखो, राम ने उनके चरणों को स्पर्श किया, महर्षि श्वेताश्वेतर भारद्वाज मुनि बोले कि—''हे प्रभु! याग कैसे शांत हो रहा है? अग्न्याधान हो करके भी याग शांत हो गया है?''

द्यौ गामी चित्र दर्शन

भगवान राम ने कहा—''प्रभु! ये वेद मंत्र है और वेद मंत्र ये कह रहे हैं कि यजमान का रथ बन करके, द्यौ लोक को जाता है, मैं उस द्यौ लोक वाले रथ को दृष्टिपात् करना चाहता हूं। मेरी ये अभिलाषा है भगवन्!'' तो मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि ने कहा कि हे राम! तुम इन ब्रह्मवेत्ताओं का अपमान तो नहीं कर रहे हो? देखो, यह अपमानित करना कोई प्रियता नहीं है। राम ने कहा—''प्रभु! मैं तो इन ऋषि मुनियों के चरणों की धूली हूं। भगवन! मेरे में इतना सामर्थ्य कहा है जो मैं इनका अपमान कर सकूं। प्रभु! ये तो मेरे शिरोवृत्तियाँ हैं, मेरे हृदय को प्रकाश में लाने वाले हैं, प्रभु!''

मेरे पुत्रों! देखो, जब उन्होंने ये वाक् श्रवण किया तो महर्षि श्वेताश्वेतर भारद्वाज ने अपने ब्रह्मचारी कवन्धि और ब्रह्मचारिणी शबरी से कहा—''जाओ, अपना वाहन ले जाओ, और देखो, कजली वनों से, अपनी विज्ञानशाला से, नाना प्रकार की चित्रावलियों को लाया जाए। मेरे पुत्रों! देखो, मुझे स्मरण आ रहा है, वह अपने वाहन को ले करके ऋषि की आज्ञा पा करके बेटा! कजली वनों में पहुंचे और कजली वनों से नाना प्रकार की चित्रावलियों को लाया गया। जब वे चित्रावली आ गई, तो मुनिवरों! देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने यज्ञशाला में यंत्र स्थित कर दिए और यंत्रों में जब चित्रावली स्थित हो गई तो उन्होंने कहा—''राम! अपना याग प्रारम्भ कीजिए'', मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि मुनियों के हर्ष की कोई सीमा न रही, मानो हर्ष ध्वनि होने लगी। जैसे ही राम ने याग का प्रारम्भ किया, याग का उद्घोष होने लगा, जैसे ही स्वाहा उच्चारण किया गया, वैसे ही मुनिवरों! देखो, यंत्रों में स्वाहा के साथ में जो शब्द है, शब्दों के साथ चित्र है और चित्रों के साथ बेटा! जो क्रियाकलाप हैं वे यंत्रों में साक्षात् दृष्टिपात् आने लगे। उन्होंने कहा—''राम! तुम ये दृष्टिपात् करते जाओ। देखो, तुम्हारे प्रश्नों का उत्तर क्रियात्मकता में, विज्ञान के माध्यम से तुम्हें प्राप्त हो रहा है।'' राम बड़े प्रसन्न हुए और ऋषि के चरणों की वंदना की। ऋषि ने कहा—''राम! मेरे यहां एक—एक रक्त के बिंदु वाले यंत्र भी विद्यमान हैं जहां एक रक्त के बिन्दु, से उसका चित्र भी तुम्हें दृष्टिपात आयेगा'' उन्होंने कहा—''प्रभु! मुझे विश्वास है। मैं विश्वसनीय हूं। मैं आपके चरणों की वंदना कर रहा हूं। प्रभु! आप ने मेरे विचारों को साकार रूप दिया है।'' मुनिवरों! देखो, महर्षि भारद्वाज बोले ''राम! तुम इन्हें जानते हो, ये वही ब्रह्मचारिणी शबरी है—जो महर्षि पनपेतु मुनि महाराज की कन्या है और जब तुमने रावण से संग्राम करने के लिए व्रत किया था। तो उस समय जब समुद्र तट पर तुमने विजय याग किया, तो इसी शबरी ने सर्वत्र वैज्ञानिक यंत्र तुम्हें गेप, प्रदान किए थे, अस्त्रों शस्त्रों का निर्माण हमारे विद्यालय में हुआ और वे तुम्हें प्रदान किए, शबरी के द्वारा, ये तुम्हें प्रतीत होगा। मेरे पुत्रों! देखो, दर्शन करके राम बड़े प्रसन्न हुए उन्होंने कहा—प्रभु मैं जानता हूं इस मातेश्वरी को।''

मेरे पुत्रों! देखो, याग प्रारम्भ हो रहा था। नाना ऋषि, प्रश्नोत्तरों में, अपने जीवन की, अपनी आभाओं की झड़ियों में परिणत हो रहे थे। मेरे पुत्रों! मुझे कुछ ऐसा स्मरण आ रहा है कि वह याग बेटा! देखो, छः माह तक प्रारम्भ रहा। परन्तु राम अपने चित्रों का दर्शन करते रहे, द्यौ लोक में जाते हुए, शब्दों का दर्शन करते रहे। क्योंकि द्यौ में जितना शब्द पवित्र होता है, तो वह दर्शनों से, वेद मंत्रों से गुंथा हुआ होता। शुद्धिकरण से वह इस द्यौ लोक को जाता रहता है। यजमान का जितना रथ, जितनी यज्ञशाला, जितने आकार में होतागण विद्यमान हैं। मानो देखो, उनका रथ बना बनाया, यज्ञशाला के सहित चित्रों में दृष्टिपात आ रहा था, द्यौ लोक में उनकी स्थिति हो रही थी।

तो मुनिवरों! देखो, हमारे यहां विचार आता रहता है मैं उस वाक् को उच्चारण करना चाहता हूं कि हमारे यहां ऋषि मुनि एक एक वाक् पर बेटा! कितना अनुसन्धान करते रहे हैं, एक—एक वाक् को ले करके, वेद मंत्रों में कहीं भी इस प्रकार का भाव जब भी उपलब्ध हुआ है, उसी काल में ऋषि मुनियों ने बेटा! अनुसन्धान किया, अन्वेषण किया है। अपने में उसको लाने का प्रयास किया।

यजमान की प्रतिभा

तो मुनिवरों! देखो, छः माह तक याग प्रारम्भ रहा और छः माह तक वे ऋषि अपने में दर्शन करते रहे, चित्रों का दर्शन होता रहा। मेरे पुत्रों! देखो, छः माह के पश्चात् राम का वह याग सम्पन्न हुआ और याग सम्पन्न हो जाने के पश्चात् मुनिवरों! देखो, ब्राह्मण इत्यादियों ने उनकी दक्षिण स्वीकार की। हमारे यहां दक्षिणा के सम्बन्ध में, भिन्न—भिन्न प्रकार का प्रसंग आता रहता है।

हमारे यहां दक्षिणा का अभिप्रायः यह है कि जो यजमान यज्ञशाला में विद्यमान हैं, उसके हृदय में जो त्रुटियां होती हैं उसके जो क्रियाकलापों में त्रुटियां होती हैं उनको वह दक्षिणा में अर्पित कर देता है। वह दक्षिणा में जब अर्पित करता है, तो उसके हृदय का शुद्धिकरण हो जाता है। वह तेजोमयी, प्रजापति बन जाता है। मेरे पुत्रों! देखो, वेद का वाक् कहता है, ब्राह्मण को दक्षिणा देना, द्रव्य देना तो उसके उदर के लिए कहलाता है; वह तो उदर पूर्ति के लिए है, परन्तु वास्तविक जो दक्षिणा है वह उसकी त्रुटियां और उसके आहार और व्यवहार में जो अशुद्धि आ गई है, उसको वह समर्पित कर रहा है। वह उसे कहता है हे प्रभु! पुरोहित जन! यह मेरी दक्षिणा आप स्वीकार कीजिए। देखो, वह स्वीकार करता है और मुनिवरों! देखो, उस दक्षिणा का वास्तविक जो स्वरूप है, वह त्रुटियों को त्यागना, अपनी मौलिकता को लाना है जो हमारा इस संसार में, मानव के आने का उद्देश्य है मानवीय दर्शनों की परिभाषा में इस उद्देश्य को जानना मुनिवरों! देखो, उसमें रत रहने का नाम यजमान की प्रतिभा कहलाती है।

आओ मेरे प्यारे! मैं विशेष चर्चा तो तुम्हें प्रगट करने नहीं आया हूं, विचार केवल ये कि हमारे यहां भिन्न—भिन्न प्रकार के यागों का चयन होता रहा है। वैदिक साहित्यों में बेटा! उनकी बड़ी विवेचनाएं, बड़ा विस्तार से वर्णन है। समय आता रहेगा तो बेटा! मैं वर्णन कर सकूंगा। आज का विचार हमारा क्या है कि महर्षि वैशम्पायन बड़े प्रसन्न हुए कि मेरा जो वेद का मंत्र, जिसके ऊपर मैंने चिंतन किया, ऋषि मुनियों के आशीर्वाद से, उनके क्रियाकलापों से उसका साकार रूप मैंने दृष्टिपात् किया।

मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि वैशम्पायन ने याग को सम्पन्न करके राम से कहा कि ''धन्य है भगवन्! हे राजन, हे राम! तुम्हारा राष्ट्र बड़ा प्रियतम है, तुम्हारे यहाँ बुद्धिजीवियों की रक्षा होती रहती है।'' इसके साथ ही बेटा! देखो, भगवान् राम ने गऊ व इत्यादि नाना मुद्रायें ऋषियों को प्रदान की, सब ऋषि मुनियों ने वहाँ से गमन किया। मेरे पुत्रों! अपने अपने आसनों पर प्रसन्नचित्त हो करके उनका गमन हो गया।

मेरे पुत्रों! विचार विनिमय क्या, हमारे इन वाक्यों का, कि हमारे यहां परम्परागतों से ही याग अपने में एक अनूठा क्रियाकलाप माना गया है। जो देवताओं का सबसे प्रथम नृत कहलाया जाता है। इससे देवता अपनी अपनी आभा में गति करते रहते है, नृत होता रहता है। मुनिवरों! देखो, यजमान इसके साथ में नृत करता रहता है। विचार क्या मुनिवरों! देखो, यागां ब्रह्मणे व्रतं देवाः शुद्धिं ब्रह्हि व्रताम् मेरे प्यारे! देखो, इससे शुद्धिकरण हो जाता है। राष्ट्र में महानता की एक ज्योति जागरूक हो जाती है। क्योंकि जो राजा जिन क्रियाकलापों को करता है, प्रजा उसी के अनुसार अपने जीवन को बरतने लगती है तो बेटा! राष्ट्र भी पवित्र बन जाता है।

आओ, मेरे प्यारे! आज का हमारा वाक् क्या कह रहा है कि हम परमपिता परमात्मा की आराधना करते हुए, देव की महिमा का गुणगान गाते हुए बेटा! अपने क्रियाकलापों में पवित्र होते हुए, इस संसार सागर से पार हो जाए ये है बेटा! आज का वाक्, आज के वाक् उच्चारण करने का अभिप्राय ये कि हम द्यौ से महानता को अपने में धारण करते चले जाएं, ''यजमानं ब्रह्मे'' राजा के राष्ट्र में एक दूसरे का ऋणी नहीं रहना चाहिए, देव ऋण, ऋषि ऋण और पितर ऋण, यह नाना प्रकार के ऋण हैं देवत्वं देवाः ब्रह्मणे वाचाः ये सब मानो देखो, इसका पालन करते हुए, हम इस संसार सागर से पार हो जाएं, ये है

बेटा! आज का वाक् अब समय मिलेगा, मैं तुम्हें शेष चर्चाएं कल प्रगट करूंगा, आज का वाक् समाप्त, अब वेदों का पठन–पाठन होगा, इसके पश्चात् यह वार्ता समाप्त हो जाएगी। **राम नगर नैनीताल दिनांक – 20–07–87**

प्राणसत्ता व शंखध्वनि– दिनांक–31–12–87

जीते रहो!

देखो, मुनिवरो! आज हम तुम्हारे समक्ष, पूर्व की भांति, कुछ मनोहर वेद मंत्रों का गुणगान गाते चले जा रहे थे। ये भी तुम्हें प्रतीत हो गया होगा आज हमने पूर्व से, जिन वेद मंत्रों का पठन पाठन किया। हमारे यहां, परम्परागतों से ही, उस मनोहर वेदवाणी का प्रसारण होता रहता है। जिस पवित्र वेदवाणी में, उस महामना, मेरे देव की महिमा का गुणगान गाया जाता है। जो इस संसार का नियन्ता है, अथवा निर्माण करने वाला है। वे परमपिता परमात्मा जो सर्वत्रता में विद्यमान रहते हैं। मानो उस परमपिता परमात्मा की महती अथवा उसके ज्ञान और विज्ञान में सदैव मानव नृत करता रहता है। कोई की क्षण ऐसा नहीं है, जहां परमपिता परमात्मा के ज्ञान और विज्ञानमयी मानो उसमें रमण करने वाला न हो। प्रत्येक मानव, उस परमपिता परमात्मा की प्रतिभा में मानो सदैव निहित रहता है। आज मेरे पुत्रों! हमारा वेद का मंत्र, नाना प्रकार की विवेचना कर रहा है। किसी भी वेद मंत्र को जब हम विचारने के लिए तत्पर होते हैं और उस पर अनुसन्धान करने लगते हैं, तो एक वेद मंत्र में बेटा! हमें सर्वत्र ब्रह्माण्ड निहित होता हुआ दृष्टिपात आने लगता है। मानो एक ही शब्द है, उसकी बड़ी विस्तृत विवेचना है, उसका मानो एक बड़ा अनुपम रहस्यमयी उद्गीत गाया जाता है। जो प्रत्येक मानव परम्परागतो से बेटा! अनुसन्धान अथवा अन्वेषण करता रहता है। तो विचार आता रहता है कि हम परमपिता परमात्मा की महती अथवा उसकी अनन्तता के ऊपर सदैव विचार–विनिमय करते रहते हैं।

प्राण चिकित्सा

तो आओ मेरे पुत्रों! आज का हमारा वेद मंत्र बड़ी विचित्र विवेचना कर रहा है जिस विवेचना के ऊपर हमारे ऋषि, मुनि एकान्त स्थलियों पर विद्यमान हो करके और एक–एक वेद मंत्र के ऊपर अनुसन्धान अथवा अन्वेषण करते रहे हैं। तो आज मैं बेटा! तुम्हें विशेष विवेचना न देता हुआ, हमारा वेद का मंत्र क्या कह रहा है। वेद के एक–एक मंत्र में उस परमपिता परमात्मा के स्वरों और विज्ञान और मानो उसकी विद्या का प्रायः वर्णन आ रहा था। आज के हमारे वेद के पठन पाठन में भिन्न–भिन्न प्रकार की जो विद्याएं मानवीय जगत में रही हैं और मानव जिनके ऊपर अनुसन्धान करता रहा है, उन विद्याओं का प्रायः वर्णन आता रहता है। आज भी कुछ वर्णन आ रहा था। हमारे यहां नाना प्रकार की विद्याएं रही हैं जैसे प्राण के ऊपर हमारे यहाँ अनुसन्धान होता रहा है और प्राण को कहीं खेचरी मुद्रा में, कहीं देखो, वृत्तियों में रत और कहीं प्राण को बेटा! एक ही अंग में लाना यह सर्वत्र विद्याएं हमारे यहां परम्परागतों से रही है। और अनुसन्धान होता रहता है। हमारे यहां एक–एक आचार्य, ऋषिजन प्राण के ऊपर अनुसन्धान करने वाले रहे, जिससे बेटा! भिन्न–भिन्न प्रकार की विद्याओं का अन्वेषण और उनकी धाराएं मानव के समीप आती रही है। जैसे बेटा! हमारे यहां एक प्राण चिकित्सा बहुत पुरातनकाल में महात्मा दधीचि के काल में, जो वैद्यराज थे वह मानो देखो, प्रत्येक औषधियों के गुणों का वर्णन करते रहते थे और वह स्वप्न में भी उनके आंगन में बेटा! औषधियां अपने गुणों का वर्णन करती रही है।

तो विचार देखो, उस काल का मुझे स्मरण आ रहा है। मानव एक प्राण चिकित्सा कहलाती है। हमारे यहां भिन्न प्रकार की विद्याओं में, एक प्राण चिकित्सा का वर्णन आता रहा है। जो आज भी हमारे वेद के मंत्रों में कुछ वर्णन आ रहा था। विचारा जाता है कि प्राण चिकित्सा से नाना प्रकार का जो रुग्ण है वह मानो प्राण की क्रियाओं से शांत होता रहता है। मेरे पुत्रों! देखो, प्राण की ऐसी सत्ता रही है कि जहां प्राण एक अंग में लाने का प्रयास किया मानो वह एकांगी बन गया। यह बेटा! बहुत सा विचार, साहित्य का स्मरण आता रहता है।

अंगद की प्राण–क्रिया

मेरे पुत्रों! देखो, हमारे यहां, बाली पुत्र अंगद के यहां एक ऐसी विद्या थी जिससे मानो देखो, प्राण को किसी भी अंग में लाने का उनका प्रयास रहा और उस अंग में कितना गुरुत्व प्रायः उसमें कोई भी मानव उसको, भार के रूप में अपने में धारण नहीं कर सकता था। देखो, वह काल भी स्मरण है, जब देखो, राम और रावण दोनों के मध्य किसी प्रकार का विवाद न हो, किसी प्रकार की इनमें मानो मनस्तव न हो। तो उस समय गृहणं ब्रह्मे व्रताः मेरे पुत्रों! देखो, जब बाली पुत्र अंगद वहां (लंका में) पहुंचे तो उनकी जब राष्ट्रीय धृष्टता दृष्टिपात् की तो उन्होंने अपने पग में सारे प्राण को ला करके और उनकी सभा में पग स्थित कर दिया और ये कहा जो मेरे इस पग को एक स्थली से दूसरी स्थली पर कर सकेगा, तो मैं यहां से राम को ले करके अपने राष्ट्र में चला जाऊँगा और मानो देखो, माता सीता को यहीं त्याग दूंगा। तो कोई भी ऐसा बलिष्ठ नहीं था रावण के यहां, जो उस प्राण सत्ता का ह्रास कर सके।

महर्षि रेवक की साधना

मेरे पुत्रों! देखो, यह प्राण विद्या प्रायः मानवीय मस्तिष्कों में क्या, यह प्राण विद्या बेटा! यौगिक स्थलियों में भी रही है। मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जब गाड़ीवान् रेवक मुनि महाराज अपने आसन पर विद्यमान हो करके देखो, एक समय बारह वर्षों का उन्होंने अनुष्ठान किया और बारह वर्षों के अनुष्ठान में ये विचारा कि ये प्राण सता को अपने में लाना है प्राण सता के ऊपर जब विचार विनिमय होने लगा तो मानो बारह वर्षों का ऐसा अनुष्ठान किया कि वह जब क्षुधा में परिणत होते तो प्राण के द्वारा वायु मण्डल से उन्हीं पोषक तत्वों को अपने में ग्रहण करते रहते और साधना करते थे।

मानो देखो, कहीं संकल्पोमयी प्राणायाम किया जाता है, कहीं मानो रेचक, कुम्भक और पूरक किया जाता है तो उन्हें प्राण की सत्ता से बारह वर्ष तक गाड़ीवान् रेवक ने देखो, अन्तरिक्ष पाण्डु प्राणयाग करके उन्होंने अपनी जीवन सत्ता के परमाणुओं को अपने में ग्रहण किया। तो मेरे पुत्रों! देखो, इस प्रकार की हमारे यहां प्राण विद्या रही है और प्राण विद्या ही क्या, मुनिवरों। देखो, हमारे यहां प्राण भी एक ऐसा है जो मनस्तव को स्थिर कर सकता है। इसलिए हमारे ऋषि–मुनि भिन्न–भिन्न प्रकार के प्राणायाम किया करते थे। और उन प्राणायाम के द्वारा ब्रह्मवर्चोसी और ब्रह्मवर्चोसी से देखो, अपने में प्राण वृत्तियों में रत रहते थे। तो मेरे पुत्रों! देखो, जहां पुरुष ऐसे रहे वही मेरी माताएं भी इस प्रकार की रहीं। वह प्राण वृत्तियों में रत रह करके, प्राण–सत्ता औषध को पान करके देखो, अपने नाना प्रकार के रुग्णों को दूरी करती रही हैं।

प्राण के विभाग

तो आज मैं बेटा! देखो, प्राण चिकित्सा के संबंध में या प्राण के संबंध में विशेष विवेचना नहीं देने आया हूं। यह तो बड़ा विशाल एक वन है, इस वन में जाने के लिए आज मैं नहीं आया, केवल विचार विनिमय यह कि एक दूसरा एक दूसरे में ओत प्रोत होता हुआ दृष्टिपात आता है। हमारे इस मानव शरीर में बेटा! देखो, एक प्राण के दस भाग हैं सबसे प्रथम पांच भाग हैं जैसे प्राण, अपान, उदान, समान और व्यान मानो देखो, ये पाँच प्राण कहलाते हैं जो प्राणं ब्रहे मेरे पुत्रों! जिनके द्वारा यह मानव का जीवन प्रायः संचालित होता रहता है। दूसरे देखो, पांच उप–प्राण कहलाते हैं नाग, देवदत्त, धनंजय, कुरु और कृकल मेरे पुत्रों! देखो, देखो ये दस प्राण कहलाते हैं जो पांच प्राण, और पांच उप–प्राण है।

नाग प्राण

मेरे पुत्रों! देखो, हमारे ऋषि–मुनियों ने इन प्राणों के ऊपर बड़ा अनुसन्धान किया। एक हमारे यहां नाग प्राण कहलाता है, नाग प्राण को इतना महान, इतना विचित्र ऋषि मुनियों ने वर्णन किया। एक समय बेटा! देखो, हमने अपने पूज्यपाद गुरुदेव से यह प्रश्न किया था अपने विद्याकाल में, कि प्रभु! यह नाग प्राण क्या है? तो पूज्यपाद ने हमें यह वर्णन कराया कि यह जो नाग प्राण हैं ये बड़ा विशाल है मानो देखो, नाग की भांति रहता है। यह जो नाग प्राण है जब मानव को मानव की कामना पूर्ण न होती है, तो मानव की एक क्रोधाग्नि जागरूक हो जाती है और वह क्रोधाग्नि जब भयंकर जागरूक हो जाती है तो नाग प्राण का मुखारबिंदु ऊर्ध्वा बन जाता है और वह ऊर्ध्वा बन करके मानो देखो, जो शरीर में अमृत है वह अमृत का विष बनाता रहता है और वह अमृत

का विष बना करके वह विष हमारे शरीरों में व्याप्त हो जाता है। वह नाग प्राण अमृत का विष बना करके क्रोधाग्नि के द्वारा मानो देखो, विषं ब्रह्मे आचार्यो ने ऐसा अपना मन्तव्य दिया है।

पुत्रों! मेरे पूज्यपाद गुरुदेव का तो बड़ा अध्ययन रहा इस संबंध में। तो उन्होंने यह वर्णन कराया कि जो नाग प्राण है उसका क्रियाकलाप यह है कि जब शरीर में क्रोधाग्नि जागरूक होती है तो यह अमृत का विष बनाता है और विष शरीर में व्याप्त हो जाता है और वही विष किसी न किसी रुग्ण के कारण, विष शरीर से बाह्य रूप धारण करता है। तो मानो देखो, वह रुग्ण के रूप में आ जाता है। मानो देखो रुग्नित हो जाता है। तो इसलिए आचार्यों ने, साधकों ने सबसे प्रथम यह कहा कि यह जो प्राण है यह बड़ा महत्वदायक है। मानव को क्रोधाग्नि में प्रवेश नहीं करना चाहिए। क्रोधाग्नि मानव के पुण्य को समाप्त कर देती है और देखो, वह पापाचारों को जागरूक बना देती है इनके पापों की उपलब्धि करा देती है।

तो विचार–विनिमय क्या मेरे पुत्रों! हम पूज्यपाद गुरुओं के चरणों में, साधना में ओत–प्रोत रहे हैं। विद्यार्थी काल में भी रहे हैं। परंतु इन्होंने हमें यह उज्ज्वल शिक्षा प्रदान की। बेटा! बहुत समय हो गया, उन कालों को। आज मैं विशेष चर्चा न देता हुआ, केवल विचार–विनिमय यह कि आज हमारा विचार चल रहा था। हमारे वेद के पठन–पाठन में, प्राण की बड़ी महत्ता का वर्णन आ रहा था। और प्राण को मुनिवरों! देखो, किस–किस ने, किस–किस रूप में जाना। मेरे पुत्रों! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है जब महाराजा शिव के पुत्र गणेश जी और महाराजा हनुमान दोनों समुद्र के तट पर बेटा! देखो, प्राणायाम किया करते थे और वह अपनी सत्ता को जान करके, उनका अध्ययन करना, विज्ञान में रत रहना। मेरे प्यारे! देखो, विज्ञान में परमाणुओं को जान करके नाना प्रकार के यंत्रों का निर्माण करना। मेरे पुत्रों! देखो, महाराजा हनुमान और गणेश जी दोनों की सहायता से बेटा! एक यंत्र उन्होंने निर्माणीत किया था, समुद्र के तट पर विद्यमान हो करके। जिस यंत्र को पादुका वृता यंत्र कहते हैं। मेरे पुत्रों! देखो, जिस यंत्र के द्वारा वह अपने वायुयान को वायु में गमन करते रहते थे। तो आज बेटा! मैं तुम्हें विज्ञान में नहीं ले जा रहा हूं। वह सब प्राणसत्ता है और प्राण सता के उन परमाणुओं को जानने से मानव यंत्रों का निर्माण करता रहता है।

वैचारिक कर्तव्य

आओ मेरे पुत्रों! मैं आज तुम्हें बिखरे हुए पुष्पों को एकत्रित नहीं करना चाहता हूं। विचार केवल यह है कि क्या हम प्राण सता को जानने वाले बनें और प्राण से ही उस प्रतिभा का जन्म हो जाता है। तो आओ मेरे पुत्रों! मैं तुम्हें उसी क्षेत्र में ले जाना चाहता हूं, जिस क्षेत्र में बेटा! देखो हम एक विद्यालय की चर्चा कर रहे हैं और जिस विद्यालय में मानो देखो, भिन्न–भिन्न प्रकार के आध्यात्मिक विचार, भौतिक विचार, यंत्रों के विचार भिन्न–भिन्न रूपों में वह प्रायः वर्णित किए जा रहे थे। आज भी बेटा! मुझे वह काल पुनः से स्मरण आ रहा है, जहां मुनिवरो! देखो, ऋषिवर अपनी कितनी विचित्र उड़ाने उड़ते रहे हैं और विचारों की क्रियात्मक उड़ान उड़ना, यह मानव का कर्त्तव्य माना गया है। आओ मेरे प्यारे! देखो, आज मैं तुम्हें उन्हीं ऋषि वशिष्ठ मुनि महाराज के विद्यालय में ले जाना चाहता हूं जहां बेटा! देखो, आध्यात्मिक विचार और भौतिक विचारों की विवेचना हो रही है अथवा क्रियात्मकता में देखो, उसका वर्णन कराया जाता है। हमारे यहां आचार्य–जन देखो, वही होते हैं जो अपने जीवन में क्रियात्मक देखो, ब्रह्मचारियों को क्रिया में विद्या दे करके, उनका साकार रूप बनाना यह प्रायः उनका कर्तव्य रहा है।

तो आओ मेरे पुत्रों! देखो, उस सभा में, एक पंक्ति में ऋषि–मुनि विद्यमान हैं उनमें मेरे पुत्रों! देखो, सम्भव ब्रह्मे वृत्तां देवाः चाक्राणी गार्गी मेरे पुत्रों! देखो, वह अरुन्धती इत्यादि सब उस सभा में और मुनिवरो! देखो, महर्षि वशिष्ठ, विश्वामित्र, कागभुषुण्ड, महर्षि लोमश, महर्षि व्रेतकेतु, महर्षि भारद्वाज, महर्षि श्वेताश्वेतर वृत्तिका मेरे पुत्रों! देखो, सोमकेतु ऋषि इत्यादि और मुनिवरों! देखो, कहीं से भ्रमण करते हुए महात्मा दिग्ध और महर्षि अर्धभाग और मुनिवरों! देखो, महर्षि याज्ञवल्क्य मुनि महाराज एक पंक्ति में सब विद्यमान हैं। विचार–विनिमय प्रारम्भ होने वाला है, महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने अपनी विज्ञान की बड़ी विचित्र चर्चाएं कीं।

मेरे प्यारे! तुम्हें तो यह प्रतीत होगा ही, मैंने तुम्हें कई काल में वर्णन कराया है। मेरे पुत्रों! देखो, जब राम वन को चले जा रहे थे तो एक रात्रि उन्होंने शबरी के स्थान पर विश्राम किया और उस रात्रि समय, जब विश्राम किया तो देखो, महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज के यहां बेटा! देखो, ब्रह्मचारिणी शबरी ने एक सौ पच्चीस वर्ष तक वेदों का अध्ययन किया और उन्होंने बेटा! देखो, ज्ञान और विज्ञान की बहुत सी चर्चाएं उन्होंने प्रगट कराईं। मेरे पुत्रों! देखो, जब राम वन को जा रहे थे तो मुनिवरो! देखो, उन्हें जब रावण से संग्राम का उन्हें प्रतीत हुआ तो भारद्वाज मुनि महाराज ने देखो, अस्त्रों शस्त्रों का सर्वत्र कोश देखो वह अमृतं ब्रह्मे देखो, पनपेतु मुनि महाराज की कन्या शबरी ने सब राम को प्रदान कर दिया। मेरे पुत्रों! मैं विशेष चर्चा तो तुम्हें देने नहीं आया हूं, विचार यह देने के लिए आया हूं बेटा! कि वह शबरी भी मानो देखो, उस सभा में विद्यमान थी। क्योंकि महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज की परम शिष्या और उन्होंने बेटा! अस्त्रों शस्त्रों में, महर्षि भारद्वाज मुनि के यहां बेटा! देखो, उन्होंने एक यान का निर्माण किया और वह यान ऐसा था जो लोक–लोकांतरों की यात्रा करता था।

बाहत्तर लोकों में यान

मेरे पुत्रों! मुझे वह काल स्मरण आता रहता है, जिस यान में विद्यमान हो करके ब्रह्मचारिणी शबरी, ब्रह्मचारी सुकेता, ब्रह्मचारी कवन्धि ये तीनों उस यान में विद्यमान हुए और महर्षि भारद्वाज मुनि के यहां से उस यान से उड़ाने उड़ीं और वह उड़ान उड़ता हुआ, सबसे प्रथम पृथ्वी से उड़ान उड़ी तो सबसे प्रथम वह चंद्रमा में पहुंचा और चंद्रमा से जब उन्होंने उड़ान उड़ी तो वही यान चंद्रमा से उड़ान उड़ करके वह बुध में पहुंचा। बुध से उड़ान उड़ी तो शुक्र में चला गया और शुक्र से उड़ान उड़ी तो वही यान मेरे पुत्रों! देखो मंगल में पहुंचा और मंगल से उड़ान उड़ी तो मृचिका मंडल में चला गया और मृचिका मंडल से उड़ान उड़ी तो श्वेतकेतु मंडल में प्रवेश कर गया और श्वेतकेतु मण्डल से उड़ान उड़ीं तो व्रहेतकेतु मंडल में उन्होंने प्रवेश किया और व्रहेतकेतु मंडल से उड़ान उड़ी तो अरुन्धती मंडल में चला गया और अरुन्धती मंडल से उड़ान उड़ी तो वशिष्ठ मंडल में चला गया वशिष्ठ मंडल से उड़ान उड़ी तो रोहिणी केतु मंडल में चला गया, रोहिणी केतु मंडल में उड़ान उड़ी तो मृचिका मंडल में चला गया, मृचिका मंडल से उड़ान उड़ी तो रेणकेतु स्वाति मंडल में प्रवेश कर गया बेटा! मैं लोकों का वर्णन तो अब इतना नहीं कर पा सकता, विचार केवल यह कि बहत्तर लोकों का भ्रमण, उस यान ने किया और बहत्तर लोकों में भ्रमण करने के पश्चात् मुनिवरों! देखो, लगभग पांच वर्ष, पंद्रह माह, पंद्रह दिवस में वह यान भारद्वाज के आश्रम में पुनः प्रवेश कर गया। इतने समय तक बेटा! यान में रमण करता रहा। उन्होंने बेटा! बहुत सी प्राण विद्याएं ब्रह्मचारी जानते थे। मानो प्राणों अपनी खेचरी मुद्रा में, शीतली प्राणायाम भिन्न–भिन्न प्रकार के प्राणों की विद्या को जानते थे इससे अपनी पोषक, अपने शरीर को स्थिर करते रहते थे। तो परिणाम क्या मुनिवरों! देखो, आज मैं तुम्हें विज्ञान के वांगमय में तो ले जाना नहीं चाहता हूं क्योंकि वेद हमें क्या कहता है। वेद हमें भिन्न–भिन्न प्रकार की विद्याओं में ले जाता है। मानो देखो, जितना विज्ञान है वह सब वेद के वांगमय में प्रवेश और नृत करता रहता है।

ब्रह्मवेता–माताएँ

तो आओ मेरे पुत्रों! मैं विशेष चर्चा न देता हुआ, तुम्हें उस क्षेत्र से दूरी न ले जाऊँ, विचार यह चल रहा था मुनिवरो! क्या मुनिवरो! देखो, महर्षि वशिष्ठ मुनि के आश्रम में, नाना ब्रह्मचारी ब्रह्मचारीणियाँ मेरे पुत्रों! देखो, उनमें मेरी पुत्रियां ब्रह्मवेत्ता रही हैं मानो देखो, अरुन्धती ब्रह्मवेत्ता रही है, देखो, वशिष्ठ और अरुन्धती दोनों का विचार विनिमय होता रहा और देखो, माता मल्दालसा के जीवन की चर्चा तो प्रायः देखो, सब जानते हैं। 'सम्भूति ब्रह्मे' देखो, चाक्राणी वेदों का गान गाती रही और गान जब गाती तो मानो तन्मय हो करके सर्पराज भी श्रवण करते रहते थे। सिंहराज श्रवण करते रहते थे, इतना अहिंसा परमोधर्म, इतना अहिंसा में वेद का गान है कि मुनिवरों! देखो, प्रत्येक प्राणी उस गान के लिए लालायित रहता है।

वेदगान से अहिंसा

ऐसा मुझे स्मरण आता रहता है बेटा! जब प्राण विद्या के संबंध में, वेदों का गान गाने लगते हैं–जब जटा पाठ और माला पाठ में तो ऐसा ऋषिजनों ने कहा है कि रेंगने वाले प्राणी भी अपना रेंगना शांत कर देते हैं। मेरे प्यारे! देखो, सिंहराज भी अपनी हिंसा को त्याग करके अहिंसा में परिवर्तित हो जाता है। सर्पराज अपनी हिंसा को त्याग करके अहिंसा में तन्मय हो जाता है। बेटा! देखो, यह वाक् चाक्राणी गार्गी के सम्मुख भी आए। उन्होंने सभा में प्रश्न किया था। एक समय रेती मुनि महाराज ने कहा कि जब तुम भयंकर वनों में गान गाती हो, जटापाठ में, माला पाठ में गान गाया जाता है तो सर्पराज भी आसन पर रहते हैं। चरणों की वन्दना करते हैं इसके मूल में क्या है? तो चाक्राणी गार्गी ने यह कहा कि भगवन! वेद का मंत्र जब विशुद्धता से उच्चारण किया जाता है और उदात्त और अनुदात्त के साथ गाया जाता है, जटा पाठ और माला पाठ में, गान रूप में गाया जाता है तो मानो उससे हिंसा समाप्त हो जाती है। अहिंसा में आ जाता है और मानो कोई ऐसा अभागा प्राणी नहीं है, जो अपने पिता और माता की प्रशंसा को या उनके गुणों को श्रवण करके प्रसन्न नहीं होता। इसलिए जितने भी प्राणी मात्र हैं, वे इस परमपिता परमात्मा के गर्भ में हैं और उसके गुणों का जब वर्णन होने लगता है तो मानो देखो, सर्पराज भी मौन हो जाता है। मेरे पुत्रों! देखो, हिंसक अपनी हिंसा को त्याग देता है। अहिंसामय बन जाता है। मेरे पुत्रों! देखो, यह तो तरंगवाद है तरंगें स्पर्श होती रहती है। तरंगों में तरंगों का समन्वय होता रहता है। ये तरंगें इस प्रकार की अनूठी विद्या है जिसको बेटा! देखो, साधक जन जानते हैं।

आओ मेरे प्यारे! मैं अपने विचारों को बहुत दूरी ले जाना नहीं चाहता हूं। परंतु विचार–विनिमय यह हो रहा है कि वशिष्ठ मुनि महाराज के विद्यालय में बेटा! देखो, एक पंक्ति ब्रह्मवेत्ताओं की है एक ब्रह्मचारियों की है मानो देखो, जो क्रियात्मक अपना जीवन बनाने वाले, जो अपने में तत्पर रहते हैं वे साधक विद्यमान हैं। मेरे पुत्रों! देखो, अब सभा के वाक् प्रारम्भ करते हैं। उन्होंने बेटा! देखो, महर्षि लोमश मुनि महाराज से यह प्रार्थना की कि प्रभु! आप इन ब्रह्मचारियों को, अपने बाल्य को मानो देखो अपनी वृत्तियों में जो आगे आने वाला ये समाज है अपना कोई न कोई मन्तव्य इन्हें प्रगट कीजिए।

विचार से निर्माण

मेरे पुत्रों! देखो, महर्षि लोमश बड़े महान और सदैव जो प्रभु का चिंतन और ब्रह्म में सदैव रत रहते थे। और ब्रह्मचारिष्यामी मानो अपने कृत्यों में रहते थे। तो महर्षि लोमश मुनि ने अपना वाक् प्रारम्भ किया। उन्होंने कहा–हे ब्रह्मचारियों! तुम्हारा यह बड़ा सौभाग्य है जो मानो तुम आज ब्रह्मवेत्ताओं के मध्य में विद्यमान हो और देखो, यह ब्रह्मं ब्रहे यह अपने में मानो देखो, उड़ाने उड़ रहे हैं। भिन्न–भिन्न प्रकार की, उड़ान अपने विचारों की, अपने क्रियाकलापों की, अपने अनुभव से तुम्हें विचार दे रहे हैं। यह तुम्हारा कैसा सौभाग्य है। माताएं अपने विचारों को दे रही हैं और ब्रह्मचारीजन और ब्रह्मवर्चोसी सब अपना–अपना मन्तव्य तुम्हें प्रगट करा रहे हैं और तुम्हारा यह सौभाग्य है मानो हम भी कहीं से भ्रमण करते हुए चले आए। हमारा भी यह कर्तव्य है कि हम भी देखो, कुछ वाक् प्रगट करें। विचार–विनिमय क्या कि आध्यात्मिकवाद और भौतिक विज्ञान की प्रायः देखो विचारों में उड़ान उड़ी जाती है। हमारे यहां परम्परागतों से ही सृष्टि के प्रारम्भ से ले करके वर्तमान के काल तक नाना प्रकार के विचारों की उड़ाने उड़ीं जाती हैं। तुम्हें यह प्रतीत होना चाहिए कि विचार एक मानो सार्थक होता है। और विचार ही मानो देखो, निर्माण करता है क्योंकि स्थूल जगत के निर्माण की प्रणाली है आन्तरिक जगत के सूक्ष्म विचारों से उसकी उपलब्धि हुआ करती है। मानो देखो, जैसे आन्तरिक जगत में एक विचार आता है और उसी विचार को जब देखो, स्थूल रूप धारण कर लेता है तो वही विचार एक साकार रूप में बन जाता है।

विष्णु राष्ट्र

तो जैसे इससे पूर्व महर्षि भारद्वाज मुनि महाराज ने एक वेद मंत्र की विवेचना की और वह विवेचना बड़ी भव्य रूप में मानो प्रायः हमें दृष्टिपात हुई। ऐसे विचार जब मानव के समीप आते हैं तो उन्हीं विचारों को, साकार रूप में लाने से ही मानव का निर्माण और समाज का निर्माण हो जाता है। जैसे आज देखो, तुमने वैदिक साहित्य में अध्ययन किया है मानो देखो, ऋषि ने तुम्हें कई कालों में अध्ययन कराया–कि हे ब्रह्मचारियों! तुम विष्णु बन जाओ। मानो देखो, विष्णु बनने के लिए, आचार्यों ने कई समय संकेत दिया होगा। क्योंकि महर्षि वशिष्ठ मुनि महाराज विष्णु राष्ट्र को जानते हैं। ये विष्णु को अपने में धारण करते रहते हैं। हम तो इतना नहीं जानते, परंतु विचार आता रहता है कि हम सदैव मानो देखो, विष्णु रूप में अपने को ले जाते हैं।

हमारे यहां विष्णु की विवेचना करते हुए महर्षि लोमश मुनि ने कहा–कि विष्णु के बहुत से पर्यायवाची शब्द आते रहते हैं वैदिक साहित्य में, मानो देखो, विष्णु रूप को हमें दर्शाते रहते हैं जैसे हमारे यहां विष्णु मानो देखो, शरीर में आत्मा है। आत्मा का नामोकरण विष्णु कहा जाता है। तो विष्णु क्यों कहा जाता है? क्योंकि विष्णु ही अन्तरात्मा, जब इस शरीर में रहता है तो मनन और चिंतन करते हैं, अध्ययन करते हैं, प्रेरणा को प्राप्त करते रहते हैं। उसी प्रेरणा के स्रोत में प्रवेश करके मानो हम वेद के वांगमय में प्रवेश हो जाते हैं और वेद के विचारों में तन्मय हो जाते हैं। मानो देखो, उस वेद के विचारों में चार प्रकार की प्रतिभा कहलाती है। चार प्रकार की प्रतिभा क्या है? मानो सबसे प्रथम मानवीयता है और द्वितीय में मानो देखो, विचारम् ब्रह्मे मानो देखो, वृत्तियों में रत रहने वाला अपने में मानो देखो यह चक्र रूपों में रत रहता है। गदा के रूप में और मानो देखो, ध्वनि के रूप में। यह ध्वनि ही मुनिवरो! देखो, विष्णु का प्रतीक कहलाती है। ध्वनि की उपलब्धि कहां से होती है।

प्रभु के आश्रित निर्माण

मेरे प्यारे! देखो, आत्मा मैं जो ज्ञान और प्रयत्न है जब उन दोनों का समन्वय होता है तो एक ध्वनि का जन्म होता है। और वह जो ध्वनि है वह ध्वनि मानो देखो, बहुत सूक्ष्म रूपों में गति करती है, वही बाह्य जगत में आ करके स्थूल रूप बन जाता है। उसी ध्वनि का स्थूल रूप बन जाता है जिस ध्वनि के द्वारा राष्ट्र और समाज का कल्याण होता है। राष्ट्र और समाज उसी में मानो रत रहते हैं। महर्षि ने वर्णन किया कि सबसे प्रथम मानो देखो, राष्ट्रीयवाद में, राष्ट्रीयता में मानो देखो, अपने में तन्मय रहना है। सबसे प्रथम अपने का निर्माण करना है। जो संसार में अपना स्वतः निर्माण कर लेता है, प्रभु का आश्रित बन करके निर्माण कर लेता है, उसकी निर्माण प्रक्रिया देखो, चरित्र, मानवीयता सदाचार में परिणत हो जाती है। मेरे पुत्रों! वही सूक्ष्म विचार मानो स्थूल रूप में, वह उदगार रूपों में और वह तरंगों के रूप में मानो क्रियाकलापों के रूप में परिणत हो जाता है।

ब्रह्मास्त्रों का निर्माण

मेरे पुत्रों! उन्होंने कहा–हे ब्रह्मचारीजनों! इसी प्रकार व्रतं ब्रह्मे देखो, दूसरा जो विचार है वह मानो देखो, सूक्ष्म रूप में जन्म लेता है। और जन्म यह लेता है कि अपने में स्वाभिमान की जागरूकता बने। यह आत्मा की तरंगें हैं कि स्वाभिमानता में रहना। मेरे प्यारे! देखो, स्वाभिमान बन करके वह गदा को धारण करता है और गदा को जब धारण करता है वही गदा का स्वरूप मानो देखो, स्वाभिमान में परिवर्तित हो करके दूसरों की रक्षा के लिए तत्पर हो जाता है। वह इसका स्थूल रूप बन जाता है। सूक्ष्म विचारों से, सूक्ष्म मन्त्रणा से मेरे पुत्रों! वही साकार रूप बन करके गदा के रूप में आ जाता है। या यंत्रों के रूप में प्रवेश करने लगता है। मानो देखो, वही विचार मुनिवरों! एक विचार प्रारम्भ होता है उसका, जब मानव की इतनी ऊँची उड़ाने उड़ते हैं। मन उड़ाने उड़ता है प्राण रूपी अश्व पर सवार हो करके यह मन मानो देखो, पृथ्वी से सूर्य मण्डल, द्यौ इत्यादि देखो, इस ब्रह्माण्ड को मापने लगता है। जब यह मापने लगता है। तो इसी की मापता से जब अपने विचारों को एकत्रित करना प्रारम्भ करता है तो मेधावी का मानो देखो, दोनों के समूह से जन्म हो जाता है। और मेधावी में परमाणुओं का मानो देखो, परमाणु उद्बुद्ध हो जाते हैं और वही परमाणु उद्बुद्ध हो करके मेरे पुत्रों! देखो उन्हीं परमाणुओं का साकार रूप बना करके वही मानो कहीं अणुविद्या कहीं परमाणु विद्या कहीं मानो देखो, आग्नेय अस्त्र कहीं वरुणास्त्र कहीं वह ब्रह्मस्त्रों का निर्माणवेत्ता बन जाता है। कहीं लोक–लोकातरों में बेटा! प्रवेश हो जाता है।

मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि का बड़ा गम्भीर उद्गार है तो महर्षि लोमश मुनि ने कहा कि यह उदगार मानो देखो, ब्रह्मणे गदा के रूप में यंत्रों के रूप में, मानो गदा भी यंत्र को कहते हैं और वह यंत्र ही जब देखो, वैज्ञानिक–वांगमय में वह गदा के द्रुत रूप को धारण करके वह संसार की रक्षा में और एक महानता में प्रवेश कर जाता है। यह कहना चाहिए यदि उसका दुरुपयोग हो जाए तो दुरिता में भी प्रवेश कर जाता है। मेरे पुत्रों! देखो, ऋषि ने कहा–कि

भारद्वाज मुनि महाराज विद्यमान है। भारद्वाज मुनि के आश्रम में एक समय ब्रह्मचारी मानो देखो, सुकेता ने एक प्रश्न किया था कि भगवन! जिस विज्ञान को हमने जाना है इस विज्ञान का परिणाम क्या है?

विज्ञान का परिणाम

तो महर्षि लोमश मुनि ने कहा कि यह वाक् मानो शिकामकेतु उद्यालक ने भी यही उत्तर दिया था और महर्षि वैशम्पायन ने भी यही उत्तर दिया था कि विज्ञान का परिणाम देखो, मृत्यु और जीवन माने गए हैं। जब विज्ञान का दुरुपयोग हो जाता है, गदा का दुरुपयोग हो जाता है। वही दुरुपयोगिता देखो, मानव को, समाज को अग्नि के मुखारबिंदु में परिणत कर देती है। और वही विज्ञान मानो यदि उसका सदुपयोग हो जाए, उसमें मानवीयता आ जाए और उसमें सदुपयोगिता आध्यात्मिक और कर्त्तव्यवाद आ जाए तो वही विज्ञान मानव का जीवन बन करके उसके जीवन को साकार रूप में मानो देवत्व को प्राप्त करा देता है।

तो मानो देखो, विज्ञान की उपलब्धि कोई विषय वृत्तियों में नहीं रहती, तो मानो बेटा! महर्षि लोमश ने कहा—तृतीय जो मानो देखो, विचार है वह मानो देखो, चक्र को प्रतीक बनाता है। चक्र कैसे बनता है? कि मानव का विचार आता है कि हमारी जो आत्मीयता है उसमें से जो भावातीत हम बनते हैं और भावातीत बन करके ही मानो देखो, उसकी कृतियों में रत हो जाते हैं। वही कृतियों में रत हो करके मानो देखो, प्रत्येक अपना विचार आंतरिक विचार, आध्यात्मिक और भौतिक विचार हम संसार को मानो परिणत कराना चाहते हैं। संसार को विवरण देना चाहते हैं। परंतु वही हमारा चक्र बन करके, संसार में क्या, लोक—लोकांतरों में क्या, मानो देखो, जहां उसकी उड़ाने उड़ रही हैं उन विचारों को देना चाहते हैं। उस चक्र को मानव देना चाहता है तो वही चक्र का भाव मानव के आंतरिक जगत से उत्पन्न होता है। बाह्य जगत् में ही मानो देखो, वह संस्कृति के रूप में परिणत हो जाता है। वही मानो देखो, प्रतिष्ठा के रूप में प्रतिष्ठित हो जाता है। राजा चाहता कि मेरे चक्र को, मेरे आंतरिक चक्र को देखो, प्रत्येक राष्ट्र अपनाने वाला हो मानो देखो, इस प्रकार के जो विचार है, वह आत्मीयता है उसको प्रत्येक रूप में लाना चाहता है। इसी प्रकार मेरे पुत्रों! देखो, यह हमारा चक्र कहलाता है जिस संस्कृति के रूप में मानो विचारों के रूप में सदाचार और मानवीयता के रूप में परिणत होता रहता है। मानो जो विचार आता है जो ध्वनि आती है, मेरे पुत्रों! वह एक नाद होता है।

कैलाश—राष्ट्र

मुनिवरो! देखो, मुझे ऐसा स्मरण है जब हिमालय में महाराज शिव का राष्ट्र था। तो शिव मानो देखो, एक नाद करते थे। और नाद करके देखो, राजा के राष्ट्र में उसी नाद का पालन होता था। प्रजा मानो देखो, उसका पालन करने वाली, तो वह शिव राष्ट्र मानो कैलाश राष्ट्र कहलाता था। क्योंकि कैलाश एक प्रवाह वृत्ति है मानो देखो, एक वज्र है मानो देखो, वह एक प्रवृत्ति है वह इतना ऊर्ध्वा, इतने विचार ऊर्ध्वा में रहने वाले जब प्रजा मानो हिमालय पर रहती है तो हिमालय का स्वामित्व शिव करता है। और वही शिव मानो देखो, राष्ट्रीयता का प्रतीक है। वह कहता है कि मेरे राष्ट्र में ध्वनि होनी चाहिए और वह ध्वनि इस प्रकार की हो जिससे मानव का हृदय पवित्रता की वेदी पर रत हो जाए। मेरे पुत्रों! देखो, जब राजा अपने राष्ट्र को किसी भी काल में ऊँचा बनाना चाहता है, तो राजा के राष्ट्र में सबसे प्रथम ध्वनि होनी चाहिए।

शंख ध्वनि

मेरे प्यारे! देखो, ध्वनि क्या, ब्राह्मण होने चाहिए राजा के राष्ट्र में, और जब ब्राह्मण होते हैं राजा के राष्ट्र में तो वह राष्ट्र पवित्र कहलाता है। जितने बुद्धिजीवी प्राणी होते हैं मानो उतना ही राष्ट्र ऊँचा बनता है और जितने बुद्धि से हीन मानो प्रजा अपठित प्राणी होते हैं और उनको अनधिकार न दे करके अधिकार दिया जाता है राजा के राष्ट्र में क्रांति बलवती होती रहती है। तो विचार विनिमय क्या, आज हमारे विचारों का कि मानो देखो, यह ध्वनि है जिसे शंख ध्वनि कहते हैं। यह राजा के राष्ट्र को अधिकार है कि राजा के राष्ट्र में शंख ध्वनि होनी चाहिए। ध्वनि क्या है? जो पाण्डि—तव के द्वारा होती है बेटा! राजा के राष्ट्र में गान गाया जा रहा है। विद्यालयों में जाओ तो गान गाया जा रहा है गृह में मानो देखो, दिव्या से और मानो गान गा रहा है। प्रातःकालीन प्रत्येक राजा के राष्ट्र में, गृह—गृह में याग के मंत्रों की, याग की सुगन्धि से मानो देखो, राष्ट्र सुगन्धित हो रहा है। वह ध्वनि है माता अपने पुत्रों को प्रातःकालीन जागरुक, भानु उदय हो गया, जागरुक हो। जाओ प्रकाश आ गया, अंधकार समाप्त हो गया है और प्रकाश का धन्यवाद करके मानो देखो, देव पूजा में रत हो जाओ।

तो इस प्रकार का विचार मेरे पुत्रों! देखो, वह शखं ब्रह्मे वह ध्वनि कहलाती है। वह मेरे पुत्रों! देखो, जटा पाठ, धन पाठ, माला पाठ विसर्ग पाठ, उदात्त और अनुदात्त में जब वेदों का गान गाया जाता है, ध्वनियां होती रहती हैं तो मेरे पुत्रों! देखो, राजा का राष्ट्र पवित्र होता है। राजा अपने राष्ट्र में मानो अपने में गृह में, वह ध्वनि करता रहता है। राम का काल जब स्मरण आता है तो मेरे पुत्रों! देखो, मैं उन विचारों से दूरी नहीं जा सकता। महर्षि लोमश मुनि महाराज ने ये विचार दिए, महाराजा दिलीप के यहां देखो, राम के यहां महानता की ध्वनियां होती रहती थीं। गृह में एक, एक राष्ट्र में, यह घोषणा थी। राजा सगर के यहां अश्वमेघ याग हुआ और उस अश्वमेघ याग से पूर्व भी प्रत्येक गृह में याग होते हैं। प्रत्येक गृह—गृह में प्रातःकालीन, जिस गृह में जाओ, उस गृह में वेदों की ध्वनियां होती रहती।

मेरे पुत्रों! जब वह काल स्मरण आने लगता है तो हमारा हृदय गद्गद होने लगता है। मेरे प्यारे महानन्द जी जब मुझे आधुनिक काल की चर्चा प्रगट कराते हैं, तो आश्चर्य हो जाता है। पुरातन काल की वार्ताएं स्मरण आती हैं तो आश्चर्य हो जाता है। मेरे पुत्रों! देखो, महाराजा कपिल मुनि के यहां धनर्याग होता रहता था। जय—विजय दोनों ही ब्रह्मचारियों ने मानो पच्चीस हजार सेना राजा सगर की नष्ट कर दी विद्यालय के आंगन में, तो विचार मेरे पुत्रों! अपमान का अप्रति है।

तो विचार—विनिमय क्या मेरे पुत्रों! मैं विशेष चर्चा प्रगट न करता हुआ, केवल यह कि मुनिवरों! देखो, महर्षि लोमश मुनि महाराज ने कहा कि मेरा विचार है कि तुम विद्यालय से जब अवकाश पाओगे तो चारों प्रकार की विष्णु की धारा को स्वीकार करते हुए अपने राष्ट्र को और समाज को तुम्हें ऊँचा बनाना है। और मानो तुम्हें इस संसार को क्रियाशीलता में, वेद की ध्वनि तुम्हारे हृदयों में प्रवेश तो हो ही गयी है परंतु ये वायुमण्डल में भी छा जाए। प्रत्येक गृह में छा जाए यह हमारा मन्तव्य है। हे ब्रह्मचारियों! प्रायः ऐसा होता रहा है, ऐसा होना है।

तो मुनिवरों! देखो, महर्षि लोमश मुनि, ये विचार दे करके बेटा! मौन हो गए। तो विचार—विनिमय क्या मेरे पुत्रों! देखो, यह विचार दे रहा हूं उन्होंने कहा तुमने एक विचार दिया, तुम प्राण विद्या को ले करके अपने में मानो देखो, शंख ध्वनि को और विष्णु आत्मा को स्वीकार करके, तुमको ऊँचा बनना है। यहां विष्णु के बहुत से पर्यायवाची शब्द हैं, कहीं तो राष्ट्र को विष्णु कहते हैं, आत्मा को विष्णु कहते हैं, सूर्य का नाम विष्णु है मुनिवरों! माता का नाम विष्णु है और विष्णु नाम मुनिवरों! आदित्यं ब्रह्मे देखो विष्णु को भी कहा जाता है विचार यह..... शेष अनुपलब्ध **दिनांक—31—12—87** **बुढ़ाना, मुजफ्फरनगर**